पृशा

(वार्षिक साहित्यिक ई-पत्रिका)

(link : https://jtgdc.ac.in/uploads/Prisha-Prakashan.pdf)

प्रवेशांक

सितम्बर 2026

जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज

(इलाहाबाद विश्वविद्यालय का संघटक महाविद्यालय)

प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

प्रो. असीम कुमार मुखर्जी
संरक्षक

संपादक मण्डल

प्रो. आशिमा घोष
मुख्य सम्पादक

प्रो. रतन कुमारी वर्मा
सम्पादक

सह-सम्पादक

डॉ. नम्रता देब

डॉ. कस्तूरी भारद्वाज

डॉ. फातिमा नूरी

डॉ. प्रमा द्विवेदी

डॉ. सुकृति मिश्रा

राजभाषा एवं मातृभाषा समिति की गतिविधियाँ

इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित राजभाषा उत्सव,2022 में जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज के शिक्षक व विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रतिभाग करने वाली छात्राएं

राजभाषा उत्सव,2023 इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रो. जया कपूर से प्रमाण-पत्र प्राप्त करतीं महाविद्यालय की राजभाषा एवं मातृभाषा समिति की प्रभारी प्रो. रतन कुमारी वर्मा

महाविद्यालय के स्वर्ण जयंती वर्ष के अन्तर्गत समिति द्वारा आयोजित व्याख्यान एवं पुस्तक विमोचन समारोह नवंबर, 2025

महाविद्यालय के स्वर्ण जयंती समारोह के अन्तर्गत समिति द्वारा आयोजित विभिन्न अन्तर्महाविद्यालयीय प्रतियोगिताओं के विजेता
नवंबर, 2025

पृशा ईश्वर का अनुपम उपहार है। सृजन सृष्टि का नियम है। साहित्यकार साहित्य सृजन का आधार है। अथाह साहित्य सागर में विश्व की विभिन्न भाषाओं, बोलियों की उर्मिल तरंगों से हिलोरें मारती वार्षिक साहित्यिक ई-पत्रिका 'पृशा' साहित्य प्रेमियों को अपने वैविध्य, वैचित्र्य एवं वैदुष्य से रसानुभूति कराने में समर्थ हो, इसी अभिलाषा से जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज की राजभाषा एवं मातृभाषा समिति का यह प्रकल्प है। सहृदयों के सुझावों, मौलिक रचनाओं एवं अनुवाद कार्यों का स्वागत है।

ईमेल : prishajtgdc@gmail.com

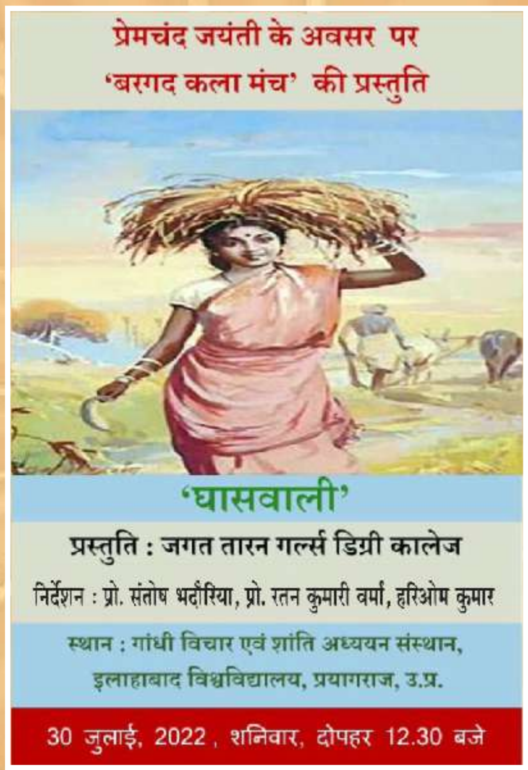

स्वतंत्रता की 75वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में 10 अगस्त, 2022 को महाविद्यालय में समिति द्वारा आयोजित व्याख्यान एवं कवि सम्मेलन

पृशा

संरक्षक
प्रो. असीम कुमार मुखर्जी

मुख्य सम्पादक
प्रो. आशिमा घोष

सम्पादक
प्रो. रतन कुमारी वर्मा

सह-सम्पादक
डॉ. नम्रता देब
डॉ. कस्तूरी भारद्वाज
डॉ. फातिमा नूरी
डॉ. प्रमा द्विवेदी
डॉ. सुकृति मिश्रा

जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज
(इलाहाबाद विश्वविद्यालय का संघटक महाविद्यालय)
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

" मातृभाषा हमारी भावनाओं की सच्ची अभिव्यक्ति है और यह ठीक वैसे ही है जैसे माँ का दूध बच्चे के पोषण के लिए होता है। "

- रवीन्द्रनाथ टैगोर

(गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपनी संस्था शांतिनिकेतन में शिक्षा का आधार मातृभाषा और मातृभूमि को ही बनाया, जिससे बच्चे भयमुक्त और आत्मनिर्भर बन सकें।)

अनुक्रमणिका

	संदेश		1-7
	संपादकीय		8-10
	कविता का भावानुवाद		
1	नवसंवत्सर (संस्कृत से अनूदित)	विपिन कुमार द्विवेदी	11
2	अपराह्न संगीत (उड़िया से अनूदित)	सुकोमल दाश	12
3	मत आना पोखरा (नैपाली से अनूदित)	डॉ. शैलेश शुक्ला	13
4	वजन (मराठी से अनूदित)	अविनाश खरे	15
5	एक इच्छा (गुजराती से अनूदित)	डॉ. गरिमा हरिनिवास तिवारी	16
6	अरपा पैरी के धार (छत्तीसगढ़ी से अनूदित)	डॉ. शुचिता त्रिपाठी	17
7	लूसी कॉलिन की कविताएँ (स्पेनिश से अनूदित)	डॉ. शुभा द्विवेदी	18
	कविता - हिन्दी		
1	आस आसमान की	मघुछंदा होता	21
2	हम किसान कै पूत अही	शिवेन्द्र कुमार मौर्य	22
3	शब्द शब्द अंगारे हैं	शैलेन्द्र मधुर	23
4	बेहया के फूल से हम	आकृति विज्ञा 'अर्पण'	24
5	विश्वास	डॉ. अवनीश कुमार मिश्र	25
6	मंजरी	डॉ. शिल्पी श्रीवास्तव	26
7	कहो कुसुम तुम कैसे फूले ?	डॉ. तेज प्रकाश चतुर्वेदी	28
8	मैं करेले का फूल, तू सूरजमुखी	डॉ. शुचिता त्रिपाठी	29
9	रेनकोट	मोहिनी हिंगोरानी	30
10	अगर मैं शादीशुदा न होती	शैली भोइल	31
11	अम्मी को याद करते हुए	डॉ. आसिम अंसारी	32
12	अहल्या का इंतजार	प्रो. नंदिनी साहू	33
13	खंडहरों और बारिश के बीच बचपन	प्रो. नंदिनी साहू	35
	नाटक का अनुवाद		
1	कीमत	प्रो. सुनीता राय	39
	साक्षात्कार		
1	साहित्य अकादमी पुरस्कृत साहित्यकार ममता कालिया से वार्ता	प्रो. रतन कुमारी वर्मा	42
	अनूदित कहानियाँ		
1	अभिशाप या वरदान? (बांग्ला से अनूदित)	श्रीमती अजंता डे	44
2	सौदामिनी (असमी से अनूदित)	मनमी बरठाकुर	50

3	एक और फालतू औरत (उर्दू से अनूदित)	रेनू बहल	53
4	चीकू और उसका किचन सेट (अंग्रेजी से अनूदित)	मिसना चानू	60
5	धूप-छाँव (उर्दू से अनूदित)	असरार गांधी	64
6	प्रतिशोध (उर्दू से अनूदित)	रख़्शंदा रूही मेहदी	74
7	शिकार (अंग्रेजी से अनूदित)	डॉ. शमेनाज़	81
	कहानी - हिन्दी		
1	चिड़िया जैसी माँ	सूर्यबाला	85
2	इवान की दुल्हन	डॉ. ऋतु शर्मा नन्नन पाँडे	89
3	हर औरत की कहानी	डॉ. निशी सिंह	93
4	संवेदना का संघर्ष	डॉ. शुभी मिश्रा	95
5	चाय पर चर्चा	अभिषेक दत्ता चौधरी	97
	आलेख		
1	'खबरदार'करती हैं कुर्रतुल-ऐन हैदर की कहानियां	डॉ. धनंजय चोपड़ा	100
2	पंजाबी संगीत में महिलाएँ	डॉ. गुरपिंदर कुमार	105
	पुस्तक समीक्षा		
1	वाल्मीकि रामायण की साहित्यिक एवं आध्यात्मिक समीक्षा	डा. शारदा कुमारी	108
2	वैदिक साहित्य का इतिहास	डा. निशा खन्ना	111
3	फाँस (संजीव)	शिवम् मद्धेशिया	113

- प्रकाशक - जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज, 32, हैमिल्टन रोड, जार्ज टाउन, प्रयागराज-211002, उत्तर प्रदेश, भारत।

- पत्रिका में प्रकाशित समस्त विचार लेखक एवं अनुवादक के हैं। इसके लिए वे स्वयं जिम्मेदार हैं। सम्पादक की कोई जिम्मेदारी नहीं है।
- © सर्वाधिकारी सुरक्षित ।

- ISSN No. : ....
- वर्ष – सितम्बर, 2026, अंक – प्रथम, वर्ष -1
- पृशा पत्रिका का प्रकाशन एवं वितरण पूर्णतया नि:शुल्क है।

- इस पत्रिका को कोई भी अंश लेखक अथवा अनुवादक की अनुमति से बिना प्रकाशित नहीं किया जा सकता है।

- वेबसाइट – www.jtgdc.ac.in (link : https://jtgdc.ac.in/uploads/Prisha-Prakashan.pdf)
- ई-मेल – prishajtgdc@gmail.com
- आवरण सज्जा – अवंतिका सिंह
- कार्यालय सहयोग – लाल बहादुर
- टाइपिंग एवं संयोजन – श्री ब्रह्म इण्टरप्राइजेज, प्रयागराज।

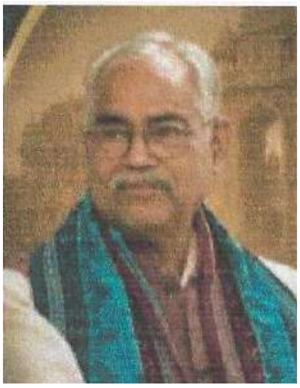

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज, प्रयागराज की राजभाषा एवं मातृभाषा समिति अपनी वार्षिक साहित्यिक ई-पत्रिका पृशा के प्रथम संस्करण का प्रकाशन कर रही है। वर्तमान समय में भारत के विभिन्न प्रांतों में प्रचलित भाषा एवं साहित्य के स्वरूप तथा तुलनात्मक स्थिति के बारे में विद्यार्थियों में जागरूकता आएगी , जिससे राष्ट्रीय भावना मजबूत होगी।

इसके साथ ही वैश्विक पटल पर प्रकाशित विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय साहित्य का अध्ययन करने से भारतीय विद्यार्थियों में वैश्विक जागरूकता आएगी और भारतीयता की असली पहचान संभव होगी। उच्च शिक्षा संस्थानों तथा महाविद्यालय स्तर पर ऐसा वातारण निर्मित करने से विद्यार्थियों में राष्ट्रीय अवबोध के साथ वैश्विक मूल्य का विकास होगा।

हिन्दी भाषा एवं साहित्य के उन्नत स्वरूप में राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय जगत में रचित विविध साहित्यिक कृतियों में अनुवाद द्वारा साहित्य की समृद्धि संभव होगी। महाविद्यालय द्वारा इस श्रृंखला में पहल करने से उच्च शिक्षा के मान में वृद्धि होगी।

मैं पृशा पत्रिका के प्रकाशन की सफलता हेतु हार्दिक शुभकामना प्रेषित करता हूँ।

प्रो. पी. के. साहू
पूर्व कुलपति
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

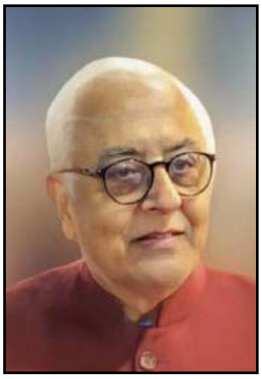

शुभ संदेश

मुझे जानकर यह अतिशय प्रसन्नता हुई कि 'पृशा' वार्षिक साहित्यिक ई-पत्रिका का प्रथम संस्करण वर्ष 2026 में प्रकाशित होने जा रहा है। साहित्य किसी समाज की संवेदना, संस्कार और सृजनशील चेतना का दर्पण होता है और 'पृशा' के रूप में यह दर्पण निश्चय ही विविध भारतीय भाषाओं एवं विश्व-साहित्य की बहुरंगी छवियों को हिंदी के आलोक में प्रतिबिंबित करेगा।

विशेष रूप से यह जानकर हर्ष हुआ कि पत्रिका में भारतीय एवं विदेशी भाषाओं से हिंदी में अनूदित रचनाओं को प्रमुखता दी जा रही है। अनुवाद वस्तुतः भाषाओं के बीच सेतु ही नहीं, हृदयों के बीच संवाद का सेतु भी है। कविता, कहानी, एकांकी, व्यंग्य, संस्मरण, यात्रा-वृत्तांत, लोककथा, लोकगीत, पुस्तक-समीक्षा एवं साक्षात्कार जैसी विविध साहित्यिक विधाओं का समावेश 'पृशा' को एक व्यापक और जीवंत साहित्यिक मंच प्रदान करेगा।

आज जब साहित्य को सीमाओं से मुक्त कर विश्व-संवाद का माध्यम बनाने की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक है, ऐसे समय में 'पृशा' का यह प्रयास अभिनंदनीय एवं अनुकरणीय है। मुझे विश्वास है कि यह पत्रिका नवीन सृजन को स्वर, अनुवाद को विस्तार और साहित्यिक संवेदना को वैश्विक क्षितिज प्रदान करेगी।

'पृशा' की यह प्रथम साहित्यिक यात्रा अक्षय ऊर्जा, सार्थक सृजन और निरंतर प्रगति से परिपूर्ण हो, यही मेरी हार्दिक मंगलकामना है। इसकी प्रत्येक रचना पाठकों के मन में विचार का दीप प्रज्वलित करे, संवेदना की सरिता प्रवाहित करे और साहित्य के आकाश में अपनी विशिष्ट पहचान अंकित करे।

'पृशा' के समस्त संपादकीय परिवार एवं रचनाकारों को हार्दिक बधाई और अनंत शुभकामनाएँ!

(प्रो.) असीम कुमार मुखर्जी
पूर्व विभागाध्यक्ष वाणिज्य विभाग
पूर्व अध्यक्ष, वाणिज्य संकाय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
अध्यक्ष-शासी निकाय, जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज

शुभकामना संदेश

प्रिय मित्रों,

जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज की परंपरा में साहित्य और संस्कृति की गहरी जड़ें हैं। इसी समृद्ध परंपरा को आगे बढ़ाते हुए राजभाषा समिति द्वारा प्रकाशित हो रही 'पृशा' पत्रिका के प्रकाशन के अवसर पर मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ स्वीकार करें। विभिन्न भारतीय भाषाओं की रचनाओं को हिन्दी अनुवाद सहित एक मंच पर प्रस्तुत करने का यह प्रयास भाषायी विविधता, साहित्यिक समन्वय और सांस्कृतिक एकता की भावना को सशक्त करने वाला है। निश्चय ही यह पत्रिका पाठकों को विविध भाषाओं के साहित्य से परिचित कराने के साथ-साथ हिन्दी के व्यापक स्वरूप और उसकी सेतु-भूमिका को भी रेखांकित करेगी।

'पृशा' का यह अंक रचनात्मकता, संवेदना और साहित्यिक संवाद का सुंदर माध्यम बने तथा राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में सार्थक योगदान दे–इसी कामना के साथ पत्रिका के सम्पादक-मण्डल एवं राजभाषा समिति को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ। आपके निर्देशन में पत्रिका उत्तरोत्तर प्रगति करती रहे। यह साहित्यिक यात्रा निरंतर समृद्ध होती रहे और 'पृशा' अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित करे, ऐसी मेरी मंगलकामना है।

ममता कालिया

शुभकामना संदेश

महाविद्यालय की राजभाषा समिति द्वारा वार्षिक साहित्यिक ई-पत्रिका 'पृशा' के नए संस्करण के प्रकाशन की सूचना प्राप्त होना अत्यंत आह्लादकारी और प्रसन्नतादायक है। महाविद्यालय की इस सराहनीय पहल से विद्यार्थियों और साहित्य प्रेमियों में एक नई ऊर्जा का संचार होगा।

यह जानकर विशेष प्रसन्नता हुई कि 'पृशा' में विभिन्न भारतीय एवं मातृभाषाओं के रचनाकारों को आमंत्रित कर उनकी बहुमूल्य कृतियों को हिंदी अनुवाद सहित प्रकाशित करने का अनूठा प्रयास किया जा रहा है। साहित्य की सभी विधाओं को समेटने का यह बहुभाषी दृष्टिकोण हिंदी भाषा को और अधिक समृद्ध बनाएगा।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'पृशा' अपने इस उत्कृष्ट उद्देश्य में पूर्णतः सफल होगी। यह पत्रिका हिंदी के मर्मज्ञ पाठकों, विद्यार्थियों तथा शोधार्थियों को एक समृद्ध और वैचारिक रूप से सशक्त मंच उपलब्ध कराएगी। ई-पत्रिका के सफल प्रकाशन एवं संपूर्ण संपादकीय टीम को मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

शुभकामनाओं सहित,

सूर्यबाला

UNIVERSITY OF ALLAHABAD
(A Central University)
(NAAC A+ Accredited)

Prof. Jaya Kapoor
Professor
Department of English &
Modern European Languages

31h August 2026

संदेश

मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हो रही है कि जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज की राजभाषा समिति अपनी वार्षिक साहित्यिक ई-पत्रिका पृशा प्रकाशित कर रही है। भारत युवाओं का देश हैं और भविष्य का विश्व तथा समाज बनाने के लिए हमें उनके विचारों और दृष्टिकोण को सुनने की आवश्यकता है। इस युग में जब हम समझने और व्यवसाय की सुगमता के लिए तेजी से एआई का सहारा ले रहे हैं, तो संचार और अभिव्यक्त के कौशल के महत्व को लेकर विश्व भर में एक बढ़ती हुई समझ विकसित हो रही है। यह आवश्यक है इन्हें बहुत कम उम्र से ही निखारा जाए। हमें ये कौशल स्कूल के दिनों से सिखाए गए थे, हालांकि आसानी से उपलब्ध अनगिनत एआई उपकरणों की सहायता लिए बिना स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करना एक चुनौती बनता गया है। यह ई-पत्रिका विद्यार्थियों की रचनात्मक अभिव्यक्ति के कौशल और सहभागिता के लिए एक महत्त्वपूर्ण मंच सिद्ध होगी। मुख्य संपादक के रूप में प्रो. रतन कुमारी वर्मा के नेतृत्व में पृशा की संपूर्ण संपादकीय टीम और सभी योगदानकर्ताओं को मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

(जया कपूर)

शुभकामना संदेश

इलाहाबाद विश्वविद्यालय का संघटक महाविद्यालय 'जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज' हिंदी की उन्नति के लिए संपूर्ण मनोयोग से कार्य कर रहा है, यह सुखद एवं आश्वस्तिदायक है। साथ ही साहित्य की विभिन्न विधाओं के रचना-संसार को समकालीन संदर्भों में संयोजित-विवेचित करने के लिए महाविद्यालय परिवार निरंतर कार्य कर रहा है, यह देखकर अत्यंत प्रसन्नता की अनुभूति होती है। इसी क्रम में 'पृशा' पत्रिका का प्रकाशन साहित्य के भविष्य के लिए एक सार्थक कदम है। हमारा विश्वास है कि 'पृशा' न सिर्फ कॉलेज के विद्यार्थियों, शिक्षकों की रचनाशीलता की संवाहक बनेगी, बल्कि परिसर के बाहर की साहित्यिक प्रतिभाओं और शोधसंधित्सुओं के लिए भी एक समुचित तथा सुलभ मंच बन सकेगी। वैसे भी, हम जिस शहर में हैं वह साहित्यिक पत्रकारिता के लिए विश्व-प्रसिद्ध रहा है। यहाँ की पत्रिकाओं, संस्थाओं और संपादकों ने हिंदी साहित्य की विकास-यात्रा में अतुलनीय योगदान दिया है। उम्मीद है कि 'पृशा' साहित्य-विकास-यात्रा को गति और दिशा देने में कामयाब होगी।

शुभकामनाएँ...

04/09/2026

(प्रो. कुमार वीरेन्द्र)

प्रो. अशिमा घोष
प्राचार्या

जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज
32 हैमिल्टन रोड, जार्ज टाउन,
प्रयागराज-211002

शुभकामना संदेश

हर्ष और प्रसन्नता का विषय है कि महाविद्यालय की राजभाषा एवं मातृभाषा समिति द्वारा हिंदी की ई-पत्रिका "पृशा" का प्रकाशन किया जा रहा है। यह पहल केवल एक साहित्यिक पत्रिका के प्रकाशन तक सीमित नहीं है, बल्कि विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के बीच संवाद स्थापित करने का एक सार्थक प्रयास है।

पृशा का विशेष आकर्षण विभिन्न क्षेत्रीय एवं विदेशी भाषाओं में मूल रूप से रचित कहानियों, कविताओं, नाटकों, लघु कथाओं तथा लोक-कथाओं के हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन। भारत की भाषायी विविधता उसकी सांस्कृतिक समृद्धि का आधार है। देश के विभिन्न अंचलों में रची गयी साहित्यिक कृतियों में वहां के लोक-जीवन, संवेदनाओं, परंपराओं, संघर्षों और जीवन दृष्टि की अनूठी झलक मिलती है। अनुवाद के माध्यम से यह समृद्ध साहित्य हिंदी के पाठकों तक पहुंचता है और भाषाई सीमाओं को पार करके हमें एक-दूसरे की संस्कृति और सामाजिक अनुभवों को समझने का अवसर प्रदान करता है।

मुझे विश्वास है कि "पृशा" अनुवाद-साहित्य की संस्कृति को प्रोत्साहित करने, विद्यार्थियों में भाषाओं के प्रति जिज्ञासा एवं सम्मान विकसित करने तथा हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता की गहरी समझ को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

इस महत्त्वपूर्ण साहित्यिक प्रयास के लिए मैं राजभाषा एवं मातृभाषा समिति तथा संपादकीय मंडल के सभी सदस्यों को हार्दिक बधाई देती हूँ। पत्रिका को समृद्ध करने वाले सभी अनुवादकों, रचनाकारों, शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अन्य योगदानकर्ताओं के प्रति भी मैं हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। उनके उत्साह और सहयोग ने "पृशा" को एक सार्थक साहित्यिक मंच प्रदान किया है।

आशा है कि "पृशा" निरंतर विकसित होती हुई विभिन्न भारतीय एवं विश्व भाषाओं के साहित्य को हिन्दी पाठकों से जोड़ने वाला एक सशक्त सेतु बनेगी।

"पृशा" के सफल प्रकाशन एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

प्राचार्या

संपादकीय

'पृशा' का प्रवेशांक : साहित्य की साझी संवेदना और भाषाई सेतु

प्रिय पाठकों,

अत्यंत हर्ष और गर्व के साथ हम **'पृशा'** पत्रिका का प्रवेशांक आपके हाथों में सौंप रहे हैं। 'पृशा' केवल विभिन्न साहित्यिक रचनाओं एवं विचारों का संकलन ही नहीं है, बल्कि यह साहित्य की धड़कन, संस्कृति की खुशबू और मानवीय विचारों की अभिव्यक्ति का एक ऐसा साझा मंच है जो सीमाओं को तोड़कर दिलों को जोड़ने का काम करता है।

'पृशा' के इस प्रवेशांक में हमने जीवन के हर रंग, हर संघर्ष और हर मानवीय भाव को समेटने का ईमानदार प्रयास किया है। यहाँ एक ओर पारिवारिक रिश्तों की गहराइयों, ममता और करुणा को बयां करती हुई अत्यंत भावुक रचनाएँ हैं, जैसे डॉ. आसिम अंसारी की कविता **"अम्मी को याद करते हुए"**, जो अभावों के बीच माँ की अदम्य इच्छाशक्ति और जिजीविषा को रेखांकित करती है। वरिष्ठ साहित्यकार सूर्यबाला जी की रचना **"चिड़िया जैसी माँ"** मातृत्व के अनकहे संकोच, स्नेह और एक अनाथ बच्ची के जीवन की मर्मस्पर्शी व करुण गाथा को हमारे सामने जीवंत करती हैं।

समाज के विभिन्न वर्गों के यथार्थ और उनके तीखे संघर्षों पर भी इस अंक में गहरा विमर्श किया गया है। संजीव के सुप्रसिद्ध उपन्यास **"फाँस"** की विस्तृत शोध-समीक्षा भारतीय कृषि संकट, किसानों की ऋणग्रस्तता और उनकी आत्महत्या के भयानक व कड़वे सच को उजागर करती है। वहीं शिवेन्द्र कुमार मौर्य की अवधी कविता **"हम किसान कै पूत अही"** मिट्टी तथा हाड़-तोड़ श्रम से जुड़े ग्रामीण जीवन के दर्द को अपनी माटी की बोली में आवाज़ देते हैं।

दहेज जैसी सामाजिक कुप्रथा और पितृसत्तात्मक सोच के खिलाफ खड़ी डॉ. शिल्पी श्रीवास्तव की कविता **"मंजरी"** तथा डॉ. निशी सिंह द्वारा प्रस्तुत **"हर औरत की कहानी"** समाज में महिलाओं के अधिकार, उनके मौन संघर्ष और स्वाभिमान की पुरज़ोर वकालत करती हैं। इसके अतिरिक्त, **"धूप-छाँव"** जैसी मर्मस्पर्शी कहानी जहाँ वृद्धाश्रम के अकेलेपन और रिश्तों के बदलते क्रूर समीकरणों को दर्शाती है, वहीं **"चीकू और उसका किचन सेट"** बच्चों के खिलौनों और भूमिकाओं में जेंडर-भेदभाव से परे जाकर नैतिक शिक्षा व आत्मनिर्भरता का संदेश देती है।

अकादमिक व बौद्धिक धरातल पर, **"वाल्मीकि रामायण की साहित्यिक एवं आध्यात्मिक समीक्षा"** और डॉ० निशा खन्ना द्वारा प्रस्तुत **"वैदिक साहित्य का इतिहास"** की पुस्तक समीक्षा हमारे गौरवशाली साहित्यिक अतीत से हमारा नाता जोड़ती हैं। इसके साथ ही, प्रख्यात कथाकार ममता कालिया जी से बातचीत इस अंक के बौद्धिक स्तर को और ऊँचा उठाती है।

डॉ. धनंजय चोपड़ा का आलेख ‘खबरदार करती हैं कुर्तुल-ऐन-हैबर की कहानियां ’ उर्दू साहित्य के विषय में जिज्ञासा जाग्रत करता है। ‘पंजाबी संगीत में महिलाएं ’ आलेख में लोक ध्वनि और प्रतिरोध की आवाज सुनाई देती है।

साहित्य समाज का दर्पण होता है, लेकिन अनुवाद उस दर्पण को वैश्विक फलक पर फैला देता है। 'पृशा' का यह प्रवेशांक विभिन्न भारतीय और विश्व की भाषाओं के बीच संवाद स्थापित करने के संकल्प का एक सुंदर उदाहरण है। **विश्व साहित्य को हिंदी में लाना आज समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इससे न केवल**

हमारी राजभाषा हिंदी का शब्द-भंडार और भाव-जगत समृद्ध होता है, बल्कि हिंदी के पाठकों को देश-विदेश की विविध संस्कृतियों और वहाँ के जनजीवन की धड़कनों को महसूस करने का अनूठा अवसर मिलता है।

इस अंक में हमने अनुवाद की इसी शक्ति को मुख्य आधार बनाया है। यहाँ देश के विभिन्न हिस्सों से -

- **गुजराती** के प्रसिद्ध कवि कलापी की रचना "**एक इच्छा**" (अनुवादक : डॉ. गरिमा हरिनिवास तिवारी)
- **ओड़िया** कविता "**अपराह्ण संगीत**" (अनुवादक : सुकोमल दाश)
- **मराठी** की हास्य-व्यंग्य कविता "**वजन**" (अनुवादक : अविनाश खरे)
- **पंजाबी** (गुरुमुखी) की अत्यंत गंभीर कहानी "**एक और फालतू औरत**" (अनुवादक : रेनू बहल)
- **उर्दू** कहानियों जैसे जी डी चंदन की "**प्रतिशोध**" (अनुवादक : डॉ० रख़्शंदा रूही मेहदी)
- असरार गाँधी की **'धूप-छांव'** का उत्कृष्ट हिंदी अनुवाद शामिल किया गया है।

इसी तरह, भारतीय लोक-परंपराओं में रचने-बसने वाले "**अरपा पैरी के धार**" का हिंदी काव्यात्मक रूपांतरण हमारी आंचलिक लोक-संस्कृति की खुशबू को बिखेरता है।

वैश्विक स्तर पर साहित्य की एकता को दर्शाते हुए इस अंक में -

- **पुर्तगाली** लेखिका लूसी कॉलिन की भावपूर्ण कविताएँ (अनुवादक : डॉ. शुभा द्विवेदी)
- उज़्बेकिस्तान के लेखक असरोर अल्लायारोव की कहानी "**शिकार**" (अनुवादक : डॉ. शमेनाज़)
- नीदरलैंड की जादुई लोककथा "**इवान की दुल्हन**" (लेखक : डॉ. ऋतु शर्मा नंदन पाँडे)
- **नेपाली** के आचार्य भरत का प्रसिद्ध गीत "**मत आना पोखरा**" (अनुवादक : डॉ. शैलेश शुक्ला)
- तथा **बांग्ला** के विश्वविख्यात रचनाकार सत्यजीत राय की रचनाओं का अनुवाद "**अभिशाप या वरदान?**" (अनुवादक : श्रीमती अजंता डे) को प्रस्तुत किया गया है।

ये अनुवाद सिद्ध करते हैं कि चाहे भाषाएँ कितनी भी भिन्न क्यों न हों, दुःख-सुख, आशा-निराशा और संघर्ष की इंसानी संवेदना पूरी दुनिया में एक ही है। यह भाषाई सेतु ही मानवता को एकता के सूत्र में बांधता है।

साहित्यिक विमर्श के इस पावन क्षण में, हमें हिंदी उच्च शिक्षण और शोध के क्षेत्र में व्याप्त चुनौतियों पर भी बेबाकी से बात करनी होगी। आज हमारी हिंदी शोध के क्षेत्र में कई स्तरों पर अपनी मौलिकता और संवेदनशीलता खो रही है। शोध अधिकांशतया केवल अकादमिक डिग्रियां हासिल करने और औपचारिक खानापूर्ति का माध्यम बनकर रह गया है।

शोधार्थियों में उस गहन अध्ययन, निष्ठा और अनुसंधान केंद्रित प्रवृत्तियों की कमी देखी जा रही है जो समाज के बुनियादी सच को सामने ला सके। अंतःविषयक (interdisciplinary) शोध और विभिन्न प्राच्य व आधुनिक भाषाओं से अनुवाद के लिए हमारी उच्च शिक्षण संस्थाओं में सुदृढ़ अनुवाद केंद्रों तथा आधुनिक संसाधनों का नितांत अभाव है। हिंदी को आधुनिक तकनीक, वैश्विक विमर्शों और वैज्ञानिक प्रगति के अनुकूल ढालने के प्रयास अभी भी बेहद सीमित हैं। **हमें एक ऐसी शोध-संस्कृति विकसित करनी होगी जो केवल बंद कमरों या फाइलों तक सीमित न रहकर समाज के हाशिए पर खड़े अंतिम व्यक्ति की आवाज़ बन सके।**

इन अकादमिक चुनौतियों का सामना करने में हमारे उच्च शिक्षण संस्थानों (विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों) की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है। केवल पाठ्यक्रमों को पूरा करवाना ही इन संस्थाओं का एकमात्र ध्येय नहीं होना चाहिए। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में स्तरीय पत्रिकाओं का नियमित प्रकाशन करना उनका एक अनिवार्य सामाजिक और सांस्कृतिक दायित्व है।

ऐसी पत्रिकाएँ न केवल शिक्षकों के गंभीर शोध पत्रों को स्थान देती हैं, बल्कि युवा विद्यार्थियों में छिपी सृजनशीलता को निखारने का पहला और सबसे विश्वसनीय मंच बनती हैं। ये पत्रिकाएँ लोक-भाषाओं, बोलियों और उपेक्षित विधाओं को मुख्यधारा के साहित्य से जोड़ने का कार्य करती हैं। पत्रिकाओं के माध्यम से ही उच्च शिक्षण संस्थान अकादमिक ज्ञान को आम समाज से जोड़ पाते हैं, जिससे एक स्वस्थ, जागरूक और संवेदनशील समाज का निर्माण होता है।

'पृशा' पत्रिका के इस गरिमामयी और सुरूचिपूर्ण प्रवेशांक को मूर्त रूप देने और इसे पाठकों के समक्ष लाने में हमें जिन महानुभावों का निरंतर संरक्षण, स्नेह और मार्गदर्शन प्राप्त हुआ है, हम उनके प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं -

1. **प्रो. संगीता श्रीवास्तव**, माननीय कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय — जिनके दूरदर्शी नेतृत्व, अकादमिक संरक्षण और सतत प्रेरणा ने इस महती कार्य को पूरा करने का संबल दिया।
2. **प्रो. पी. के. साहू**, पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय — जिनका समृद्ध अकादमिक अनुभव और स्नेहिल मार्गदर्शन सदैव हमारे लिए संबल रहा है।
3. **प्रो. असीम मुखर्जी**, माननीय अध्यक्ष - शासी निकाय, जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज — जिनके प्रशासनिक सहयोग, विश्वास और निरंतर प्रोत्साहन के बिना यह यात्रा संभव न थी।
4. **प्रो. जया कपूर**, इलाहाबाद विश्वविद्यालय — जिनकी सक्रिय साहित्यिक अभिरुचि और सहभागिता ने इस अंक के संपादन को उत्कृष्ट बनाने में अमूल्य योगदान दिया।
5. **ममता कालिया जी**, साहित्य अकादमी पुरस्कृत शीर्ष कथाकार — जिन्होंने न केवल अपनी अमूल्य रचनाएँ और विचार हमें प्रदान किए, बल्कि हमसे विस्तृत संवाद कर इस अंक को समृद्ध किया।
6. **सूर्य बाला जी**, प्रख्यात वरिष्ठ साहित्यकार — जिनकी संवेदना से सराबोर रचनाओं और आशीर्वाद ने इस पत्रिका को अद्वितीय साहित्यिक गरिमा प्रदान की।
7. **प्रो. कुमार वीरेन्द्र,** संयोजक, राजभाषा कार्यान्वयन समिति, सचिव, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, एल्युमनाई एसोसिएशन, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज – जिनका निरंतर सानिध्य एवं मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा।
8. **प्रो. आशिमा घोष**, आदरणीय प्राचार्या, जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज — जिन्होंने अपनी संस्थागत प्रतिबद्धता और ममतामयी मार्गदर्शन से हमें हर कदम पर राह दिखाई और इस सपने को साकार किया।

हम अपने सभी सम्मानित सम्पादक मण्डल के सदस्यों, लेखकों, अनुवादकों, शोधार्थियों और प्रिय पाठकों के प्रति हृदय से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि 'पृशा' का यह प्रवेशांक साहित्य के विस्तृत क्षितिज पर अपनी अमिट छाप छोड़ेगा और बौद्धिक जगत में एक नए विमर्श की शुरुआत करेगा।

आपकी प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा में,

प्रो. (डॉ.) रतन कुमारी वर्मा

संपादक

नवसंवत्सर

(काव्यात्मक अनुवाद)

विपिन कुमार द्विवेदी

लेखक एवं अनुवादक

संस्कृत लेखक, कवि, अध्यापक, पी.सी.पी. इण्टर कॉलेज, हुसैनगंज, लखनऊ

संस्कृत भाषा

नवसंवत्सर एषः प्राप्तः, धान्यैर्गेहसुपूत्यर्थम्।
यथातिथिस्सज्जनगृहमाप्तः, तनपुण्यविवद्ध्यर्थम्।।

जीवो यथा जगति सम्प्राप्तः, सञ्चितपुण्यविभोगार्थम्।
यथा चन्द्रः किरणसमूहैः, नभसि तमोनिहत्यर्थम् ।।

यथा वसन्तः खल्वारामम्, प्राप्तस्स्याद्बहुकुसुमार्थम्।
प्राचीदिशं यथा रविराप्तः, सकलभुवनजाग्रत्यर्थम् ।।

यथा स्वगेहं चिरादागतः, गृहस्वामी परिपुष्ट्यर्थम्।
ईशो यथा तपस्सुलग्नम्, भक्तं प्राप्तो मुक्त्यर्थम्।।

ज्ञानपिपासुं गुरुर्हि प्राप्तः, यथा जाड्यविनाशार्थम्।
यथा नायिका नायकगेहम्, प्रेमपिपासातुष्ट्यर्थम् ।।

यथौषधं भुवि रुग्णं प्राप्तम्, नूतनजीवनदानार्थम्।
पयःपिपासुसुतं खलु जननी, प्राप्ता स्यात्तत्पानार्थम् ।।

यथा घर्मबहुतप्ते वियदि, मेघः प्राप्तो वृष्ट्यर्थम्।
वन्ध्यां प्राप्तो यथा सुपुत्रः, लोककलङ्कविनाशार्थम् ।।

गहनतपोनिरतं सम्प्राप्तम्, यथा फलं भवभोगार्थम्।
नवसंवत्सर एषः प्राप्तः, धान्यैर्गेह सुपूत्यर्थम् ।।

हिन्दी भाषा

आया नव संवत्सर देखो, धान्यों से गृह पूरित करने।
जैसे अतिथि आया हो सद्गृह, नए पुण्यों की वृद्धि करने ।।

जैसे जीव जगत मे आया, संचित पुण्योपभोग करने।
जैसे चंद्र किरण संग नभ में, आया तम का नाश करने।।

जैसे वसंत उद्यान में आया, फूलों को बहु विकसित करने।
पूर्व दिशा मे रवि हो आया, सकल जगत को जाग्रत करने।।

बहुत काल के बाद हो आया, जैसे गृहस्थी घर पोषण करने।
भक्त समीप आया हो ईश्वर, तप में रत को मुक्ति देने ।।

ज्ञानेच्छु के निकट हो आया, जैसे गुरु अज्ञान को हरने।
नायिका नायक घर मे आयी, प्रेम प्यास की तुष्टि करने ।।

आयी औषध जग में जैसे, रोगी हित नव जीवन देने।
दूध के प्यासे पुत्र समीप, आयी हो माता दूध पिलाने ।।

धूप तपे अम्बर में जैसे, मेघ आया हो वृष्टि करने।
जैसे बाँझ को मिला सुपुत्र हो, लोक कलंक का नाश करने।।

गहन तप में लगे हुए को, भोगार्थ प्राप्त हो फल जैसे।
नया संवत्सर आया देखो, धान्यों से गृह पूरित करने।।

अपराह्न संगीत

(ओड़िया)

संगीता रथ
मूल रचनाकार
उड़ीसा, भारत

अनुवादक- **सुकोमल दाश**
सप्तर्षि अनुवाद सम्मान 2024 से सम्मानित
उड़ीसा, भारत

कालकलाची की स्याही लेकर
बिखरी होती थी कभी काली काकुल
प्राणप्रिये! अब
वहीं केवल तुहिन शुभ्रता ।

चंपाकली जैसी उंगलियो की
लाल नीला नगीना जड़ा
अंगुठियां सुस्त
संदुकची में सोगवार ।

मोती जैसी दंतपंक्ती में
अनकही सदा की खामोशी
नशीली कटाक्ष में अब
अनगिनत अनबुझी कहानी
राजहंस जैसी चाल में
अब थकापन अंतहीन ।

तब भी प्रिये, प्राणप्रिये!
तुम ही मेरे हरियाली असीमित
तुम ही मेरी उजड़ी कोणार्क
तुम्हारे लिये दिल में मेरे
कोमलगांधार की आलाप ।

अगर मन में हो प्रेम की भरमार ।
सुनाई देती नहीं उम्र का प्रलाप ।।

मत आना पोखरा

(मूल गीतकार : आचार्य भरत, पोखरा, नेपाल)

आचार्य भरत
नेपाल लखनऊ, भारत

अनुवादक **– डॉ. शैलेश शुक्ला**

नेपाली भाषा

बल्छीमा माछो महमा माखो फँसे झैं होला नि ।
कमल फूलमा भँवरो आई बसे झैं होला नि ।।
मोहनी लागे फुकाउने मन्त्र जानेको क्वै छ र ?
फर्केर जानै लाग्दैन मन नआउनू पोखरा ।।

महेन्द्र गुफा डेभिड-फल सेतीले भासेको ।
रचना आफ्नै देखेर दैव मुसुक्क हाँसेको ।।
धर्तीमा बसी स्वर्गको वर्णन को गर्न सक्छ र ?
फर्केर जानै लाग्दैन मन न आउनू पोखरा ।।

लोभ्याउने दृश्य पोख्रेली नानी अन्त काँ पाउँछन् ।
हिमाल ताल माछीको जाल् झैं मोहनी लाउँछन् ।।
चढेर हेर्दा चारदिशा सबै काहुँको धर'रा ।
फर्केर जानै लाग्दैन मन नआउनू पोखरा ।।

अकला देवी ती भद्रकाली र विन्दवासिनी ।
पवित्र सदा छन् सेती गंगा लाजले भासिनी ।।
मठ र मन्दिर मस्जिद गुम्बा नढोग्ने को छ र ?
फर्केर जानै लाग्दैन मन नआउनू पोखरा ।

ग्लाइडर्मा चढी आकाश चुम्दा जुनीमा एक फेरि ।
दुखीका पनि खुशीका आँशु झर्ने छन् बर्बरी ।।
गाइने गीत सुनेर पनि नरुने को छ र ?
फर्केर जानै लाग्दैन मन नआउनू पोखरा ।

थकाली खाना पोख्रेली गाना मोहनी फुक्दैन ।
हावा र पानी एकनास सधैं ओठ्मुख सुक्दैन ।।
सानो छ सहर होटेल लज छन् सफा सुग्घर ।
फर्केर जानै लाग्दैन मन नआउनू पोखरा ।।

ती लेखनाथ धर्मराज थापा र अलिमियाले ।
यै वन पाखा गोठालो गर्दै इतिहास लेखाए ।।
अर्चले देखि बाटुले चौर माटै हो उर्वर ।
फर्केर जानै लाग्दैन मन नआउनू पोखरा ।।

हिमाल पारी मुक्तिधाम जान इश्वरको दर्बार ।
पैदल गाडी हवाई सेवा के लिने बिचार ।।
विश्वका मान्छे भेटिन्छन् यहीँ लाभा र लस्कर ।
फर्केर जानै लाग्दैन मन नआउनू पोखरा ।

हिन्दी अनुवाद

बल्ली में मछली, शहद में मक्खी जैसे फँस जाए
कमल-कली पर आकर भँवरा जैसे बस जाए।
मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

महेंद्र गुफा, डेविस फॉल, सेती की निर्मल धारा,
अपनी ही रचना को देख, हँसता होगा विधान सारा।
धरती पर रहकर स्वर्ग का वर्णन कौन कर सकता?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

ग्लाइडर पर चढ़ नभ को छूना जीवन में इक बारी,
दुखियों की आँखों से भी तब झरती खुशी की क्यारी।
ऐसे गीत सुनाकर भी जो न रोए, वह कौन भला?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥
थकाली भोजन, पोखराली गीत, मोहकता बिखराते,
शीतल जल और मंद पवन होंठों पर न सूखने पाते।

मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

मन को लुभा लें, ऐसे नजारे और कहाँ मिल पाएँगे?
हिम-शिखर, झीलें, मछली-जाल-से जादू बिखराएँगे।
ऊँचाई से चारों दिशाओं का रूप नयन भर निहारा,
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥
मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

अकला देवी, भद्रकाली और बिन्दवासिनी माँ
सेती-गंगा पावन जल में रहती लाज समेटे यहाँ
मठ, मंदिर, मस्जिद, गुम्बा-नमन न किसका होता?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥
मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

छोटा-सा यह नगर, मगर सब होटल-लॉज सँवरा,
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥
मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

वे लेखनाथ, धर्मराज थापा और अलीमियाँ प्यारे,
इन वन-पर्वत, घाटी-मैदानों में इतिहास सँवारे।
अर्चले से लेकर बाटुलेचौर तक धरती उर्वर है,
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥
मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

हिमालय पार मुक्तिधाम में ईश्वर का दरबारा,
पैदल जाओ, गाड़ी से जाओ, या उड़कर नभ द्वारा।
दुनिया भर के लोग यहीं मिलते हैं दल-दल सारा,
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥
मोह मिटाने वाला कोई मंत्र कहाँ पर होता है?
लौटने का मन ही नहीं करता, मत आना पोखरा ॥

वजन

(मराठी से अनूदित)

लेखक एवं अनुवादक - **अविनाश खरे**
प्रख्यात साहित्यकार - मराठी एवं हिन्दी भाषा,
पुणे, महाराष्ट्र, भारत

मराठी भाषा

चाल चाल चाललो तरी वजन कमी काही ना होइना,
धाव धाव धावलो तरी वजन काही हलेना।
सकाळी उठल्यावर भूख लागली फार,
चहात बुडवून खाल्ली पारले जी फक्त चार।
मग मात्र मारल्या थोड्या दोरी वरच्या उड़या ,
मग मात्र चवीसाठी खाल्या खोबरया च्या वडया।
योगासन करायची झाली होती वेळ,
पटकन खाऊन घेतली हेल्थी डायट भेळ।
व्यायामाच्या घाईत सकाळ गेली टलून,
जेवणा साठी घेतले गरम वड़े तलून
मुखशुद्धि साठी खाल्या काजू बदाम
मनः शांति साठी केला थोड़ा वेळ आराम।
संध्याकाळ होताच जॉइन केले जीम
घाम आला म्हणून खाल्ले
मेंगो आईस्क्रीम।
वजन घटणया साठी चालत गेलो घरी,
डीनर साठी सुनने केला होता बेत श्रीखंड पूरी।
दुसऱ्या दिवशी बघितले
वजन किती घटले?
अरेच्या!काल पेक्षा पण आज वजन थोड़े वाढले
वजन काटा चुकला कसा?
मलाच कोड़ पडले ।

हिन्दी भाषा

दौड़ा -दौड़ा चला वजन कम न हुआ,
भागा -भागा भागता रहा वजन न हिला।
सुबह हुई भूख लगी ज्यादा,
चाय में डूबोकर खाई पारले जी बिस्किट सिर्फ़ चार।
डोरी लेकर मारता रहा थोड़ा कूदा,
फ़िर सिर्फ़ स्वाद के लिए
खाई कोपरे की बड़ी।
योगासन करने का वक्त हुआ था,
मैंने तुरंत खा ली हेल्थी डायट भेल।
कसरत करने की जल्दबाजी में सुबह तो हुई खत्म।
खाने के लिए गरम बड़े तले,
मुखवास में खाये काजू बादाम,
मनः शांति के लिए किया थोड़ी देर आराम।
शाम होते ही ज्वाइन किया जिम।
पसीना आया तो खाया
आम का आइसक्रीम,
वजन घटाने के लिए पैदल गया घर,
डिनर में बहू ने बनाया था
श्रीखंड पूरी।
दूसरे दिन देखा वजन कितना घटा?
अरे!कलसे भी आज वजन
थोड़ा बढ़ा,
वजन काटा ही गलत कैसे
हुआ ?मुझे ही शक हुआ।

एक इच्छा

(मूल रचना गुजराती भाषा के कवि कलापी की कविता का अनुवाद)

अनुवादक – **डॉ. गरिमा हरिनिवास तिवारी**

गुजराती

પડ્યા જખમ સૌ સહ્યા, સહીશ હું હજુયે બહુ,
ગણ્યા નવ કદી, ગણું નવ કદી, પડે છો હજુ;

અપાર પડશે અને જિગર હાય ! આળું થયું,
કઠિન ન બનો છતાં હૃદય એ જ ઈચ્છું, પ્રભુ !

પડી વીજળી તે પડી સુખથી છો, બળું છું સુખે,
અનન્ત ભભૂકા દહે, દહો, ગળું છું સુખે !

ન દાહ વસમો કદી, જિગર બૂમ ના પાડતું,
કઠિન બનજો નહીં હૃદય, એ જ ઈચ્છું પ્રભુ !

બહુય રસ છે મને, હૃદય છે હજુ તો, અહો !
અરે ! હૃદય જો ગયું, રસ ગયો પછી તો બધો;

ભલે મૃદુ રહી સહી જખમ છેક ચૂરો થતું,
કઠિન ન બનો કદી હૃદય એ જ ઈચ્છું, પ્રભુ

हिन्दी भावार्थ

सहे सभी घाव जीवन में, सहती रहूँ अभी,
गिने न थे, न गिनूँ कभी, पड़ते रहो सभी।

असीम पीड़ा पड़ी हृदय, जिगर थका-सा है,
कठोर मत होना प्रभु, यही विनय रहा है।

गिरी जो वज्र रेखा कहीं, तुम सुख में मग्न हो,
अनंत ज्वालाएं जलें, मैं जलूँ, यह भी योग हो।

न दाय असह्य कभी हुआ, न चीख उठी वेदना,
कठोर मत बनना हृदय, यही प्रभु प्रार्थना।

अभी हृदय है तो रस है, जीवन में कुछ शेष,
हृदय गया तो साथ में, रस जाएगा विशेष।

मृदु रह सहूँ, घाव चाहे चूर-चूर कर दें तन.
कठोर मत बनना हृदय यही प्रभु ,! अंतिम धन।

अरपा पैरी के धार

(छत्तीसगढ़ी राजकीय गीत, 2019)

डॉ. नरेन्द्र देव वर्मा
मूल गीतकार
छत्तीसगढ़, भारत

डॉ. शुचिता त्रिपाठी
हिन्दी रूपान्तरण
हिन्दी कवयित्री
पीएचडी, मानवशास्त्र ,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

छत्तीसगढ़ी

अरपा पैरी के धार, महानदी हे अपार
इन्द्रावती हा पखारे तोर पईया
महूं पांवे परौं तोर भुइंया
जय हो जय हो छत्तीसगढ़ मईया

सोहै बिंदिया सही घाटे डोंगरी पहाड़
चंदा सुरूज बनै तोरे नैना
सोनहा धान के अंग, लुगरा हरियर हे रंग
तोरे बोली हावै सुग्घर मैना
अंचरा तोरे डोलावै पुरवैया
महूं पांवे परौं तोर भुइंया
जय हो जय हो छत्तीसगढ़ मईया

रायगढ़ हावै सुग्घर तोरे मउरे मुकुट
सरगुजा अउ बिलासपुर हे बइंहा
रायपुर कनिहा सही घाते सुग्घर फभै
दुरुग बस्तर सोहै पैजनिया
नांदगांव नवा करधनिया
महूं पांवे परौं तोर भुइंया
जय हो जय हो छत्तीसगढ़ मईया

हिन्दी भावार्थ

अरपा, पैरी और महानदी
जैसी नदियाँ तुम्हारी महिमा को बढ़ाती हैं।
इन्द्रावती नदी तुम्हारे चरणों को पखारती है।
हे छत्तीसगढ़ माता, मैं तुम्हारी धरती को प्रणाम करता हूँ। तुम्हारी जय हो।।

डोंगरी पहाड़ तुम्हारी बिंदी जैसे शोभायमान हैं।
चाँद और सूरज तुम्हारी आँखों के समान हैं।
सुनहरे धान के तुम्हारे अंग हैं और हरियाली तुम्हारे वस्त्र हैं।
तुम्हारी भाषा मैना पक्षी की तरह मधुर है।
पूर्वी हवा तुम्हारे आँचल को लहराती है।
हे छत्तीसगढ़ मैया तुम्हारी जय हो।

रायगढ़ तुम्हारा मुकुट है, सरगुजा और बिलासपुर तुम्हारी भुजाएँ हैं।
रायपुर तुम्हारी कमर जैसा सुशोभित है।
दुर्ग और बस्तर तुम्हारी पायल हैं, तथा नांदगांव करधनी के समान है।
हे छत्तीसगढ़ माता, मैं तुम्हारी धरती को प्रणाम करता हूँ। तुम्हारी जय हो।।

लूसी कॉलिन की कविताएँ

(स्पैनिश भाषा से अनूदित)

लूसी कालिन
कुरीचीबा, पराना, ब्राजील
वरिष्ठ साहित्यकार, अनुवादक, शिक्षाविद्,
पराना साहित्य अकादमी की सदस्य हैं।
यू.एफ.पी.आर. आधुनिक विदेशी भाषा विभाग में प्रोफेसर रहीं।

अनुवाद - **डॉ. शुभा द्विवेदी**
एसोसिएट प्रोफेसर, ए.आर.एस.डी.कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, भारत

1. **कार्तीय विचारभूमि**

बिना किसी अपेक्षा के प्रेम करना
समय और स्थान की सीमाओं का उल्लंघन है
न मापा जा सकने वाला रोमांच है
किसी को देखे बिना उससे प्रेम करना
बिना किसी प्रत्यक्ष बोध के प्रेम
निस्सार एकालाप है।
उमस भरी उन्मत्तता में सिद्धहस्तता है
बिना किसी तुष्टि के प्रेम
बिना किसी आश्रय या परवाह के
नस-नस में भरा आत्मवाद है
अस्तित्व का खोखलापन है
बिना किसी मूर्त परिकल्पना के प्रेम करना
बिना आलिंगन के किसी को अपनाना
विरक्ति की चरम सीमा है
प्रेम का एक खाका भर है
बिना किसी अभिकल्पना के अमूर्त प्रेम
एक तरह का स्वांग है
विस्मित होकर, बचे-खुचे प्रेम की विवशता
प्रेम में बने रहना, तुम्हारे द्वारा न देखे जाने की स्थिति में भी
निरंतर उत्कंठित रहना,
अस्वाभाविक है
इस तरह का प्रेम
जो बिना अस्तित्व के भी हो।

2. प्राकृतिक इतिहास

पूरी सुबह
एक पुस्तक की समीक्षा करते हुए
अपनी पुर्तगाली भाषा में निमग्न और उसके सौंदर्य शास्त्र को समझते हुए
फ़ुरसत से कॉफ़ी और खिड़की से बाहर दृष्टि डालते हुए
बहुत दूर और सचमुच दूर सेरा डो मार* - वहीं है
पूरी तरह से ढका हुआ (इस पल में वह वहाँ सदा के लिए है)
उस पेड़ की ओर देखते हुए जिसका नाम कुछ लंबा है *सिबीपिरूना,*
जिसे मैं हमेशा भूल जाती हूँ जिसे सर्दियों ने उजाड़ दिया है
लेकिन *कैंजराना* अभी तक है, *कैनाफिस्टुला* समय की मार सहता है, परंतु
अरारीबा सबसे कठोर पाले और साधारण राख को भी झेलता है
और *लैवेंडर* खिलता है,
अभाव को सहते हुए,
सहन करते हुए ठंडे तापमान को,
क्योंकि पक्षियों की तरह
उनके पास अपने तरीक़े हैं, युक्तियाँ हैं,मिसाल के तौर पर
शीतनिद्रा या कि प्रवासी अधीरता, सब कुछ एक रणनीति की तरह है
मेरी किसी किताब की भाषा को दुरुस्त करने में डूबे रहना और
कभी-कभार खिड़की से बाहर देख लेना, उस समय की प्रतीक्षा में जब
मैं ख़ुद वापस आऊँगी।

***सेरा डो मार* ब्राज़ील के दक्षिण-पूर्वी तट, अटलांटिक महासागर, पर स्थित, 1,500 किलोमीटर लंबी, एक प्रमुख पर्वत श्रृंखला है।

3. सचमुच

कवि ढोंग करता है
और इसी दौरान
झींगुर चीखने लगते हैं
पुल धँस जाते हैं
अज़ेलिया कपकपाते हैं
ईडिपस खर्राटे भरते हैं

वैक्सीन की मियाद पूरी हो जाती है
शेयर बाज़ार गिरता है और
कवि दिखावा करता है
और इस दौरान
लहरें फूट पड़ती हैं
ब्रेड पर फफूंद लग जाती है
तारे तितर- बितर हो जाते हैं
मवेशियों का झुंड रास्ता भूल जाता है
रात चरमराती है
तेज हवाएँ घोसलों को तबाह कर देती हैं
और कवि दिखावा करता है और
उसी दौरान आवाजें फटती हैं
धमनियों में रक्त का प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है जहाज़ डूबते हैं
मीडियाएँ अपनी संतानों को मार देती हैं
उफनती नदियाँ कीचड़ में मिल जाती हैं
जूता काटता है
और कवि ढोंग करता है कि अप्रत्याशितता
से भरे हुए हाथ
उसके अपने नहीं हैं।

आस आसमान की

(हिन्दी कविता)

मघुछंदा होता
प्रख्यात हिन्दी, अंग्रेजी, उड़िया साहित्यकार
उड़ीसा, भारत

सगुफ्ताए चांद सी हूं , मुझे ऐसे ही रहने दो,
तपीसे_आफताब की ख्वाइश न रखो।
मेरी शर्द चांदनी को बहने दो,
मुझसे सुर्ख रोशनी की आस न रखो।

पंख दो ना दो,खुला आसमां दे दो
ऊंचाईयों की ख्वाइश नही है मुझे,
कुछ नहीं बस आजादी का अहसास दे दो-
मेरे सीने में चंद सांस दे दो।

मेरे कुछ इल्म के सुई और चरखे हैं,
और कुछ है हुनर के ताने बाने ,
सी लेने दो मेरे ख्वाबों के आंचल को,
बुन लेने दो मेरे सपनों के सामियाने।

इल्म नहीं रंजिशों का मुझे
मैं मुहब्बतों की तलबगार हूँ।
ये और बात है मेरे दोस्त,
कि मैं कुछ दिनों से बेरोजगार हूँ।

माना उड़ने को पंख चाहिए
पर अपना हो कोई उधार का नहीं।
धार चाहिए मुस्कानों में,
मगर कोई रंजिशें तलवार की नहीं।

इसलिए बहना नहीं सीखा
कि कुछ दूर आगे चल कर रुक जाऊं।
इसलिए लड़खड़ा के संभली नहीं हूँ,
कि किसी के आगे भी झुक जाऊं।

ऐलान कर दो शोहरत के जहान में,
एक नन्हीं चिड़िया उड़ने को तैयार है
बुलंदियों के आसमान में।

श्री भवन
नीयर बीजू पटनायक टाउन हाल
पोस्ट-बरगड़, जिला-बरगड़, उड़ीसा
पिन-768028)

हम किसान कै पूत अही

शिवेन्द्र कुमार मौर्य
सहायक अध्यापक, हिन्दी विभाग,
लंगट सिंह महाविद्यालय,
मुजफ्फरपुर, बिहार, भारत

देश भरे कै पेट पालि के आपन पेट खलाये
रुपिया दुइ रुपिया मा कइसेव खर्चा रहिन चलाये।
देही पै बइजानी डारे कमर के नीचे लुंगीघर
मा भीतर बइठ के रोवै चुप्पे चुप्पे तंगी।
मंहिगाई कै हाल न पूछा हे हो रामू काका
बचा खुचा कुछ रहा जवन ऊ बैंक डारिगै डाका।
निखरहरी खटिया पै देखा बिन नींदी कै सूत अही
हम किसान कै पूत अही ।।

जाड़ा पाला कबौ न देखा होत भिनउखै डटत रहे
खाय कलेवा पहुंच खेत मा दिन दुपहरिया खटत रहे।
गोंड़ गांड़ि के चउकस बढ़िया समथर एकदम खेत करी
केहू बोलावै ओहुक हिंया जा कार बूत कुछ सेत करी।
लह लह बढ़िया खेती लहकै हर अनाज भरपूर हुवै
लरिका मेहररुऔ हमरौ जा खेती बारी चूर हुवै।
तबौ न तंगी गई कबौ हम बइठ बना अवधूत अही
हम किसान कै पूत अही।।

बर्धा आपन बेंच लिहिन का खूंटा होइगा सूना
पता चला एहि बार जोताई भइया होइगै दूना।
देंही कै पौरुख गा जबसे भईंस गाय निमराय गयी
गाभिन एक ठू भईंस रही ही लेरुआ उहौ गिराय गयी।
उहौ समय एक रहा कबौ जब माछी भिनकै घर मा
दूध दहिउ सब टंगा रहै भरि भरि के सिकहर मा।
जांगर वांगर चला गवा सब अब तौ बिन बलबूत अही
हम किसान कै पूत अही।।

जब से हम ई खबर सुनिन कष्ट होइ गवा भारी
लेखपाल परधान कहेन भुञ होइ गै सरकारी।
केहसे आपन दुखरा रोई केहसे कही कहानी
न तौ कउनव करतब रहिगा न अब बची जवानी।
जीवन कै अब अंतिम क्षण बा घेरे अहै बुढ़ापा
लागि रहा है पकड़ि के खटिया तुरतै गिरब गड़ापा।
आज तौ सपने मा आवा एक कहै कि यम कै दूत अही
हम किसान कै पूत अही।।

शब्द शब्द अंगारे हैं

शैलेन्द्र मधुर
प्रख्यात पुरस्कृत साहित्यकार
प्रयागराज, भारत

सिंदूरी अक्षर अक्षर है
शब्द शब्द अंगारे हैं।
दुश्मन की छाती दहला दे,
ऐसे गीत हमारे हैं।

गौतम नानक के नज़ीर हम,
राम कृष्ण हैं और कबीर हम,
लेकिन भारत की सीमा पर
डटे हुए हैं महावीर हम
हमने गिनवाए हैं अक्सर
दिन में कितने तारे हैं
दुश्मन की छाती दहला दे ,
ऐसे गीत हमारे हैं।

इतनी जल्दी भूल गए तुम,
फिर लड़ने पे तूल गए तुम,
दुश्मन की बातों में आकर,
बहकावे में फूल गए तुम
गन्दी चाल चले तुम जब जब,
तब तब घुसकर मारे हैं
दुश्मन की छाती दहला दे
ऐसे गीत हमारे हैं।

पहले तुमने वार किया है
बेमतलब तकरार किया है
औरों के बहकावे में
अपना जीवन दुश्वार किया है
वैसे तो हर वक्त होंठ पर,
विश्व शांति के नारे हैं
दुश्मन की छाती दहला दे,
ऐसे गीत हमारे हैं।

बेहया के फूल से हम

– **आकृति विज्ञा 'अर्पण'**

वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

वक्त़ की ये आंधियां
कितना भी हमको उखाड़ें
जिस जगह पर जा गिरेंगे,
जा वहां पर फिर उगेंगे।
बेहया के फूल से हम......

ना तलब जल की हमें है
ना तलब थल की हमें है
थोड़े जल से थोड़े थल से,
अस्ति का चंदन करेंगे।
बेहया के फूल से हम......

मुक्त हो आसक्तियों से
बोध के तल पर खड़े हो
अनसुने नादों के हक़ में,
झूम कर वादन करेंगे।
बेहया के फूल से हम.....

मिथ्या जग के मानदण्डों
क्या कहें तुमसे बताओ ?
सत्य को जब साध लेना,
साथ में गायन करेंगे।
बेहया के फूल से हम...

जब लगे कि मन जगत में
जिजीविषा थमने लगी है
मरु का हम जोहार करके,
सुप्त हो मंथन करेंगे।
बेहया के फूल से हम....

या किसी जीवन के हक़ में
कीट या पीपल के हक़ में
हो पड़ेंगे मृत्तिका हम ,
भूमि को चंदन करेंगे।
बेहया के फूल से हम....।

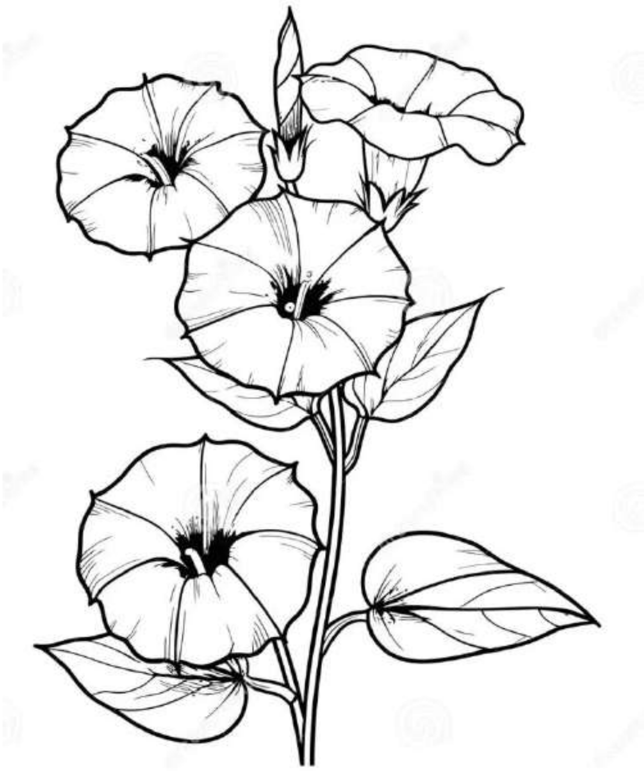

विश्वास

डॉ. अवनीश कुमार मिश्र
कवि व समीक्षक
सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
मुंशी सिंह महाविद्यालय, मोतिहारी
बिहार, भारत

अब जबकि रक्त- सम्बन्ध
अजनबी लगने लगे हैं
रिश्ते- नाते शक के दायरे में हैं
एक अविश्वास प्रस्ताव पारित है
इस समय के दोमुहेपन पर ।

परन्तु कैसे कोई रख देता है
अपना पूरा का पूरा गला
तेज धार उस्तरे पर
एक अजनबी नाई के सामने
वो भी पूरे विश्वास के साथ ।

भरोसे का सम्बन्ध
यह है कि दुनिया में
अब भी बचे हुए हैं अच्छे लोग
लाख बुराइयों के बावजूद
और अच्छे लोगों के होने से ही
चल रही है दुनिया
यह धरती और हम सब ।।

मंजरी

डॉ. शिल्पी श्रीवास्तव
हिन्दी कवयित्री
अध्यापिका, पतंजलि ऋषिकुलम्, प्रयागराज
उत्तर प्रदेश, भारत

मंजरी के मुख कमल पर लालिमा क्यों छा रही है?
क्या किसी की बात पर यूँ मंजरी शरमा रही है?
है सुहाना दिन कि बाबा बात पक्की कर चुके हैं,
मंजरी के सुहृदय में स्वप्न स्वप्निल भर चुके हैं;
आज हर एक बात पर यूँ मंजरी इतरा रही है,
क्या किसी की बात पर यूँ मंजरी शरमा रही है ?
आ गया वह दिन सुहाना जब वो दुल्हन बन रही थी,
माँ-पिता के आरज़ू की पूर्ण छवि उतर रही थी,
आ गई बारात अब तो मंजरी घबरा रही है,
अनगिनत भावों से व्याकुल कुल नहीं कह पा रही है;
फिर न जाने बात ऐसी हो गयी थी कुछ बड़ो में,
थे पिता कुछ अनमने से माँ पड़ी थी उलझनों में,
बात फैली आग जैसी हर तरफ़ छाया धुआँ था,
मंजरी को भी कहीं आभास सा होने लगा था;
सर की पगड़ी दे चरण में, थे खड़े बाबा शरण में,
आज उनकी आबरू सरेआम लुटती जा रही है;
पर कहीं भी लोच न था वर-पिता के भाषणों में,
कह रहे थे 'तुम भिखारी हो' खड़े क्यों सज्जनों में,
मैंने सोचा-तुम स्वयं ही दोगे सारी सम्पदाएँ,
होंगे लक्ष्मी माँ के दर्शन पूर्ण होंगी कामनाएँ;
पर तुम्हारे हाल पर तो मेरे साथी हँस रहे हैं,
मोल क्या दोगे 'रतन' का कानाफूसी कर रहे हैं,
मेरी भी इज्जत है उनमें मैं कहीं सिर क्यों झुकाऊँ?
माँग पूरी कर दो या बारात वापस लेके जाऊँ?
यह सुना जब मंजरी ने, ना स्वयं को रोक पाई,
रक्त आँखों में यूँ भर कर वह सभा में दौड़ आई,
दे पिता को खुद सहारा उसने धरती से उठाया,
उनकी बहती आबरू को अपने आँचल में सजाया,

फिर कहा सुन लो सभी मुझको नहीं कोई गिला है,
यह 'रतन' जो बुत बना है, वह तो पत्थर की शिला है,

आज यूँ उसके पिता, मेरे पिता से लड़ रहे हैं,
अपने जन्में पुत्र का सरेआम सौदा कर रहे हैं;

मैं कभी ऐसे पति को हाय! पा जाती यदि,
मेरा भी सौदा ये करता बच न पाती मैं कभी,

है यही व्यवसाय इनका आदमी को बेचते हैं,
ना मिले यदि मूल्य पूरा नया ग्राहक देखते हैं,

फिर पुनः अपने 'रतन' को मांजने के ही लिए,
राख की ख़ातिर वधू को अग्नि में ढकेलते हैं,

मैं कहूँगी यह सभी से मन में ठाने सब अभी,
न दहेज देंगे न लेंगे आज यह प्रण लें सभी;

आज अपनी बात से सबके हृदय पर छा रही है,
मंजरी वह पुष्प है जो बाग को महका रही है।

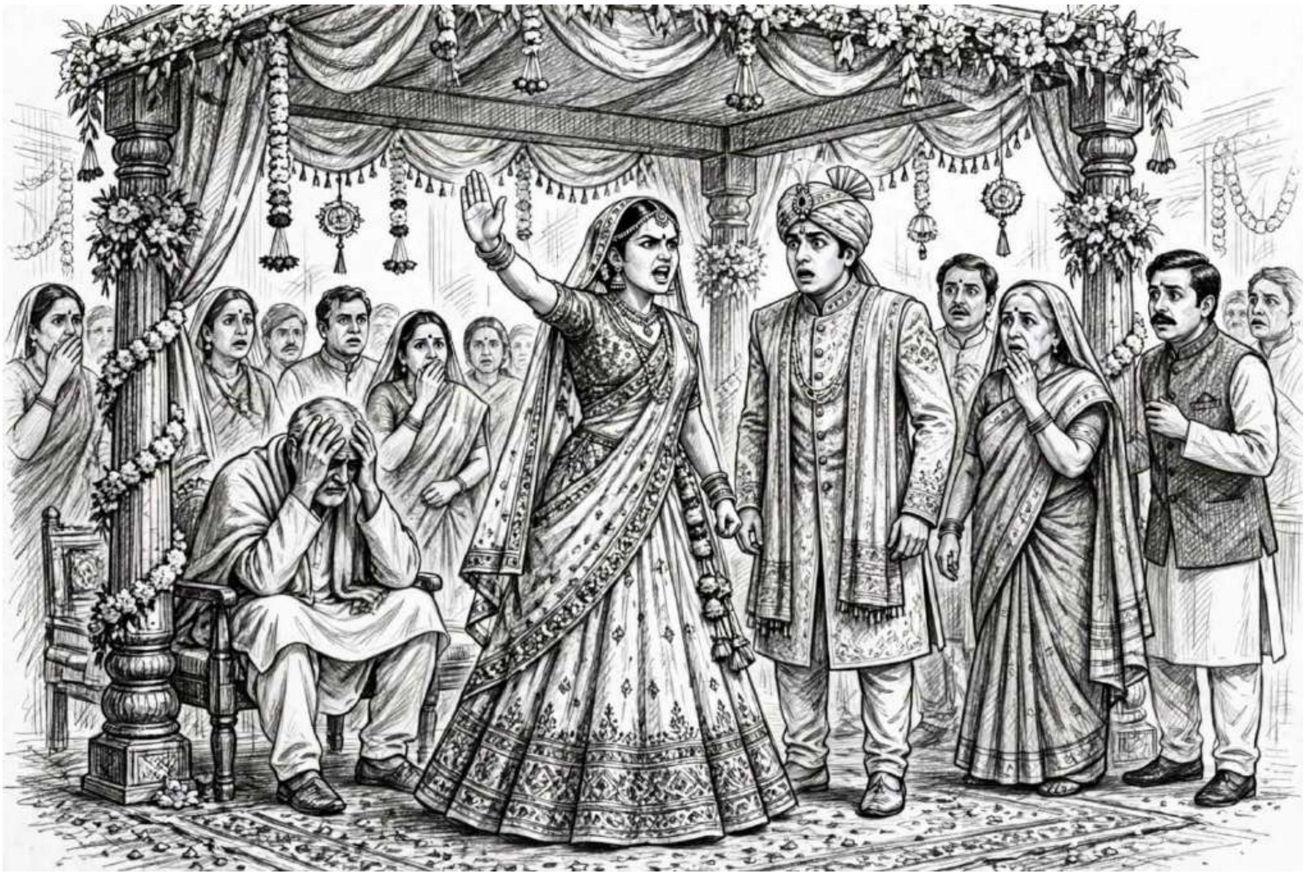

कहो कुसुम तुम कैसे फूले ?

डॉ. तेज प्रकाश चतुर्वेदी
सहायक आचार्य, संस्कृत, पालि, प्राकृत एवं प्राच्य भाषा विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
उत्तर प्रदेश, भारत

उलझे उलझे कंकड़ पत्थर, मरुभूमि के रेत प्रसर में
उबड़ खाबड़ सूखी धरती, पावस बिन रुखे बंजर में
रवि के प्रखर ताप से तापित, कांटों के झुरमुट को भूले ।
कहो कुसुम तुम कैसे फूले?

उष्ण वायु के गतिमय झोंके, तन मन को झुलसाते होंगे
अतिशीतल ये वायुतरंगे, रातों को थर्राते होंगे
कर इनसे संघर्ष परिष्कृत, सुरभित तन ले खुशी में फूले
कहो कुसुम तुम कैसे फूले?

एक अकेले सूनेपन में, कैसे न हृदय दहलता होगा
लक्ष्य प्राप्ति के एकल पथ में, कैसे न सूरज ढलता होगा
यात्रा में पर्वत चढ़ने की, कैसे कठिन सी बात कबूले ?
कहो कुसुम तुम कैसे फूले ?

चाह हुई जो दीर्घकाय की, जलाभाव तो अखरा होगा
स्वरक्षा की चुनौतियों का, अंबार भी बिखरा होगा
जीवन कठिन तथा दृढ़ मन हो, बने रहे तुम ऐसे भोले
कहो कुसुम तुम कैसे फूले?

मन को दृढ़ करना पड़ता है, गतिमय जीवन को जीने में
मुदित भी तो दिखना पड़ता है, घाव छुपाकर भी सीने में
संघर्षों के गहरे उदधि में, कल्पवृक्ष बन कैसे झूले?
कहो कुसुम तुम कैसे फूले ?

रेनकोट

- मोहिनी हिंगोरानी
दिल्ली, भारत
विभिन्न भाषाओं की ज्ञाता, अनुवादक,
संस्कृति मंत्रालय में निदेशक,
सिंधी अकादमी की पूर्व उपाध्यक्ष,
'संस्कृत' और 'संस्कृति दर्पण' पत्रिका की संपादक

तब …….
तूफ़ान गरजता था जब भी
दौड़ती थी इस पहाड़ से उस पहाड़ तक
ढूंढती बौछार से छिपने की ओट
जब भी कोई चुप हो जाता था
बीच बात के चलते चलते
हाथ कोई छोड़ देता था
बीच राह पर चलते चलते
उलझी रहती थी मन में अपने
"दोष मेरा ही था शायद ……."
"मेरा वह मतलब तो न था …."
"यह बात ऐसी तो नहीं थी ….."
"वह बात वैसी तो नहीं थी ……"
जाल वो मेरे ही मन का ही था।

अब ?
अब जा के समझ में आया है
हर कोई उलझा है अपने लफड़ों में
किसे फ़ुरसत है, पड़े वो मेरे पचड़ों में
अब समझ में आया है, कि …….
ऐनक नहीं पहनी थी उसने तब
मेरी मुस्कान नहीं लौटाई थी जब।
हर कोई बंधा है अपने मतलब से
और यह भी कि……..
सारी धरती को सूखा रखना
काम नहीं है मेरा
मैं तो बाहर निकलती हूँ बस
रेनकोट पहन कर अब
पैरों में पड़ रहे कंकरों को
ठोकर मारती चलती हूँ
अपनी ही रौशनी में खुलती
और खेलती हूँ अब।

अगर मैं शादीशुदा न होती

शैली भोइल
ब्राजील
भारत, ब्राजील और कोलंबिया में क्रमशः इंग्लिश, पुर्तगाली
और स्पैनिश में अपने कविता संग्रह का प्रकाशन।

सोचती हूँ मेरा जीवन कैसा होता
अगर मैं शादीशुदा न होती ।

एक छोटे से घर में रहती, जिसे संभालने में दिन व्यर्थ न हो जाते ।
या फिर इतने ही बड़े घर में, क्योंकि अवैतनिक श्रम मैं हरगिज़ न करती ।

इस जीवन से उस जीवन में मेरे पालतू शेरू और बिल्लू जरूर होते ।
हाँ, अपनी जान से प्यारे बेटे की कमी जरूर खलती!

पर मैं दुनिया की सबसे चहेती मौसी होती ।
घर के ढीले ढाले कपड़ों, कंघी बिन बिखरे बालों में शायद ही दिखती ।

कभी किसी रोमांटिक डेट पर भी जाती ।
मेरे सप्ताहांत मेरे अपने होते - चाहे फिर सारा दिन सोफे पर पड़ी रहती,

पिकनिक पर जाती, फिल्में देखती, या किताबे पढ़ती ।
शाम को कामरेड्स के साथ घर पर काव्य-गोष्ठी करती ।

रात को जीवन का मौन गीत गुनगुनाते कैमोमिला चाय की चुस्कियां भरती ।
सोने से पहले सोशल मीडिया पर तांक झाँक करती और

किसी इंस्टाग्राम प्रसिद्ध दम्पति की तस्वीर देख यह सोचती कि
मेरा जीवन कैसा होता अगर मैं शादीशुदा होती ।

नग्न कविता

यह कविता ठीक यहाँ
न होने या फिर
किसी अनहोनी के
अंदेशे में भटक गयी है।

ये खरोंचें यहाँ-वहाँ
बिन मरहम बने दाग,
न मिटी हुईं न पूर्णविरामित
ये अधूरी पंक्तियाँ,
तूफानी बारिश से मारे केंचुओं
की तरह, लावारिस डायरियों में
कुलबुला रही हैं।

यह कविता ठीक यहाँ
शायद उस कविता के बारे में है
जिसके पास ओढ़नी के लिए मात्र शब्द
और देह के लिए केवल संवेदनाएँ हैं
यह, एक नग्न कविता मेरी
एक नग्न कविता तुम्हारी।

अम्मी को याद करते हुए

डॉ. आसिम अंसारी
प्रवक्ता हिन्दी, सर्वोदय विद्यालय, जोरबाग, नई दिल्ली, भारत

अम्मी को याद करते हुए-1

उन दिनों
जब खाने को कुछ न होता घर में
टीन के छज्जे पे
धूप में सुखाई गई
भूसे के साथ
बकरियों की सानी में
मींजने के लिए
कनस्तर में रखी
पापड़-रोटियों को
पानी में भिंगों
थोड़ी-सी चीनी या गुड़
कच्चे आम की दो चार फलियों
और हमें जिलाए रखने की
अदम्य इच्छाशक्ति को घोल
ममत्व की आँच पर पका
परोसते हुए
कह उठना-
“ले बाबू मीठी रोटी हौ खा ले”
“ले बिट्टी मीठी रोटी रोटी हौ खा
ले”

भूख से लड़तीं
एक योद्धा की तरह
याद आती हैं आप !!!

अम्मी को याद करते हुए-2

टाट की दीवारों
और टीन के छज्जे वाले
छोटे से घर में...

बारिश के दिनों में
जब पिंडलियों को डुबो देने लायक
पानी भर जाता...

हम नन्हें भाई-बहनों को
नहला-धुला
चारपाई पर बिठा
प्लेट लेकर
सारे अभावों और दरिद्रता को
उलीच बाहर कर देने की
आपकी वो जुगत...

अदम्य जिजीविषा से भरीं
मसीहा की तरह
याद आती हैं आप !!!

अम्मी को याद करते हुए-3

अप्रैल से जून तक की
दोपहरियों में
शरीर का रक्त तक सोख लेने वाले
भट्ठी की तरह धधकते
बिना दीवारों
और टीन के छज्जे वाले घर में
गुनगुना हो चुके
पानी को पीते जाने और
गलइचा पेचने या
काती खोलने के कामों में
जब लगीं होती आप...

पसीने की धाराएँ भी
एक वक़्त के बाद
निकलना बन्द हो जातीं
और अंततः सूख जातीं...
तब त्वचा पर
कुरकुरे नमक की परत वाली
आपकी वो छवि
यकीन दिलाती है कि
दुनियाभर के मेहनतकशों के लिए
जीवन का स्वाद
एक ही होता है !

मुझे...
दुनियाभर के मेहनतकशों के
जीवंत-प्रतिरूप की तरह
याद आती हैं !!!

शब्दार्थ -
गलइचा - गलीचा या कालीन
पेचने - कालीन के किनारों की बाइंडिंग करना
काती - कालीन की बुनाई में इस्तेमाल होने वाला धागा।

प्रो. नंदिनी साहू
कुलपति, हिंदी विश्वविद्यालय पश्चिम बंगाल, भारत
पश्चिम बंगाल, भारत

अनुवादक - **दिनेश कुमार माली**

अहल्या का इंतजार

"अहल्या! आप यहाँ हज़ारों वर्षों तक रहोगी,
भूखी-प्यासी, हवा खाकर, राख पर सोकर
अनमनी
अदृश्य रूप में इस आश्रम में।
और जब राम, इस भयानक जंगल में आएंगे,
तब आप शुद्ध हो जाओगी।
उन्हें अतिथि के रूप में प्राप्त कर
आप लोभ-मोह-माया से मुक्त हो जाओगी,
निर्लज्ज औरत ! तब आप अपना रूप धारण करोगी
मेरी उपस्थिति में, खुशीपूर्वक।"

पति 'ऋषि गौतम' की आवाज गूंजी
सुंदर पत्नी अहल्या के कानों में, जिसने अभी-अभी
पहली बार संभोग सुख पाया था, गौतम के भेस में
इंद्र के द्वारा उसके नारीत्व की पूर्ति,
'अहल्या' का अर्थ 'जो निखूण है'
और एक पल में सुंदर औरत एक पत्थर में हो गई तब्दील
फिर पितृसत्ता की आड़ में
शुरू हुआ दोषारोपण का सामाजिक खेल।

मैं अहल्या हूँ।
क्या मैं वास्तव में सदियों से इंतजार कर रही हूँ
एक स्पर्श का, मेरे उद्धार के लिए, और मेरी मुक्ति के लिए?
मेरे भी इंद्रियाएं हैं, पांच इंद्रियां हैं
इतना मजबूत है कि मैं गुमनामी में नहीं रह सकती हूँ,
मैं पत्थर की तरह निष्क्रिय हूँ.
मेरा ऊपरी मन विद्रोह करता है और भीतरी मन इंतजार
मैं स्थित-प्रज्ञ साधक हूँ, मेरे भी इंद्रियां हैं
मेरे प्रारब्ध में
साधना लिखी है युगों-युगों तक।

हे राम, आखिरकार आप उदार हैं
मुझसे मिलने के लिए, एक सुदीर्घ इंतजार के बाद।
लेकिन मेरी तपस्या
अभी तक पूरी नहीं हुई है। मैं तैयार नहीं हूँ,
ओह राम, उस अपराध से मुक्त होने के लिए
जो मैंने किया ही नहीं है।
मैं निष्कलंक, आत्मविश्वासी और उजली हूँ ।
आप मुझे क्या पवित्रता प्रदान करोगे?
मेरे प्रदूषण पर बहस की क्या आवश्यकता है?

हे राम,
यदि आप वास्तव में मुझे छूना चाहते है,
मुझे तात्विक महिला के रूप में छूओ।
छूओ मुझे जैसे आकाश गंगाएं टकराती हैं,
मुझे अपनी अनबिकी निष्पक्ष भावनाओं से छूओ।
मुझे स्पर्श करो जैसे नीलांबर सितारों को छूता है.
मुझे बनाकर अपने अधरों की बाँसुरी
मुझे दें अपना संगीतमय स्पर्श।
मैं आपको आश्वासन देती हूँ,
आप ब्रह्मांड के रहस्यों को खोज पाएंगे मेरे स्पर्श से
क्योंकि मैं हूँ मौलिक परम प्रेम-पुजारिन।

आपका स्पर्श आपकी रचनात्मक भाषा होनी चाहिए,
आपका व्यवहार, आपका मौलिक दृष्टिकोण
मेरे स्पर्श से आपकी त्वचा पर सितारे नृत्य करेंगे।
आपके स्पर्श से मेरा भय दूर होना चाहिए
सारे गौतम और इन्दरों का
प्यार, मेरी चिंता कम करें और
अपनी करुणा से मेरी इंद्रियों को भरें।
मेरे संज्ञान को स्पर्श करे और आप पत्थर से मुझे मुक्त कर सकते हैं।
मुझे अपनी देवी बनाओ.
आप जानते हैं, जहाँ स्पर्श है, वहाँ चमत्कार है
वहाँ प्रकाश और अंधेरे का आदान-प्रदान है।
ऋषि गौतम के श्राप को मिटाया जा सकता है
आपके स्पर्श से, इस दावे के साथ।

मेरा उद्धार केवल आपके स्पर्श से नहीं होगा
बल्कि बिना हाशिए में रखकर
शून्य सहनशीलता से ।
मुझे समाज से एक जवाब की जरूरत है
और आपसे, ओह सर्वज्ञानी पुरुष
मेरे पितृसत्तात्मक निर्वासन हेतु ।
पिता ने मुझे कठपुतली समझकर अपनी इच्छा से पति को परोस दिया।
पति मेरे नारीत्व की पूर्ति नहीं कर सका।
इंद्र ने अपनी इच्छा पूरी की, न कि मेरी।
अयोग्य, नपुंसक पति ने मुझे अभिशाप दिया

किस अधिकार के साथ,
एक पल में पत्थर बनने के लिए
जब मैं एक औरत के रूप में संतुष्ट थी!
और अब मुझे एक और आदमी की जरूरत क्यों है, आपकी , ओह राम,
मुझे छूने के लिए, मेरे अप्रतिबद्ध पाप से शुद्ध करने के लिए?

स्पर्श-संवेदनशील, स्पर्श-वंचित,
स्पर्श-प्रतीक्षित,
मैं अनंत काल तक इंतजार करना चाहती हूँ।
मैं आपके छूने के प्रस्ताव को अस्वीकार करती हूँ
सती-असती के जाल
से मुक्त करने की शर्तों पर।

मैं खुद अपनी मालिक हूँ, अपनी मर्जी की मालिक, मैं अपनी महिला हूँ।
मुझे अपनी शर्तों पर नैतिकता मानने दो-
यही मेरा अंतिम निर्णय है।

खंडहरों और बारिश के बीच बचपन

मैं बड़ी हुई उदयगिरि में, वह मेरा स्वप्न-नगर,
भारत के ओडिशा प्रांत का एक छोटा-सा शहर
चारों ओर भरे हुए निर्वासित खंडहर-ही-खंडहर ।

वहाँ के प्यार ने हमें दिया नया जीवन
किशोरावस्था में सिखाया मूल कानून
'केवल प्रेम ही दे सकता है हमें सम्मान' ।

उदयगिरी में होती सुप्रभात
" आकाश वाणी के न्यूज-रीडर गौरंगा चरण रथ द्वारा... आपका स्वागत....।"
हमारे कानों में गूँजती उसकी बात ।

एक मोटे व्यक्ति की मन में उभरती एक तस्वीर
गंजा, चेहरे पर चेचक के निशान, पढ़ते हुए खबर
बीच-बीच में खुजला रहा होगा अपनी कमर ।

भयानक बारिश, बिजली गुल सात-सात दिन
लगातार बारिश, तेज चक्रवात, आंधी-तूफान
कलकल करते पहाडी झरने, सायं-सायं करती पवन ।

मां केरोसिन स्टोव पर करती गरम
पकाती चावल-दाल, साथ में पापड़ नरम
कई दिनों तक मिट्टी-चूल्हा रहता नम ।

हमारे घर-आँगन की खुली नाली का उफान
जैसे कटक में महानदी का जल-प्लावन,
पानी में छप-छप करने से प्रसन्न होता मन ।

पर होती हमारी मददगार टिंटू-माँ परेशान
लगता उस पर अंतहीन लगान
बुहारती हर समय झाड़ू से आँगन ।

आज और कल के बीच बहता समय का सैलाब
हार और नुकसान ही हमारा पुश्तैनी आशीर्वाद
क्या आज होगा कल का जवाब ?

धीरे-धीरे जमा होता जाता जल
सिरीकी बांध, दुगुड़ी, ईसाई पहाड़
नूआ गली, पठान गली, बाजार चौक, महागुड़ा गली
और जिले का एकमात्र एमएमसी अस्पताल ।

जहां कभी-कभार आते ब्रिटेन के डॉक्टर
बन गरीबों की आशा और विश्वास का सागर
मेरे छोटे भाई-बहनों को मिला वहाँ जीवन का उपहार।

कालातीत अब समय और स्थान
जैसे दे रहा हो कोई निरर्थक भाषण
या, हिमालय की अनाम जड़ी-बूटियों का वन ।

जब बीत जाते बारिश के दिन
सूरज देने लगता दर्शन
तिलचट्टे और मक्खियों से भर जाता आँगन ।

एक शाम मच्छरदानी में बैठी पुस्तक पकड़कर ,
गौरंगा चरण रथ की, "आकाशवाणी ..." पर आई खबर
उदयगिरि में आई बाढ़ भयंकर ।

एक किनारे से दूसरे किनारा 'मिली बयानी'
खंडहर दरकने लगे बारिश के पानी
ढहने लगी शहर की कमजोर किलेबंदी।

सब जगह भरा हुआ था जल जैसे सागर
उदयगिरि , दरिंगबाड़ी ,कुम्भकूप ,
कानबागेरी , बदनाजू , मलिकापोरी , कलिंग और भंजनगर

बिना सोये गुजारी वे रातें ,
तिलचट्टों के पैर गिनते
मच्छरदानी में सिर पर डायनासोर जैसे मँडराते।

केवल सोचती रही, निचले इलाकों में डूबे घर
बाढ़ में डूबे खेत और गाँव की डगर
जहां कुछ नहीं उगेगा, सिवाय खरपतवार ।

केवल आह ! कह रहा था दुखी मन
मेरी बहिन देख रही थी दु:स्वप्न
जल-निमग्न हो गए कई परिजन ।

पड़ोसी-बाबू , गूनी , बापूनी बह गए जल-धार
माताएँ करने लगीं विलाप,बहाते हुए अश्रु-धार
माँ ने भी खोया अपना इकलौता आँखों का तारा ।

हुआ था उसे मस्तिष्क-आघात, तो मैं कैसे सो पाती उस रात ?
मेरी बहन फुसफुसाई, "क्या तुमने सुनी कुछ आहट '?"
मैंने कहा, " दीदी , सो जाइए- उदयगिरी है सुरक्षित और शांत।"

हम रात भर कल्पना करते रहे बारिश की ओट
कैसे सितारे, चंद्रमा गगन में होंगे प्रकट
पहनकर मनमोहक इंद्रधनुषी मुकुट ।

लिए आसमानी सुंदर छबि का विशेषाधिकार
महत्वाकांक्षी नील गगन से होती वर्षा प्रचुर
महत्वाकांक्षी? नहीं, उदयगिरी महत्वाकांक्षाओं से थी दूर ।

मगर अवश्य महत्वाकांक्षी था सुबह का सूर्य
बारिश के महीनों के बाद सर्दियों का आदित्य
कैसे करता प्रदर्शन उदयगिरी का वैभव-ऐहित्य ?

ओड़िशा के प्राचीन समुद्री इतिहास पर नजर
नम, काली शामें जैसे बोझ से झुका हो सिर
हमारे पापों की आंधी जैसे हुंआ-हुंआ करते सियार ।

ऐसे में मेरी आँखों में नींद कहाँ ?
सुनाई पड़ती दुख-दर्द भरी आवाजें, अहा!
मन भटकता रहता सारी रात जहां-तहां

मैंने यहाँ सीखी मौन और धैर्य की वर्णमाला
बगैर किए किसी से दुश्मनी, या क्रोध-दिखावा
सर्दियों में उदयगिरि है ओड़िशा की दार्जिलिंग-पर्वतशृंखला।

उदयगिरि में होती है केवल, बारिश और सर्दी दो ऋतु
हमेशा उदार बना रहता महत्वाकांक्षी सवितु
रहता सदैव कलिंग घाट के घने जंगलों में सुषुप्त ।

ग्रीष्म ऋतु का दूसरा नाम था बसंत '
चहचहाते 'बेज' पक्षी गुलमोहर के शिखांत
लाल फूलों से लदे, पर्ण रहित ।

मेरे विद्यालय के रास्ते जाती मैं कूदती-कूकती बन कोयल
उसकी कोकिल आवाज को भूल
बहुत मजा आता था मुझे खेलने में वह खेल ।

आज भी महानगर में जिंदा है मेरा वह खेल
आज भी अंकित है मेरे मानस-पटल
उदयगिरि के पक्षियों का किल्लोल ।

तभी तो मेरा नाम रखा गया नंदिनी,
आज भी महसूस करती हूं अपने भीतर वह वाणी
यकीन नहीं आ रहा, कैसे बनी मेरे अस्तित्व की रानी।

इस तरह खंडहरों के बीच मैं पली-बढ़ी, धैर्यपूर्वक,
उछलने-कूदने की कला में हुई परिपक्व
छाया के संग सुबह से लगाकर शाम ढलने तक।

हर रात मेरी छाया रेंग आती मेरे द्वार
साथ में, उदयगिरि से सौगात मिली क्षति और प्यार
अस्पृश्य, मगर महसूस होते मेरे भीतर।

दीवारों से सांस की अनुभूति
सोचकर गोल्ला गली के हमारे घर की दीवार,
उस पर कालातीत प्लास्टर

जैसे हाथियों की भ्रामिक परछाई,
ज़ेब्रा या पागल औरत का फटा हुआ सिर
या कुत्ते के भौंकने या जम्हाई लेने के स्वर। सांस लेती परछाई।

अंधेरे में छूकर महसूस करती हूं खंडहर
मेहराब, दीमक खाए एल्बम,टूटे पिलर
उमस, चिपचिपाहट, कंघी और क्रीम-पाउडर

बिछुड़े माता-पिता और भाई-बहन।
मैं आसमान पर खींचती हूँ तस्वीर
जो दर्शाती है मेरी पीड़ा-पीर

स्वर्ग पंखों समेत उतरता धरा पर,
नहीं मिलता उसे कोई सुराग,
मैं हो जाती हूँ उदास, हताश और निराश।

कीमत

(अमेरिकन नाटककार आर्थर मिलर के नाटक
'द प्राइस', 1967 पर आधारित)

प्रो. सुनीता राय
अनुवादक
विभागाध्यक्ष, अंग्रेजी
कमला नेहरू भौतिक एवं सामाजिक विज्ञान संस्थान
सुलतानपुर (उ.प्र.), भारत

प्रथम अंक

न्यूयार्क

मंच के पीछे से दो खिड़कियाँ दिखाई देती हैं। दिन का समय है। स्लेटी प्रकाश छन कर आ रहा है। कमरा लकड़ियों के फर्नीचर से भरा हुआ दिखाई देता है। एक 1920 का रेडियो दिखाई देता है। ऐसा लगता है कि 10 कमरों में रखने योग्य फर्नीचर इस कमरे में किसी तरह रखा गया है। कुछ कुर्सियाँ और मेज नक्काशीदार है। कुछ वाद्य यंत्र भी दिखाई दे रहे हैं। ऊपर दाहिनी तरफ एक दरवाजा सोने के कमरे को जाता है। नीचे बाई तरफ एक दरवाजा गलियारे और सीढ़ियों की ओर जाता है।

यह कमरा मैनहट्टन ब्राउन स्टोन का एक भाग है, जो शीघ्र ही गिराया जाने वाला है। नीचे से बायीं तरफ के दरवाजे से पुलिस सार्जेन्ट विक्टर फ्रैन्ज वर्दी में प्रवेश करता है। वह अंदर आता है और सारी वस्तुओं को एक-एक करके निहारता है। वह वाद्ययंत्र हार्प की तरफ आता है, बहुत ही संजीदगी के साथ उसके एक तार को छूता है। वह अन्य और भी वस्तुओं को छूता है जैसे बन्दूक का पट्टा, जर्सी, फोनोग्राफ के रिकॉर्ड के ढेर आदि। वह गल्ला घेर और शीन का रिकॉर्ड लेता है, जो हास्य वाला रिकॉर्ड है, जिसमें दो व्यक्ति एक वाक्य को असफलतापूर्वक पागलपन की हद तक कहने की कोशिश करते हैं। वह मुस्कुराता है, फिर वास्तव में हँसता है। एस्थर, जो उसकी पत्नी है, नीचे बाएं के दरवाजे से प्रवेश करती है। विक्टर की पीठ उसकी तरफ है, वह पूछती है कि वहाँ क्या हो रहा है? एस्थर पूछती है कि क्या विक्टर ने वाल्टर से सम्पर्क किया। विक्टर कहता है कि उसने प्रयास किया, लेकिन वह लोगों की चिकित्सा में व्यस्त था। शायद नर्स ने उसे सूचना दे दी होगी। जब तक वह आता है, विक्टर आगे की कार्यवाही शुरू कर सकता है। वह अमेरिका में युद्ध के बाद आये डिप्रेशन समय को याद करता है। यह वह दौर था 1930 के आस-पास का जब लोग आर्थिक समस्याओं से जूझ रहे थे।

विक्टर घड़ी देखता है, छ: बजने में 20 मिनट बाकी हैं। वे व्यापारी का बेसब्री से इंतजार करते हैं। एस्थर पुरानी बातों को शुरू करती है कि वाल्टर ने चिकित्सा की पढ़ाई की जिसके लिये विक्टर को कुर्बानी देनी पड़ी, जबकि विक्टर बेहतर विद्यार्थी था, लेकिन उसने पिता की देख-भाल की। एस्थर चाहती है कि अब जबकि वह 50 वर्ष का हो गया है, वह कोई नया व्यवसाय प्रारम्भ नहीं कर सकता है, यह उसका नैतिक अधिकार बनता है कि इन पैसों से वह कुछ सोच सके। वे दोनों युद्ध के बाद के अवसाद के बारे में बात करने लगते हैं। विक्टर कहता है कि 1945 के समाचार-पत्रों को देखो वे क्या कहते हैं? एस्थर कहती है कि उसे पैसों की अत्यन्त आवश्यकता है? विक्टर कहता है कि उसे औरों से तुलना करना बन्द करना चाहिए। ऐसा करने से व्यक्ति कभी संतुष्ट नहीं होगा, क्योंकि हमेशा ही कोई न कोई उससे आगे होगा। हर व्यक्ति का एक स्वभाव होता है, मेरा भी है, मैं नहीं बदला। एस्थर कहती है कि सेवा निवृत्ति के बाद वह काफी बदल गया है।

ग्रेगरी सोलोमन जिसकी प्रतीक्षा हो रही थी, प्रवेश करता है। वह 90 वर्ष का है, लगातार खाँस रहा है और सिगार पी रहा है। वह 62 साल से इस व्यवसाय में फायदा नहीं उठा रहा है। सोलोमन एक पंजीकृत एवं अधिकृत आगणक (कीमत लगाने वाला) है। सोलोमन ध्यान से सारे फर्नीचर को देखता है और आश्चर्य व्यक्त करता है कि इतना सारा बिकाऊ है। वह जानना चाहता है कि विक्टर का इस सम्पत्ति से क्या सम्बन्ध है। विक्टर बताता है कि यह पारिवारिक सम्पत्ति है और 1929 के क्रैश के बाद से वहाँ पर है। सोलोमन के पूछने पर विक्टर पूरा इतिहास बताता है कि उसके पिता का 16 वर्ष पहले देहान्त हुआ। अब चूँकि वह भवन गिराया जाने वाला है, इसलिये वह सारा सामान बेचना चाहता है। सामान बहुत अच्छा था। सोलोमन चालाकी से अपने से तुलना करता है कि वह भी पहले बहुत अच्छा था, लेकिन अब नहीं है। समय बहुत ही भयानक होता है। वह वाद्य यंत्र की ओर इशारा करता है कि उसका साउंड बोर्ड टूट गया है। वह एक-एक करके सारे फर्नीचर की तरफ इशारा करता है, जैसे आलमारियाँ, कुर्सियाँ आदि। सभी पुराने फैशन की हैं। अंत में शयन कक्ष में सुन्दर बिस्तर देखता है। विक्टर बताता है कि उसके माता-पिता यात्रा के शौकीन थे और उन्होंने उसे यूरोप से खरीदा था।

विक्टर कीमत के बारे में उत्सुक है, लेकिन सोलोमन और विस्तार में जानना चाहता है। वह सम्पत्ति के उत्तराधिकार का कागज देखना चाहता है। विक्टर का एक भाई है। भाई के साथ उसके सम्बन्ध कैसे हैं? सोलोमन को दुनियादारी की बहुत समझ है। वह कहता है कि परिवार के सदस्य एक-दूसरे को पागलपन की हद तक प्यार करते हैं, लेंकिन जैसे ही माता-पिता की मृत्यु हो जाती है, अचानक सभी कुत्ते-बिल्लियों की तरह लड़ने लग जाते हैं कि किसको क्या मिलेगा। विक्टर कहता है कि इस मामले में ऐसा नहीं है। सोलोमन कुछ सामान तो खरीद सकता है, लेकिन सारे सामान के लिए उसे कागज जरूरी होगा। ऊँचे स्तर के लोग भी पैसा खर्च करके केस लड़ जाते हैं। हर कोई सबसे ऊपर रहना चाहता है।

फर्नीचर उपयोग में लाया हुआ है। खाने का मेज 1921-22 का है। पुराने फर्नीचर के साथ मनुष्य की भावनाएँ जुड़ी होती हैं। कुछ सामान उसके काम का है, लेकिन विक्टर सारा का सारा सामान बेचना चाहता है। विक्टर सीधे-सीधे कीमत के बारे में पूछता है। सोलोमन डरता है कि कहीं अनुमानित कीमत के कारण अच्छी वस्तुएँ भी न हाथ से निकल जाएँ। वह कहता है कि वह कैसे कीमत बताए जबकि विक्टर को उस पर विश्वास नहीं है। विक्टर उससे कभी नहीं मिला है तो उस पर विश्वास कैसे कर सका है। यदि उसे व्यापार करना है तो उसे (विक्टर) विश्वास करना होगा। सोलोमन का सामान की नाप लेता है, वह 40 इंच का है, वह कहता है कि आधुनिक मकानों में दरवाजे 30, 32 इंच के अधिकतम होते हैं, तो वह उसके अन्दर जा ही नहीं सकता। उसी प्रकार से पुस्तकालय की मेज है, आधुनिक मकानों में पुस्तकालय बनवाते नहीं। अत: कुछ वस्तुएँ अच्छी तो हैं, लेकिन वर्तमान में अनुपयोगी है। उपयोग किये हुए फर्नीचर का मूल्य केवल व्यक्ति का दृष्टिकोण है। यदि व्यक्ति दृष्टिकोण नहीं समझ सकता तो कीमत समझना असंभव है। विक्टर कहता है कि दृष्टिकोण का मतलब वे सारी वस्तुएँ किसी लायक नहीं हैं। सोलोमन कुछ वस्तुओं को काम का बताता है। विक्टर कुछ खास वस्तुओं को ही देने को तैयार नहीं है। सोलोमन सच्चाई बताता है कि वह इतने ज्यादा सामान नहीं सोच कर आया था। विक्टर के सामान में कुछ अच्छी वस्तुएँ भी है। बाकी भी बेची जा सकती है, लेकिन उसमें समय लगेगा। कुछ सामान जैसे मेज बहुत मजबूत है। आज का समय ऐसी वस्तुओं का है कि जितनी बदली जाय उतनी ही सुंदर है, चाहे कार हो, फर्नीचर हो, पत्नी हो या बच्चे हों, सब कुछ बार-बार बदल दी जाय,

क्योंकि आज का समय बाजार में क्रय करने का है। पहले लोग दु:खी होते थे, तो चर्च जाते थे या क्रांति करते थे। आज यदि तुम दु:खी हो तो बाजार चले जाओ। इस प्रकार का फर्नीचर हो तो खरीदना बंद हो जायेगा। बाजार की संभावना ही खत्म हो जायेगी, लेकिन फिर भी वह खरीदने को तैयार है। वह इतना अच्छा पैसा देने को कहता है, जिससे विक्टर एक सुखी व्यक्ति होगा।

उसने (सोलोमन) 75 साल की उम्र में शादी की। उसकी एक बेटी थी, जिसने आत्महत्या कर ली। वह 1916 की बात है। वह बहुत सुन्दर थी खूबसूरत चेहरा, बड़ी आँखें। पता नहीं क्या हुआ, हो सकता है, उसने ही (सोलोमन) कुछ कह दिया हो। उसने 19 वर्ष की उम्र में पहली शादी की लिथुवानिया में। उसके 3 पत्नियाँ थीं। उसने 6 अलग-अलग देशों में संघर्ष किया। विक्टर भी अपने बारे में बताता है। वह विज्ञान पढ़ना चाहता था, लेकिन उसे अपने पिता की सहायता करने के लिये पढ़ाई छोड़नी पड़ी। उसने सोचा कि वह अस्थायी रूप से सेना से जुड़ेगा, डिप्रेशन के समय के बाद विद्यालय वापस जायेगा, लेकिन तभी युद्ध छिड़ जाता है। इस तरह से जो आप सोचते हैं, वह मीलों पीछे चला जाता है। उसे उसका कोई पछतावा नहीं है। उसने अपने बेटे को पाला है। वह हमेशा चूहा दौड़ से बाहर रहा और अपनी जिन्दगी जिया। सोलोमन पूछता है कि क्या वह पैसे के खिलाफ है। विक्टर अपना जीवन सिर्फ पैसे के लिये नहीं करना चाहता। लोग कुछ भी करके केवल जीतना चाहते हैं। जैसे उसका भाई, एक सफल शल्यचिकित्सक, उसके पिता को महीने में 5 डॉलर देता था। विक्टर पैसे के बारे में पूछता है, सोलोमन 11 सौ डॉलर देने को तैयार है।

वाल्टर प्रवेश करता है। दोनों विक्टर और वाल्टर आपस में मिलते हैं। वाल्टर कहता है कि उसे देर हो गयी। विक्टर कहता है उसने सब कुछ बेच दिया। वाल्टर पूछता है कितने में बेचा। वाल्टर बताता है 11 सौ। सोलोमन वाल्टर से मिलता है। वाल्टर जानना चाहता है सारे सामान को 11 सौ डॉलर? पर्दा गिरता है।

('द प्राइस' नाटक दो अंकों में विभक्त है। इसके दूसरे अंक का अनुवाद क्रमश: अगले अंक में)

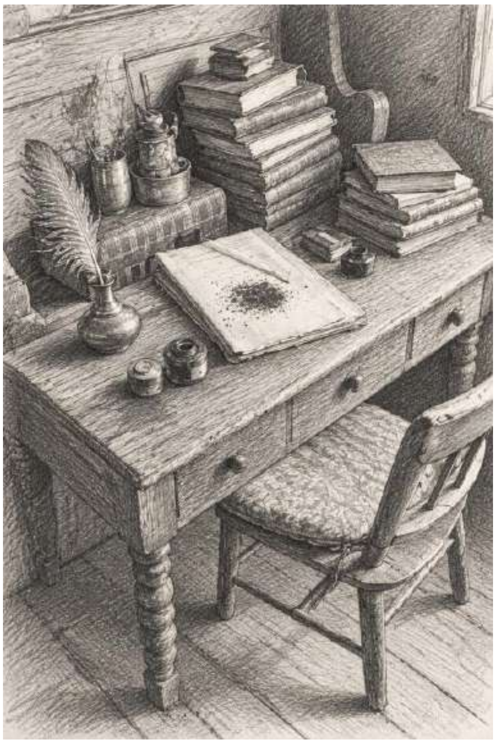

साहित्य अकादमी पुरस्कृत साहित्यकार ममता कालिया से रतन कुमारी वर्मा की वार्ता

ममता कालिया
नई दिल्ली, भारत

प्रो. रतन कुमारी वर्मा
प्रयागराज, भारत

इलाहाबाद को पोटली में बांधकर ला नहीं सकती थी। उनकी पल-पल की यादों को दस्तावेज बनाया- ममता

सवाल - आपका नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं। विशेष रूप से इलाहाबादियों के लिए। आपके साहित्य अनुराग की चेतना जगाने में पारिवारिक पृष्ठभूमि एवं शिक्षा - दीक्षा की क्या भूमिका रही ?

जवाब - (मुस्कुराते हुए) मेरी जन्मभूमि कृष्ण की नगरी मथुरा है। वृंदावन के कनेडियन अस्पताल में 2 नवम्बर 1940 ई. को मेरा जन्म हुआ। मेरे पिता जी विद्या भूषण अग्रवाल मूल रूप से मथुरा के रहने वाले थे । उनकी शिक्षा आगरा में हुई। पिता अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी के भी बड़े विद्वान थे। हमारी माता का नाम श्रीमती इन्दिरा अग्रवाल था। घर में प्यार से सभी लोग उनको इन्दू बुलाते थे। उनका जन्म एबटाबाद फ्रंटियर (अब पाकिस्तान पख्तूनवा प्रांत) में हुआ था। उनकी शादी मथुरा में हुई। वह बहुत बौद्धिक नहीं थीं, परन्तु बहुत उदार थीं। घर का वातावरण बहुत लोकतांत्रिक था। पढ़ने-लिखने की पूरी आजादी थी। हम सभी के कार्यों में बिलकुल हस्तक्षेप नहीं करती थीं। घरेलू कार्य भी नहीं करना पड़ता था। इसलिए बचपन से ही साहित्य की पुस्तकें पढ़ने की आदत पड़ गई थी।

घर में बड़े-बड़े साहित्यकारों का आना-जाना लगा रहता था। घर में सामान से ज्यादा पुस्तकें थीं। घर में पाँच कमरे थे, जिसके चार कमरों में पुस्तकें रखी हुई थीं। इसलिए विरासत में साहित्य अनुराग की चेतना मिली। वह ऐसे ही पुष्पित पल्लवित हुई जैसे कोई बच्चा घुटनों के बल चलता-चलता एकाएक लड़खड़ाकर खड़ा हो गये। पिता श्री विद्याभूषण अग्रवाल जी ने आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों पर निदेशक के पद पर कार्य किया था, साथ ही भारत के तीन चौथाई शहरों में भ्रमण करके शिक्षार्जन पूरा हुआ। विशेष रूप से बंबई , पूना, नागपुर, इंदौर, दिल्ली में रहकर शिक्षा सम्पन्न हुई। दिल्ली विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में विशेष स्थान के साथ एम.ए. किया।

सवाल - आपकी कहानियों में स्त्री- स्वर खूब उभर कर सामने आया है। आपके लेखन के सफर में स्त्री-पुरुष की स्थिति में कोई अन्तर आया है क्या?

जवाब - नारी संबंधी विषय उठाकर जब से लेखन कार्य शुरू किया, उस समय से अब तक पुरुष की सोच में स्त्री को लेकर बदलाव आया है। अब पुरुष, स्त्री के विषय में कुछ कहने-करने से पहले पुनर्विचार करने लगा है। इस के लिए बहुत सी स्थितियाँ जिम्मेदार हैं जिसके कारण थोड़ा सा बदलाव आया है। आज की युवा पीढ़ी की दादी, नानी, माँ का खुलकर समर्थन मिलने लगा है। आज जब घर के बहू या लड़की पर कोई जोर-जबरदस्ती की जाती है तब बूढ़ी माँ सिर उठाकर गलत का विरोध करती है। सिर उठाकर यह कह पाती है मैंने इतने वर्ष तक सब कुछ बर्दाश्त किया, लेकिन अब नहीं।

मेरे कहने का मतलब यह है कि पुरुष का सोया हुआ जन (डिस्टर्ब) हो गया है।

सवाल - जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं का पदार्पण हुआ है। महिलाओं के लिए कुछ निषिद्ध माने जाने वाले क्षेत्रो में भी महिलायें तेजी से आगे बढ़ रही है। क्या उससे पुरुषों के अहं को ठेस लगती है ?

जवाब हाँ, बिलकुल ऐसा होता है। क्योंकि आज भी पुरुष, औरत की स्थिति को दूसरे के कम आँकने में बाज नहीं आते। जब कि घर-बाहर काम करने वाली औरत एक तो अपना विकास कर रही है साथ ही साथ पुरुष की चेतना को जगाने तथा परिवार को मजबूत बनाने का कार्य कर रही है। किसी भी दफ्तर में, जहाँ स्त्री और पुरुष साथ-साथ सहकर्मी के रूप में काम कर रहे होते हैं, वहाँ यदि महिलाएँ, पुरुषों से बेहतर काम करती हैं तो कई बार काम की दौड़ में पीछे रह गये पुरुष तरह तरह से महिला को अपमानित करने का प्रयास करते हैं।

सवाल- इन दिनों आप क्या नया लिख रही हैं?

जवाब- इन दिनों कई कहानियाँ और संस्मरण लिखे हैं। एक नया कहानी संग्रह "गमछा" शीर्षक से प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है। यायावरी पर एक किताब तैयार करने के बाद अपने अगले उपन्याए पर काम करने इरादा है।

सवाल- नई उभरती रचनाकारों में आपको क्या खासियत नजर आ रही है?

जवाब- नई लेखिकाएं हमारे दौर से ज्यादा साहसी व दुस्साहसी हैं। वे नए ढंग से वर्तमान जीवन की चुनौतियाँ देख रही हैं। नीलाक्षी सिंह, वेदना राय, गीता श्री, प्रत्यक्षा, आकांक्षा पारे, सुषमा मुनीन्द्र, रूप सिंह, ज्योति चावला ये सब समर्थ आवाजें हैं।

सवाल- विद्यार्थियों को अपनी लेखन क्षमता बढ़ाने के लिए क्या करना चाहिए ?

जवाब- कालेज में पढ़ाई के दौरान हम सबसे लचीले संवेदनशील दौर से गुजरते हैं। विद्यार्थियों को समकालीन लेखन पढ़ना चाहिए। एक डायरी होनी चाहिए। दिन भर की खास घटनाएं उसमें नोट करनी चाहिए।

सवाल- आपको देश के कई प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं। हाल ही में प्रतिष्ठित साहित्य अकादमी पुरस्कार भी मिला है। जो कि आपकी अपने शहर इलाहाबाद की यादों पर लिखी गई किताब पर है। कैसा अनुभव हो रहा है?

जवाब- साहित्य अकादमी सम्मान के लिए यही लगा कि 'हुजूर देर कर दी बहुत आते-आते'। लेखक का धर्म है हर हाल में पढ़े-लिखे । कोई भी लेखक इनाम पर नजर करके लेखन नहीं करता। एक ही संतोष है कि ऐसी कृति पर मिला जो मैंने इलाहाबाद को पल-पल याद करते हुए लिखी। आज मैं जो कुछ भी हूँ, मेरी निर्मित में इलाहाबाद निवास का बहुत बड़ा हाथ है। वहीं देखा कि लेखक सिर उठाकर जीना चाहता है और जीना जानता भी है।

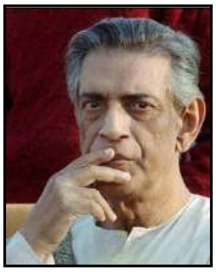

अभिशाप या वरदान?

(सुप्रसिद्ध साहित्यकार "भारतरत्न" श्री सत्यजीत राय द्वारा बाल साहित्य के अंतर्गत लिखित बांग्ला मूल कथा "रतन आर लोक्खी" का हिन्दी अनुवाद)

सत्यजीत राय
पश्चिम बंगाल, भारत

अनुवादक – **श्रीमती अजंता डे**
सुंदरपुर, वाराणसी

रतन का मन आज कई दिनों से बहुत खुश था। रतन शिमुली में रहता था जहाँ से चार कोस दूर उज्ज्वलपुर में मकर संक्रांति का बहुत बड़ा मेला लगता है। रतन गया था मेला देखने, सिर्फ देखने ही नहीं उसको एक बाँसुरी भी खरीदना था वो बहुत सुंदर बांसुरी बजाता है लेकिन उसके पास अच्छी बाँसुरी नहीं है। रतन के गाने सुनने की क्षमता अद्भुत है किसी भी गाने को दो बार सुन कर ही अपने अपने गले में उतार लेता है और साथ ही साथ बाँसुरी में भी। उज्ज्वल पुर के मेले में तरह तरह के वाद्य यंत्र बिक रहे थे। उसमें कई तरह के बाँसुरी भी थे। उन्हीं में से एक एक बाँसुरी उठा कर उसको फूँक मार मार कर रतन देख रहा था। उज्ज्वल पुर की राजकुमारी लक्ष्मी भी आई थी उस मेले में अपनी पालकी में सवार हो कर मेला देखने। वैसे राजकुमारियों का इस तरह से खुले में सबके सामने जाने की अनुमति नहीं थी लेकिन लक्ष्मी का स्वभाव ऐसा नहीं था कि वो किसी भी बंधन में रहे, उसने अपने माता पिता से साफ बोल दिया "मैं तो मेला देखने जाऊँगी ही। मैं ये पर्दा नहीं मानती वो भी मनुष्य है मैं भी, वो मुझे खा नहीं जायेंगे । मुझे मिट्टी की गुड़िया लेनी है, बहुत दिनों से मेरी इच्छा है मैं स्वयं जाऊंगी वहाँ और अपने पसंद की गुड़िया खरीदूँगी"। राजा रानी भी चुप हो गए। लक्ष्मी उनकी एक मात्र संतान थी और उसकी हर इच्छा वो पूरा करते थे। लेकिन किस्मत तो देखो गुड़िया की दुकान बाँसुरी के दुकान के बगल में ही थी। जहाँ रतन बाँसुरी खरीद रहा था। रतन तब तक एक बाँसुरी पसंद करके बहुत सुंदर एक धुन बजा ही रहा था कि शोरगुल की आवाज़ सुन कर आँख खोल कर देखा उसके बगल मे राजकुमारी खड़ी थी और उसी की तरफ देख रही थी। राजकुमारी सोलह साल की थी और रतन उन्नीस का। रतन देखने में भी बहुत अच्छा था। गाँव के मन्दिर के पंडित जी का एक मात्र पुत्र था रतन। किसी तरह उनका गुजर बसर हो जाता था लेकिन रतन की माँ ने रतन को बहुत प्यार से बड़ा किया था इसीलिए चेहरे में गरीबी की रेखा नहीं आई थी उसके। जैसे ही उसने राजकुमारी को देखा तो उसका मन प्रसन्न हो उठा। इतनी सुंदर कन्या उसने आज तक नहीं देखी थी। लेकिन राजकुमारी तुरंत अपनी आँखें उस पर से हटा कर गुड़ियों की तरफ देखने लगी। लेकिन रतन समझ गया था कि राजकुमारी को वो बुरा भी नहीं लगा था। और क्या चाहिए था रतन को? उसने एक बाँसुरी के बजाय तीन तीन बाँसुरी खरीद लिया खुशी के मारे। और मन ही मन सोचने लगा अगर अब घर में उसके विवाह की बात चली तो वो सीधा सीधा बोल देगा कि उज्ज्वल पुर की राजकुमारी की तरह अगर सुंदर कन्या होगी तभी वो विवाह करेगा नहीं तो आजीवन कुँवारा ही रहेगा। बस तब से आज तक रतन खुश रहने लगा।

आज रविवार था। सुबह का समय था। दो घंटे बाँसुरी का अभ्यास करने के बाद रतन गोपीनाथ पंसारी के यहाँ से समान लेकर जब घर लौटा तो उसने देखा एक जटाधारी साधू बाबा उसके घर के बाहर खड़े हैं। लाल लाल आँखे, गले मे चार चार बड़े बड़े रुद्राक्ष की माला, दाहिने हाथ में चिमटा और बांये हाथ में कमंडल।

रतन को देखते ही अपने दोनों हाथ आशीर्वाद के लिए उठा कर बोले "चांदपुर से आया हूँ अभी और तीन कोस चलना है, बेटा थोड़ा पीने का पानी मिलेगा?" "अवश्य बाबा, मैं अभी लाता हूँ" इतना बोल कर रतन माँ के पास गया और पानी मांगा तो माँ ने बोला सिर्फ पानी नहीं साथ में गुड़ भी लेता जा, तश्तरी में सजा कर माँ ने चार गुड़ रख दिया। रतन को बाबाजी कुछ अच्छे नहीं लग रहे थे खासकर उनकी दो लाल लाल आँखें इच्छा नहीं थी क्योंकि बाबाजी ने तो सिर्फ पानी मांगा था, फिर भी गुड़ की तश्तरी उठाया उसने और बाबाजी के सामने लाकर रख दिया और साथ में एक लोटा पानी। बाबाजी ने पलक झपकते ही सब कुछ खतम कर दिया फिर बोले "आहा मन बड़ा तृप्त हो गया, तेरा नाम रतन है ना", "जी बाबाजी " रतन समझ गया था बाबाजी बड़े सिद्ध पुरुष हैं तभी बिना बताये ही उसका नाम जान लिए, लेकिन फिर भी वो उसे ज़रा भी अच्छे नहीं लग रहे थे। घर के बाहर बरामदे में पैर फैला कर बैठ गए। ये देख कर रतन सोच में पड़ गया कि बाबाजी तो यहीं देह जमा लिए? अब बाबाजी ने बोला" बेटा पैर में थोड़ा दर्द है दबा दे तो" रतन हक्का बक्का रह गया इसकी आशा नहीं थी उसे। वो भौं सिकोड़ कर खड़ा रहा। ये देख कर बाबाजी फिर बोले " क्या हुआ थोड़ा सेवा कर बच्चा"।

"क्षमा करें बाबाजी मैं सिर्फ अपने माता पिता का पैर दबा सकता हूँ और किसी का नहीं " रतन बड़े संयम से बोला। इतना बोलना था कि बाबाजी की दोनों आँखे अंगारे की भाँति जल उठी। वो गरज के बोले "क्या बोला तूने एक बार फिर से तो बोल!" रतन ने फिर से अपने वाक्य दोहरा दिये। अब बाबाजी के क्रोध की सीमा नहीं रही वो गरज कर बोले "तुझे पता है मैं कौन हूँ? तेरा भविष्य मेरी मुठ्ठी में है। मैं त्रिकालदर्शी विपुलानंद तांत्रिक हूँ, मेरे तेज से पूरी पृथ्वी का विनाश हो सकता है।

रतन अब भी बाबाजी को देखे जा रहा था थोड़ा बहुत डर लग रहा था और सोच रहा था कि अब बाबाजी क्या करने वाले हैं। बाबाजी आगे बोले "आज अमावस्या है आज साँझ होते होते तू मनुष्य नहीं रहेगा बन जायेगा एक राक्षस। तू अपनी ऊँचाई से तीन गुना बड़ा हो जायेगा। तू इस सभ्य समाज में रहने के लायक नहीं रहेगा। तेरा भोजन होगा वन्य पशु । तूने अगर मेरी सेवा की होती तो तेरा मंगल होता लेकिन तुझे जब इसमें आपत्ति है तो यही सही। तुझे थोड़ी शिक्षा की आवश्यकता है।" रतन पत्थर की भाँति खड़ा रह गया और बाबाजी अपनी चिमटा और कमंडल उठा कर चलते बने ।

रतन सोचने लगा की साँझ मतलब???...सूरज डूबने से पहले का समय तो नहीं होगा बाद का ही है, अर्थात तीन घंटे हैं उसके पास।नरहरि चाचा के पास जाना पड़ेगा । दौड़ कर नरहरि चाचा के पास पहुँचा। नरहरि चाचा बहुत विद्वान ज्योतिषी थे। रतन को देख कर चाचा बोले " क्या हुआ रतन इस समय तू मेरे घर में?" रतन बोला "बड़ी मुसीबत में पड़ा हूँ चाचा, आपकी मदद चाहिए। मेरा आने वाला समय कैसा होगा थोड़ा देख कर बता सकते हैं?" "क्यों क्या हुआ, ऐसी कौन सी मुसीबत आ गयी?" "वो मैं नहीं बता सकता चाचा, कुछ मजबूरी है" वैसे तो नरहरि चाचा थोड़े गरम मिजाज़ के हैं , लेकिन रतन की घबराहट देख कर कुछ नहीं बोले । "तेरी कुंडली तो मैंने ही बनाया था ना ? " चाचा ने पूछा "जी हाँ चाचा" रतन ने जवाब दिया "कर्कट राशि, कृष्ण पक्ष ...याद आया!" फिर एक काग़ज़ लेकर उस पर कुछ कुछ रेखा खींचने लगे, फिर कुछ समय बाद लंबी सांस छोड़ कर बोले" महा संकट आने वाला है तेरे भाग्य में, तेरे ऊपर शनि की दृष्टि पड़ी है । कुछ दिन में तुझ पर भारी विपत्ति आने वाली है।" "उसके बाद?" रुंआसा हो कर रतन बोला।

नरहरि के चेहरे पर मुस्कान आ गयी "उसके बाद सब ठीक हो जायेगा कोई कष्ट नहीं रहेगा। तेरे दिन फिर

जायेंगे। किसी चीज़ की कमी नहीं रहेगी।” “कितने दिन बाद चाचा” “बहुत जल्द ही, बहुत जल्द ही। आज अमावस्या है न, देखना पूर्णिमा को सारे बादल छंट जायेंगेI” रतन समझ गया समय निकला जा रहा था सर के ऊपर से। सूरज धीरे धीरे पश्चिम की ओर खिसकने लगा था। उसने सोच लिया था कि अभिशाप के बारे में अपने माता पिता को कुछ नहीं बतायेगा। कुछ दिनों के लिए उसे घर छोड़ कर जाना होगा, फ़िर अगर जब सब ठीक हो जायेगा तो वापस आ जायेगा।

जब रतन घर पहुँचा तो देखा उसके पिता भी वापस आ गए हैं। माता पिता को एक साथ पा कर रतन बोला कि उसे नारायणपुर जाना है, वहाँ एक बहुत बड़े संगीतकार आये हुए हैं। अगर उनसे कुछ सीखने को मिले तो अच्छा होगा। उसके माता पिता को पता था की संगीत के प्रति उसकी कितनी रुचि थी, मना करने का कोई फायेदा नहीं है, वो नहीं सुनने वाला इसीलिए ना चाहते हुए भी इसकी आज्ञा देनी पड़ी। थोड़ी ही देर में रतन एक लाठी लेकर जंगल की ओर चलता बना।गाँव के पश्चिम ओर झलसी का जंगल है, वह बहुत से जंगली जानवर रहते हैं I रतन को पता है क्योंकि एक बार अपने एक मित्र सूबल के साथ गया था वहाँ, ये झलसी का जंगल हमेशा से जंगल नहीं था, बहुत समय पहले ये एक नगर हुआ करता था उस नगर का नाम था आजीनगढ़ वहाँ पर एक किले का खंडहर था। आजकल उसकी हालत बहुत खराब है। सांप बिछुओं का डेरा है। इस जंगल को पार करते ही दिग्नगर आ जाता है। लेकिन रतन को तो जंगल में रह कर जानवरों को खा कर गुज़ारा करना था। रतन एक नदी से पानी पिया बहुत देर से चल रहा था बहुत लंबा रास्ता तय किया था उसे इसीलिए प्यास लगी थी। सूरज डूबने में अभी भी एक घंटा बाकी था। रतन ने सोच लिया था किले के पास जा कर खड़ा हो जायेगा। अगर बाबा जी की बात सच हुई तो ही अंदर जायेगा, नहीं तो वापस अपने गाँव लौट जायेगा और माता पिता से बोलेगा कि उस्ताद जी के साथ मुलाक़ात नहीं हुई। लेकिन रतन को लग रहा था कि उनका अभिशाप सच होगा क्योंकि रतन को अपने शरीर में कुछ परिवर्तन दिखने लगे थे। हड्डियों मे कैसा खिंचाव सा महसूस हो रहा था। वो जा कर एक आम के पेड़ के नीचे खड़ा हो गया। साँझ होते होते उसने देखा वो आम का पेड़ छोटा हो जा रहा है। उसके शरीर पर बहुत सारे बाल आ गए हैं। उसकी पोटली में चूड़ा बताशा बंधा था लेकिन उसे खाने की इच्छा नहीं हो रही थी, जबकि भूख भी लगी थीI उसे चाहिए कुछ और खाने को। तभी झाड़ी में से एक जंगली सुअर निकल कर सामने आ गया और उसे घूरने लगा और धीरे धीरे गुर्र गुर्र की आवाज़ करने लगा, रतन ने अब देखा आम का पेड़ उसके घुटनों के पास आ गया है, उसने अपने चेहरे को छू कर देखा कि वहां भी बहुत सारे बाल आ गए हैं। सुअर कुछ देर घूरता रहा फिर उल्टे पैर भाग निकला।अब रतन जल्दी जल्दी अजीनगढ़ के उस पुराने किले की तरफ चलने लगा।

अजीनगढ़ के किले में एक राक्षस आ कर रहने लगा है ये बात आग की तरह पूरे शिमुली में फ़ैल गयी। एक दिन दोपहर को रामदास लकड़ी काटने जंगल में घुसा था क्योंकि शाम को शेर चीते का डर रहता है तभी उसने देखा एक विशालकाय दो पैर का जीव जिसकी बड़ी बड़ी लाल लाल आँखें, हाथ पाँव में बड़े बड़े नाखून, मूँह के दोनों तरफ नुकीले दांत और पूरे शरीर में बाल ही बाल, यही वर्णन किया था रामदास ने, बस फिर क्या था शिमुली के लोग जंगल में आने से डरने लगे। लेकिन ये भी सच था कि उस राक्षस ने अभी तक किसी भी इंसान को नहीं मारा था। रतन का मन अभी भी पहले जैसा ही था वो अभी भी शाम को किले के छत पर चढ़ कर अपनी सुरीली आवाज़ में गाना गाता था क्योंकि उसकी आवाज़ पहले जैसी ही थी। सिर्फ बदला था तो उसका शरीर और भूख, उसे कच्चा मांस ही पसंद आता था जंगली जानवरों का, उसके सुनने की शक्ति,

देखने की शक्ति और सूंघने की शक्ति बहुत बढ़ गयी थी। उसके शरीर की शक्ति भी बहुत बढ़ गयी थी कुछ ही समय में किसी भी जानवर को पकड़ कर उसका गर्दन तोड़ कर उसे खा जाता था चाहे वो जंगल का राजा शेर ही क्यों न हो। कोई भी जानवर कितनी ही दूर से दबे पाँव जाता था तो उसे पता चल जाता था। सौ हाथ दूर से ही वो किसी भी जानवर का गंध पा जाता था और चुपके से पीछे पीछे जाकर पकड़ लेता था। दस दिनों में ही शिमुली के सारे जानवर खा गया अब वो चला उज्ज्वल पुर की ओर, उसे पता था उज्ज्वल पुर एक बहुत बड़े जंगल से घिरा हुआ था। रतन को उस जंगल का नाम नहीं पता था लेकिन इतना जानता था की वहाँ बहुत सारे जानवर रहते हैं क्योंकि उज्ज्वल पुर के राजा वहाँ शिकार करने आते हैं । उसे जीवित तो रहना ही है ना और जीवित रहने के लिए भोजन आवश्यक है और अभी उसका भोजन है जंगली जानवर। रतन को उस दिन की प्रतीक्षा है जब उसके दिन फिरेंगे नरहरि चाचा के अनुसार । वो ये भी सोचता था कि क्या उसके पास बहुत सारी धन संपत्ति आ जायेगी क्या होगा पूर्णिमा तक आते आते।

चलते चलते उसे भूख लग गई, उसे एक शेर की महक आ रही थी, आगे बढ़ कर उसे पकड़ने ही वाला था कि उसने देखा एक तीर आ कर उस शेर को लगा और वो वहीं ढेर हो गया। तभी उस घोड़े की टापों की आवाज़ आई वो जल्दी से एक पेड़ के पीछे छुपने गया लेकिन घुड़सवार ने उस देख लिया। वस्त्रों से वो राजकुमार लग रहा था। रतन को देख कर वो चौंक गया लेकिन डरा नहीं , बोला “ क्या तुम ही हो झलसी का वो राक्षस?”

“हाँ, लेकिन तुम कौन हो” “मै चंद्रसेन हूँ, दिग्नगर का राजकुमार” फिर थोड़ा आश्चर्यचकित हो कर बोला “ लेकिन तुम तो एक दम मनुष्य की भाषा बोल रहे हो “ “क्योंकि मै मनुष्य ही हूँ एक साधू बाबा जी के अभिशाप से मेरी ये दशा हो गयी है, लेकिन तुम्हें मुझसे डर नहीं लग रहा?” रतन ने पूछा “नहीं तो! तुम इंसान कहाँ खाते हो जो तुमसे डर लगेगा!” लेकिन मैं जानवर खाता हूँ, इस शेर को मैं खाऊंगा सोचा था, लेकिन तुमने इसका शिकार कर लिया अब तो ये तुम्हारा हो गया “ राजकुमार ने मुस्कुरा कर कहा “तो क्या हुआ आज मैंने बहुत सारे शिकार किये हैं इसे तुम रखो” “तुम क्या अकेले ही शिकार करते हो?” “हाँ, पहले सिपाहियों के साथ करता था, अब अकेले ही करता हूँ I” डर नहीं लगता ? अच्छा ये सारी बातें तो हुई, तुम्हारा कोई नाम भी तो होगा, क्या नाम है तुम्हारा?” “मैं जब मनुष्य था तब मेरा नाम रतन हुआ करता था लेकिन अब इस नाम का कोई मतलब नहीं “ रतन उदास हो कर बोला “तुम इसी जंगल में रहोगे अब से?” “जितने दिन जानवर मिलेंगे उतने दिन फिर दूसरा जगह देखना पड़ेगा “ “तब तो तुमसे फिर मिल पाऊंगा बस कल मैं उज्ज्वलपुर जा रहा हूँ वहाँ एक डंबरी पहाड़ है उसके गुफ़ा में एक दानव रहता है जो आदमखोर है” उज्ज्वलपुर का नाम सुन कर रतन चौंक गया था। राजकुमार आगे बोला “वहाँ के राजा ने ढिंढोरा पिटवाया है उस दानव को मारने के लिए, मैं जा कर देखता हूँ अगर मैं उसे मार पाऊँ” इतना बोल कर राजकुमार चंद्रसेन ने रतन से विदा लिया। लेकिन रतन चिंता में पड़ गया था, उसे राजकुमार बहुत अच्छा लगा था। क्या एक आदमखोर दानव के साथ चंद्रसेन लड़ पायेगा?

दूसरे दिन रतन का मन नहीं लग रहा था। बार बार उसका ध्यान उज्ज्वलपुर की ओर चला जा रहा था वहीं तो राजकुमारी लक्ष्मी भी रहती है, उसके राज्य पर इतनी बड़ी विपदा आई है और वो चुपचाप बैठा रहे ऐसा कैसे हो सकता है? रतन उज्ज्वल पुर की तरफ चल दिया अपनी लंबी लंबी टांगों से। यहाँ से उज्ज्वलपुर दो कोस की दूरी पर है आधे घंटे में रतन पहाड़ के पास पहुँच गया। उसने देखा पहाड़ के चारों तरफ घना

जंगल है। पहाड़ में एक बहुत बड़ी गुफा भी है, हो न हो इसी गुफ़ा में वो दानव रहता है। अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से रतन ने देखा गुफ़ा के चारों तरफ नर कंकाल और हड्डियां पड़ी हुई हैं। रतन एक बड़े से पेड़ के पीछे छुप गया। थोड़ी देर बाद उसके कानों में घोड़े के टापों की आवाज़ आई। राजकुमार अपने सैनिकों के साथ आ रहा था साथ में सैनिक ज़ोर ज़ोर से नगाड़े पीट रहे थे। दानव को गुफ़ा से बाहर निकालने के लिए। रतन को और प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। दानव लंबी दहाड़ के साथ गुफ़ा से बाहर निकल आया और खिसकते हुए पहाड़ के नीचे आ गया। विशालकाय दानव कितना विशाल है उसके सामने खड़े राजकुमार को देखकर समझ में आ रहा था, राजकुमार उसके सामने एक खिलौने की भाँति लग रहा था। राजकुमार उसे देख कर अपने तीर निकाल कर उस पर वार करने लगा, लेकिन उन तीरों का उस पर कोई असर नहीं हो रहा था तीर उसकी मोटी चमड़ी से टकरा कर चारो तरफ टूट कर बिखर जा रहे थे। अब दानव उछल कर राजकुमार के पास पहुँच गया और उसके गर्दन को अपने बाज़ुओं से दबोच लिया। राजकुमार छटपटाने लगा ये देखकर रतन से रहा नहीं गया वो पेड़ के पीछे से निकल आया और लंबी दहाड़ मारी और दानव को उठा कर एक बड़े से पत्थर के ऊपर पटक दिया। दानव इस अप्रत्याशित वार के लिए तैयार नहीं था, लेकिन वो भी कम नहीं था वो तुरंत उछल कर खड़ा हो गया और रतन पर टूट पड़ा, रतन पहले से तैयार था अब वो दानव को पटका नहीं सीधा उसे अपने बाहूपाश में जकड़ लिया और तब तक उसे दबाये रखा जब तक कि उसके प्राण नहीं निकल गये। इतने में दूर से कोलाहल सुनाई दिया, रतन ने देखा बहुत सारे सिपाही तलवार, भाला, तीर कमान आदि लेकर उसकी और दौड़े चले आ रहे थे। उज्ज्वलपुर में भी खबर पहुँच गयी थी कि झलसी का राक्षस भी आ गया है । रतन चुप चाप सर झुकाए खड़ा था, लेकिन तभी राजकुमार बीच में आ गया और हाथ उठा कर सैनिकों से बोला "उसको कोई कुछ नहीं करेगा इस दानव को इसी ने मारा है अगर ये नहीं होता तो मैं जीवित नहीं रहता, इसे पूरे सम्मान के साथ राजमहल ले जाओ, ध्यान रहे इसका कोई भी अनिष्ट न हो। " राजकुमार के आज्ञा का पालन हुआ उसे सम्मान सहित राजमहल ले जाया गया। महल में पहुँच कर एक अशोक वृक्ष के नीचे रस्सी से बांध दिया गया। थोड़ी देर बाद राजा आये देखने और साथ में राजकुमारी लक्ष्मी भी जिसके बारे में रतन रात दिन सोचता रहता था। दोनों ने रतन को देखा तो आश्चर्य हुआ उनको, इतना विशालकाय राक्षस जिसने उनके राज्य के सबसे बड़े शत्रु को परास्त किया वो इतना शांत कैसे, किसी भी सैनिक पर उसने हमला नहीं किया, वो चाहता तो एक साथ सबको मौत के घाट उतार सकता था उसी जंगल में, लेकिन इसने ऐसा नहीं किया, लक्ष्मी सोच में पड़ गयी ये राक्षस ही है या कोई और?

धीरे धीरे दिन ढल गया और सांझ हो गयी। रतन आदत के अनुसार गाना गाने लगा बहुत ही मधुर और मनमोहक सुर उसने छेड़ा था पूरे राजमहल में उसकी मधुर गायकी गूंजने लगी। पूरे महल वासी चौंक गए इतना खतरनाक राक्षस और इतनी मधुर गायकी?? उधर लक्ष्मी ने जैसे ही उसकी आवाज़ सुनी उसे कुछ याद आने लगा। उसे याद आया कि उसके पिता ने घोषणा किया था कि जो उस दानव को मारेगा राजा उसे अपना आधा राज्य और राज कन्या का हाथ देंगे। तो घोषणा के अनुसार इस राक्षस के साथ उसका विवाह होना चाहिए, तो क्या वो सच में राक्षस है या कुछ और, सोचते सोचते राजकुमारी को नींद आ गयी। सपने में उसने देखा वही राक्षस उसके सामने खड़ा था और बोल रहा था "तुम हाँ बोलोगी तभी मैं इस शरीर से मुक्ति पाऊँगा। " राजकुमारी की नींद खुल गयी । सुबह सीधे अपने पिता के पास पहुंची और बोली " पिताश्री मुझे उस राक्षस के पास ले चलिए मैं कुछ प्रश्न करूँगी उससे " "क्यों क्या हुआ बेटी " राजा ने पूछा "आपने घोषणा करवाया था कि जो उस दानव को मारेगा आप उसको अपना आधा राज्य और मेरा हाथ देंगे तो उसने दानव

को मारा है तो वो क्यों नहीं? " "तुम पागल हो गयी हो? वो एक राक्षस है उसके साथ तुम्हारा विवाह कैसे दूँ? " "क्यों सिर्फ इसलिए कि वो देखने में बुरा है लेकिन पिताश्री उसकी आवाज़ मैंने सुनी थी क्या अद्भुत गायकी है उसकी, कितना दर्द था उसकी आवाज़ में। मैं उसी से विवाह करूँगी नहीं तो आपके वचन का क्या होगा?" "तुमने तो मुझे धर्मसंकट में डाल दिया बेटी, वो तुम्हें कुछ कर न दे!" " कुछ नहीं करेगा मेरा मन कहता हैI "राजा क्या करते ले गए लक्ष्मी को रतन के पास। आज पूर्णिमा थी, वह पहुँचते ही जो दृश्य दिखा सब चकित रह गए। राक्षस के शरीर से बाल गायब होने लगे थे, उसके नाखून छोटे होने लगे थे, आकार भी धीरे धीरे कम होने लगा था देखते ही देखते सामने एक खूबसूरत नौजवान खड़ा था और होठों पर एक मीठी सी मुस्कान थी। लक्ष्मी को याद आ गयी मेले की बात, हाँ उसने इस युवक को मेले में ही देखा था। रतन बोला " मेरा नाम रतन है एक साधु बाबा के अभिशाप के कारण मेरी ये दशा हुई थीI आपने जैसे ही अपनी सहमति दी इस अभिशाप का प्रभाव खतम हो गया। "राजकुमारी ने भी मुस्कुरा कर बोला " मैं राजकुमारी लक्ष्मी हूँI" राजा बोले मैं तुम दोनों का विवाह करवाउंगा क्योंकि मैंने घोषणा करवाई थी की जो उस दानव को मारेगा राजकुमारी का विवाह उसी के साथ होगा और आधा राज्य भी उसको दिया जायेगा। और क्या चाहिए था रतन को? वो तो लक्ष्मी जैसी लड़की मांग रहा था, यहाँ तो सीधे लक्ष्मी ही आ गयी उसके जीवन में, खुशी के मारे रतन की आँखे चमक गईI अब उसे लगने लगा कि अच्छा ही हुआ जो उसे अभिशाप मिला था, जो उसके लिए वरदान साबित हुआ।

सौदामिनी

(मूल स्रोत – प्रो. ज्योति प्रसाद सइकिया कहानी सौदामिनी
अन्य आकाशर सां में संकलित, वनलता प्रकाशन, डिब्रूगढ़, असम)

प्रो. ज्योति प्रसाद सइकिया
मूल लेखक एवं प्रख्यात साहित्यकार, असमी भाषा
कुलपति, जगन्नाथ बरूआ विश्वविद्यालय, जोरहाट, असम

अनुवादक - **मनमी बरठाकुर**
यूको राजभाषा सम्मान से सम्मानित,
राष्ट्रीय डिजाइन संस्थान में हिन्दी अनुवादक

थोड़ा-सा घासलेट न जुटा पाने के कारण घर में दीये नहीं जल रहे। समवाय दुकान में भी भी अब कई दिनों से मिट्टी का तेल नहीं आया। खुले बाजार में तो उसका दाम आग की तरह बढ़ चुकी है। इतनी महंगी कीमत पर रघुनाथ मिट्टी का तेल खरीदे भी तो कैसे? उसकी बीमार पत्नी पद्मा को भी रात के खाना खाने के बाद दवा देनी होती है। उस समय तक चूल्हा जलाकर रखते हैं। चूल्हे की धीमी धीमी रोशनी में वह पत्नी को दवा पिलाता है। अँधेरा होने से पहले ही बच्चों को आदेश देता है- "बस, बस, अब किताब बंद करो, सुबह उठकर पढ़ना, दीये में तेल नहीं है। खाना खाकर बिस्तर पर लेट जाओ।" ये कहते हुए उसका मन दुख से भर जाता है। ऐसा लगता है जैसे किसी ने उसके सीने में काँटा चुभो दिया हो। जिस आदमी ने अपने जीवन का बड़ा हिस्सा अँधेरें में टॉर्च जलाकर दूसरों को रोशनी दिखाई, आज उसी के घर में रोशनी का अभाव है। रेवती सिनेमा हॉल बंद होने के बाद से उसका संसार भी बिखरने लगा। उस सिनेमा हॉल के साथ रघुनाथ के बचपन और जवानी की कितनी ही यादें जुड़ी थीं। बचपन में, राजेन्द्र कुमार और दिलीप कुमार की फिल्में देखने वह चोरी-छिपे हर दिन बहाँ जाता। स्कूल की ड्रेस बदलकर वह सिनेमा देखता और घर लौटकर अपने पिता के सामने फिल्म के हीरो की तरह अभिनय करता। मजदूरी करने वाले उसके माता-पिता बेटे की चतुराई पर जल्दी भरोसा कर लेते थे। कई साल तक वह एम.भी. की परीक्षा पास नहीं कर पाया, तब उसने रेवती सिनेमा के-मालिक मनोहर जैन से नौकरी दिलाने की प्रार्थना की। रघुनाथ रेवती का नियमित दर्शक था, इसलिए जैन उसे अच्छी तरह -पहचानता था। आखिरकार एक दिन उसे नौकरी मिल ही गई। मनोहर जैन ने एक दिन उसे घर से बुलाकर हाथ में एक टॉर्च देकर कहा- "लोगों को रोशनी दिखाना, ताकि वे आसानी से अपनी सीट ढूँढ सकें। काम में कभी ढिलाई मत करना।" जैन की बात रघुनाथ ने सदा निभाई। वह हर दिन टॉर्च की बैटरी जाँचता कि सही चल रही है या नहीं। फिल्म देखने आए लोगों को वह अँधेरे में ठोकर खाए बिना उनकी जगह तक पहुँचने में मदद करता। लेकिन जिन्दगी के तीन दशक दूसरों को ठोकर खाने से बचाते हुए एक दिन जिन्दगी ने उसे सबसे बड़ा ठोकर मार दिया। किसी सशस्त्र संगठन ने असम में हिंदी फिल्मों पर रोक लगाने का आहवान किया। शुरू में मनोहर जैन ने इस पर ध्यान नहीं दिया। वह मानता था कि कला का कोई दुश्मन नहीं होता। रघुनाथ और बाकी का लोग भी इसे बेकार की बात ही समझते थे। जब उसकी पत्नी पद्मा ने यह बात छेड़ी, तो रघुनाथ ने केदार खान का लंबा डायलॉग उसे सुनाया "सुंदरता का कोई पोशाक नहीं होता, कलाकार का कोई घर नहीं होता, संस्कृति की कोई भाषा नहीं होती। मानवता ही सृष्टि की सीमा तय करती है।" लेकिन एक दिन वही मानवता की सीमा रघुनाथ की आँखों के सामने चूर-चूर हो गई। हॉल के पर्दे के पास प्रथम श्रेणी में किसी ने बम फेंक दिया। फिल्म शुरू होने से कुछ ही मिनट पहले धमाका हुआ। दर्शक अभी बाहर ही थे केवल दो-तीन युवा अंदर अपनी सीटों पर बैठे थे। रघुनाथ बालकनी के गेट पर खड़ा

दर्शकों का इंतजार कर रहा था। अचानक धमाके ने पूरा हॉल हिला दिया। प्रथम श्रेणी की कुर्सियाँ टूट गईं, और उन्हीं कुर्सियों के बीच से दो-चार युवा दर्शकों के मांस के टुकड़े हवा में उछल गए। रघुनाथ घबराए हुए दौड़ने ही वाला था कि उसके हाथ से टॉर्च छिटक गई। वह अँधेरे में ठोकर खाकर गिर पड़ा और उसी ठोकर ने उसकी जिन्दगी की रोशनी बुझा दी।

'रेवती सिनेमा हॉल' हमेशा के लिए बंद हो गया। लोग काफी डर गए, अब कोई सिनेमा देखने नहीं आता। आखिर मनोहर जैन को भी हॉल बंद करना पड़ा। शहर के बीचोंबीच स्थित वह हॉल बाद में 'जैन मार्केट' बन गया। रघुनाथ अब बेकार का आदमी बन गया था। दूसरे कर्मचारियों के साथ रघुनाथ को भी नौकरी से निकाल दिया गया। अपनी जिन्दगी का ज्यादातर समय उसने रेवती में ही गुजारा। रेवती के साथ उसका एक भावात्मक रिश्ता जुड़ गया था। सालों से जिस जगह ने उसके जीवन को अर्थ दिया था, वह अब व्यर्थ जैसी लगने लगी। मनोहर जैन ने जब सिनेमा हॉल को मार्केट में बदलने का निर्णय लिया, रघुनाथ के साथ हर कर्मचारी की आँखें भर आयी थीं। कितने ही सवाल उनके दिल में उमड़ रहे थे। पर जबाब देने बाला कोई नहीं था। अनवरत बात करने वाला जैन के होंठ भी अब चुप थे। जिन सशस्त्र लोगों ने बम फेंका था, वे आनंद में मग्न थे, किसी को भी उन कर्मचारियों की चीखें सुनाई नहीं दीं। बीमार पत्नी और छोटे बच्चों को पेट की जलन से तड़पता देख रघुनाथ के कानों में बार बार वही बम की आवाज गूँजती रहती थी। उसे पूरी दुनिया जला देने का मन करता था। लोगों के प्रति उसके मन में घृणा का भाव जाग उठा। फिर जब उसे खबर मिला कि असम के कुछ फिल्म कलाकार अब जीविका के लिए रास्ते में अखबार बेचने लगे हैं तो वह कुछ पल के लिए मौन रह जाता। उस सशस्त्र संगठन ने हिंदी फिल्में तो बंद करा दीं पर किसी ने यह नहीं सोचा कि उस फैसले से कितने लोगों का चूल्हा बुझ जाएगा, असम का एक उद्योग खतम हो गया। रघुनाथ कभी-कभी रेवती की याद में जैन मार्केट चला जाता है। पहली दुकान में मनोहर जैन का छोटा बेटा बैठता है। अब वह सीडी-कैसेट का बड़ा व्यापारी बन चुका है। दुकान में नई हिंदी फिल्मों की सीडी सजाकर रखा है। साथ ही बीच में असमिया बिहू पर बनी फिल्मों की सीडी भी है। जींस और सलवार पहनकर हीरो-हीरोइन हिंदी फिल्मी धुन पर बिहू नाचते हैं और उन दृश्यों का नृत्य-निर्देशन बंबई के कोरियोग्राफर करते हैं। ये दृश्य देखकर रघुनाथ का खून खौल उठता है। उसका मन करता है कि अपनी मन की आग से वह दुकान जला दे। उसने बहुत-सी फिल्में देखी हैं। इन फिल्मों में लोगों के दुःख-सुख के माध्यम से उसे अपना प्रतिबिंब दिखता था। लेकिन सिर्फ भाषा असमिया न होने के कारण ही बंद करा दिया गया था।

बीमार पत्नी के इलाज के लिए भी वह डॉक्टर के पास नहीं जा पा रहा है। घर चलाने के लिए उसके पास एक फूटी कौड़ी नहीं बचा। कुछ दिन उसने शहर के कोने में सब्जी बेचने का छोटा काम शुरू किया, पर वह भी ज्यादा दिन नहीं चला। शहर का हर आदमी जो भी रास्ते से गुजरता उसे कहता था- "क्यों रे रघुः अब सब्ज़ी बाला बन गया?" फिर कोई दो-चार लोग पास आकर गप्पे मारकर चला जाता। लोगों के व्यंग्य भरे सवाल उसे बिल्कुल नहीं पसंद। कुछ कहे बिना लोगों के मन न भरता, उसे ऐसा लगता था जैसे सब्जी बेचकर उसने कोई गलती की हो। कुछ लोग तो उसके काम का तारिफ करके रेवती सिनेमा हॉल की बातें निकालकर बैठ जाते थे। कोई भी उसकी सब्जियाँ खरीदकर उसकी मदद नहीं करता था। धूप में रखी सब्जियाँ सूखकर मुरझा जाती थीं। लाभ होने की जगह नुकसान ही अधिक होता था। आज भी पूरा दिन वह बरामदे में बैठा रहा। बाहर हल्की बारिश चल रही है। बच्चों को दो दिन के लिए बुआ अपने घर ले गयीं। भीतर पद्मा जितना

दर्द से कराहती थी, रघुनाथ उतना ही बम के विस्फोट से लोगों को छिटकते हुए महसूस करता। इन लोगों के बीच वह अपनी पत्नी और बच्चों को भी देखता हैं। ऐसा महसूस होता, जैसे उसीम वह बम लोगों की ओर फेंका हो। वह धीरे-धीरे भीतर गया। पद्मा की आवाज भी अब धीमी पड़ने लगी। संध्या का हल्का अँधेरा घर को घेर चुका था। उसे लगा जैसे कोई सशस्त्र लोगों का समूह इस अंधेरे के बीच कोई बेसुरा गीत गा रही हो। उस अर्थहीन गाने की गूँज ने उसके मस्तिष्क में आग जला दी। वह जोर से चीख उठा- "आः।" उसकी चीख से पूरा इलाका काँप उठा। आधा किलोमीटर दूर स्थित 'रेवती' की विशाल इमारत में वह चीख गूँजकर वापस लौट आई। वह भागकर बिस्तर के नीचे छिपाई अपनी पसंदीदा टॉर्च उठाकर बाहर निकल आया। वह चारो ओर टॉर्च की रोशनी फैलाकर पागलों की तरह चिल्लाने लगा। आसमान काले बादलों से ढका हुआ है। बीच-बीच में बिजली कौंध रही है। चिल्ला चिल्लाकर वह थककर गिर पड़ता है। भीगे आँगन में ही घुटनों के बल बैठकर फूट-फूटकर रोने लगता है। इतनी शांत बातावरण में कितनी देर तक बह रोया, उसे खुद पता नहीं चला। अचानक उसका पुराना सहकर्मी करीम के स्पर्श से वह पीछे मुड़कर देखता है। कई लोग उसके घर के आँगन में जमा हो गए हैं। जैसे किसी सुपरहिट फिल्म को देखने लोग फिर से 'रेवती' के दरवाजे पर खड़े हों...।

एक और फालतू औरत

(गुरुमुखी कहानी, लेखक - अजीत कौर)

अजीत कौर
पंजाब, भारत चण्डीगढ़, पंजाब, भारत
(प्रख्यात साहित्यकार, अनुवादक, साहित्य अकादमी अवार्ड,
शिरोमणि, उर्दू साहित्यकार अवार्ड, केन्द्रीय निदेशायल अवार्ड,
पंजाब, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, दिल्ली, यू.पी., बिहार उर्दू अकादमी अवार्ड)

अनुवादक - **रेनू बहल**

अप्रैल की शुरुआत की वह एक उदास शाम थी। थका देने वाली गर्मी और उमस से भरी हुई। हम सड़कों पर भटक रहे थे। कुछ देर बाद हम जनपथ के कॉफी हाउस लाउंज में जाकर बैठ गए। धीरे-धीरे, हम दोनों ने कॉफी के तीन प्याले खत्म किए। मालूम नहीं कितना जमाना उन तीन प्यालों के घूंट पीते-पीते दरमियान से फिसलता, रेंगता हुआ गुज़र रहा था। बाकी रह गई थी कड़वाहट और खालीपन।

दूसरा कप उमा यानी ओम प्रकाश ने केतली से उंडेला था और जब वह, उसमें दूध डालने लगा तो मैंने कहा-

"नहीं... दूध नहीं।"

"चीनी?"

'चीनी भी नहीं।'

'ब्लैक कॉफी?'

हुँ।

'नाराज़गी ?' और उमा मुस्कुरा दिया।

जवाब में मुझ से मुस्कुराया नहीं गया। अजीब सी दशा है दिल की। उमा की जिंदगी में जब अपने फालतू और बेकार होने का एहसास जिस वक्त टीस बनकर चुभता है तो मेरा दिल करता है कि मैं कोई ऐसी नश्तर जैसी तीखी बात कह दूँ जिससे उसका कठोर और स्वाभाविक खोल तेज चाकू की धार से कट जाए। उस वक्त उसकी इस बाहरी मजबूती से मुझे बहुत चिढ़ होती थी। कुछ तो ऐसा हो जो उसे काट दे। बेशक आधा इंच ही काटे इस चिकने खोल को, इस गिलाफ को ताकि उसके अंदर के चिथड़े कुछ तो नजर आएँ।

मगर जब मैं कतरन काट देती थी, कतरन भी नहीं एक तीखी सीधी लकीर, चमकते तेज घार वाले चाकू से कट कर पड़ा छिद्र देखकर वह तिलमिला उठता और फिर मुझे दुख होता था अपनी कमीनगी पर।

मैंने क्या चाहा था? शायद कोई बहुत ही मासूम चीज जैसे कि एक शांत घर और घर के किसी कमरे के एकांत और अपनाइत के क्षणों में उमा के सीने पर सिर रखकर मैं बैठी रहूँ और किताब, संगीत हो और शायद कुछ भी नहीं।

जो चाहिए था, उसके बारे में कुछ पता नहीं था, केवल इतना पता था कि जो मैं चाहती हूँ वह मेरे पास नहीं है। और जो मेरे पास नहीं है उसका पूरा दायित्व उमा का था क्योंकि सभी आवश्यक निर्णय उमा के हाथ में ही थे।

कॉफी के तीन प्याले खत्म होते-होते साढ़े सात बज गए। उमा ने घड़ी देखी। जब भी उमा की नाक के ऊपर माथे पर तीन सलवटें पड़ जाएँ, उस वक्त ऐसा प्रतीत होता था कि उसे कोई बात समझ में नहीं आ रही।

वैसे इस तरह का पल बहुत ही कम आता था, प्रायः उसे हर बात की समय पर समझ आ जाती थी। ऐसा लगता था कि इर्द-गिर्द की हर चीज़ और उसके आस-पास की हवा पर भी उमा का शिकंजा मज़बूत है।

ललाट पर पड़ी तीन सिलवटों को देखकर मुझे उस पर दया आ जाती थी, केवल दया ही नहीं, प्यार भी। दिल मचल कर उसकी ओर बह निकलता था।

"क्या सोच रहे हो?"

"कुछ नहीं।"

"मुलाकात का समय तो नहीं दिया किसी को?" मैंने मुस्कुरा कर पूछा।

(कमबख्त औरत भी मां की कोख से अभिनय सीख कर आती है। अपने मर्द को निहाल करने के लिए अभिनय, अपने लिए छोटी से छोटी छूट हासिल करने के लिए अभिनय, पड़ोसी और नातेदारों के दुख-सुख में शामिल होने के लिए अभिनय। इसी को 'त्रिया चरित्र' कहते हैं, व्यंग्य के साथ, निंदा के साथ। मगर क्यों? इसमें जो औरत की मेहनत खर्च होती है उसका हिसाब क्यों नहीं किया जाता?)

"नहीं नहीं।" वह जल्दी से बोला ।

"फिर?"

"तुम ज्योतिषी को किसी तरह पता चल जाता है।" वह भी आराम से मुस्कुराते हुए बोला।

उमा जब मुस्कुराता था तो उसके अगले दो दांतों के किनारे धूप में पड़ी सीपियों जैसे चमकते थे। बाकी के दांत बिल्कुल पीली रेत के रंग वाले, बिल्कुल आम से बल्कि कुछ-कुछ कुरूप थे। मगर अगले दोनों दांतों के किनारे चांदी से चमकते, सीपी के अंदरूनी रंग जैसे।

उमा की नाग-मणि उसके माथे में नहीं बल्कि आगे के दोनों दांतों के किनारों में थी। मुझे खुश करने के लिए उमा को नाचने की जरूरत नहीं थी, बस एक मुस्कुराहट के साथ दोनों दांतों के दो मोती चमकने की देर होती थी कि मेरा अस्तित्व मोम की तरह पिघलने लगता था।

"ज्योतिषी नहीं, अंतर्यामी।"

"जी बाबा अंतर्यामी।"

"अब बताओ क्या सोच रहे थे? अंतर्यामी से कुछ नहीं छुपा रहता।"

"मैं यह सोच रहा था कि साढ़े सात बज गए हैं। सिनेमा भी शुरू हो गया होगा और ड्रॉमा भी। किधर जाना चाहिए?"

एक काला बादल दूर फिर नज़र आया। बिजली एक बार फिर दमकी, क्रोध की, लांछन की, असहायपन की। 'मेरे इस मर्द ने मेरे साथ मिलकर घर बनाने के बजाए मुझे बंजारा बना दिया था।'

किंतु मेरे अंदर की औरत जो सदा से अभिनय कर रही है, उसने मुझे डांटते हुए, चेताते हुए कहा, 'देखना तनिक'। एक हल्की सी मुस्कुराहट लिपस्टिक की तरह होठों पर सजाई, "एक जगह तो है शहंशाह-ए-आलम ! जान की अमान पाऊं तो अर्ज करूं।"

"फरमाइए।" उसने हंस कर कहा।

"भाड़ में जाएं तो कैसा रहेगा?"

"ठीक है चलते हैं।"

पास से गुज़रते वेटर से उसने बिल लाने को कहा, बिल चुकाया और आदत के अनुसार बिल वापस ले लिया, और हम उठ कर बाहर चले आए।

हमारे साथ उठ कर एक सवाल भी बाहर आ गया था कि अब बाकी की शाम कैसे व्यतीत की जाए।

टैक्सी के नज़दीक रुक कर उसने पूछा।

"रानो के घर चलें?"

"तुम तो कह रहे थे कि एम.पी. वाली कोठी वे छोड़ रहे हैं।"

"हां, कालू विलायत जाने से पहले उसे नए घर में सेट कर गया था। मेरे पास उसका पता है।"

कालू यानी, उमा का दोस्त जिसका नाम तो अपना कुछ और था जैसे नानी-दादी अपनी आत्मा की तुष्टि के लिए बच्चे का नाम रख देती हैं, मगर सभी दोस्त उसे कालू कह कर ही बुलाते थे।

'ठीक है चलते हैं। मैंने कहा।

जानती थी कि इस शाम के भाग्य में कत्ल होना ही लिखा है फिर बहस करने का क्या लाभ?

टैक्सी एक बड़े से बंगले के सामने रुकी। यह भी कोई सरकारी बंगला था। गेट के अंदर प्रवेश करते ही हम बंगले की दीवार के साथ चलते-चलते बंगले के पिछले हिस्से में पहुंच गए। बहुत वीरान लॉन सामने था जिसकी घास समय से पहले ही बूढ़ी हो चुकी थी। लॉन के दूसरे किनारे पर एक बहुत बड़ा पेड़ था जिसकी शाखाओं में घना अंधकार फैला हुआ था। वह पेड़ बहुत मनहूस लग रहा था और लॉन बिल्कुल वीरान...... उजाड़ ।

पिछले दरवाजे पर उमा ने दस्तक दी। रानो ने दरवाजा खोला।

"अरे आप? आज कैसे इस तरफ का रास्ता भूल गए?"

"रास्ता तो नहीं भूले, विशेष रूप से तुम से मिलने आए हैं।"

उमा ने एक छोटा जीना चढ़कर कमरे में दाखिल होते हुए उत्तर दिया। उसके पीछे-पीछे मैं भी कमरे में प्रवेश कर गई।

रानो के बालों में भी बाहर वाले पेड़ की शाखाओं में बैठा अंधकार सिमटा हुआ था। बेहद उदास और बौखलाई सी लग रही थी।

वह कमरा शायद बड़े बंगले का स्टोर था या फिर रसोइया के किसी सहायक जैसे बर्तन साफ करने वाले किसी लड़के की कोठरी रही होगी।

बहुत छोटा सा कमरा। कमरे के एक कोने में खाट पड़ी थी जिसने आधा कमरा घेर रखा था। दूसरे कोने में एक छोटा इलेक्ट्रिक चूल्हा पड़ा था।

करीब ही दो-तीन प्यालियां, तश्तरियां और चमचे लावारिसों की तरह लुढ़के पड़े थे, अजीब बदहवासी में। करीब ही पांच-सात जैम की खाली शीशियां और कॉफी के डिब्बे पड़े थे, जिनमें नमक, मिर्च और मसाले भर कर रखे थे शायद। ढक्कन गंदे थे। ढक्कन के रंगों से ही पता चल रहा था कि इनमें क्या है। चूल्हा भी जब जल न रहा हो, बुझा हुआ ठंडा पड़ा हो तो भी निराश नहीं लगेगा? फटे हाल, उदास.. उदास ।

पूरे कमरे में अगर कोई पुराने समय की वस्तु थी तो वह थी रेशमी रज़ाई, जिसका रंग अब उतना चमकदार नहीं लग रहा था। मगर बुझते चूल्हे की चिंगारियों की तरह अभी भी इसमें पुरानी गर्माहट थोड़ी बहुत बची थी। दूसरी चीज़ थी ट्रांजिस्टर। वही जो कालू ने रानो को पहला उपहार दिया था, उस वक्त जब उसके दोस्तों के कहे अनुसार वह उसे चंडीगढ़ उड़ा कर ले आया था।

एक साधारण से घर में परवरिश पाने वाली और चंडीगढ़ सेक्रेटेरिएट में टाइपराइटर पर काम करने वाली रानो कालू की दौलत की चमक और मोहब्बत के रटे-स्टाए नुस्खे से चकरा गई और जब होश आया तो वह एक छोटी सी कोठरी में अकेली थी। कालू अपनी पत्नी को रिश्वत के तौर पर विदेश की सैर के लिए ले गया था।

(एक औरत जिसका नाम पत्नी होता है उसका मर्द जब उससे चोरी करता है तो उसे रिश्वत देता है। जितनी बड़ी चोरी, उतनी बड़ी रिश्वत । मगर दूसरी औरत जो फालतू होती है रखैल ।। उसको सिर्फ रोटी, कपड़े और आभूषण देकर बहलाया जा सकता है और जो फालतू औरत इस मर्द के प्रेम में गिरफ्तार हो जाए तो उसको फिर भगवान भी नहीं बचा सकता।)

हमारे कमरे में प्रवेश करने से या तो कमरा सिकुड़ गया था या फिर उस कमरे में मौजूद तीन लोगों के लिए हवा अप्रयाप्त थी। कुछ तो था जो दम घुट रहा था। कुछ ऐसा जिससे सांसें भारी हो रही थीं, भारी और कसैली।

"अब सुनाओ क्या हाल-चाल है?" उमा चारपाई के बीच फैल कर बैठ गया। दोनों भुजाएं पिछली तरफ टिका दीं। मैं चारपाई के कोने में सिमट कर बैठ गई। रानो चूल्हे के करीब स्टूल पर बैठ गई।

"आप स्वयं देख ही रहे हैं।" बड़ी अनमनी सी हो कर उसने उत्तर दिया।

"कोई चिट्ठी आई?"

"आई थी, क़रीब दस दिन पहले। बीते दस दिनों का खालीपन, चिट्ठी की प्रतीक्षा और मायूसी सब रानो की आवाज़ में व्याप्त थे।

"ठीक है वह?"

"जी ।"

"और तुम..."

"मैं?" उसने अचानक अचंभे से उमा की ओर देखा।

"तुम ठीक तो हो?"

"ठीक हूँ।" उसकी रुआंसी आवाज़ किसी कुएं से आती महसूस हुई। कुछ देर के लिए कमरे में खामोशी छा गई, कुछ इसी तरह की खामोशी जैसे अंधेरी रात में चीखते सायरन की आवाज हवा में छा जाती है और हर क्षण एक ख़तरा भी इसके साथ लिपटा रहता है। दोबारा आवाज सुनने को कान अंधेरे में ऐसे खड़े रहते हैं कि शायद बम का धमाका सुनने को मिलेगा।

"कालू का ख़त आया था, लिखा था प्लेटफॉर्म पर जो सामान छोड़ आया हूँ उसका ख्याल रखना।" उमा ने धीमे से मुस्कुराते हुए कहा।

"अच्छा" बेहद घनेरा अंधेरा उसकी आवाज़ से झलक रहा था, राख जैसा भुरभुरा ।

मैंने उमा की तरफ देखा। यह बहुत ही कम होता था कि वह बात करते हुए हिचकिचाहट महसूस करे।

रानो एक नामालूम सी ललकार आंखों में भरकर उसकी ओर देख रही थी।

"कोई सेवा-सत्कार नहीं करोगी हमारी, तुम्हारे घर मेहमान आए हैं।" उमा ने ललकार को टालते हुए कहा।

"घर में दूध नहीं है नहीं तो चाय..."

"दूध कम पिया कर, कम से कम चाय के लिए तो बचा कर रखना चाहिए।"

'आज सुबह ले कर नहीं आई?'

"क्यों?"

"रात में गर्मी बहुत होती है। नींद ही नहीं आती, कमरे में उमस की वजह से। फिर सुबह सवेरे जाकर आंख लगती है और मेरे उठने तक दूध का डिपो बंद हो जाता है।"

मैंने कमरे के चारों ओर देखा। बित्ते भर जमीन के इर्द-गिर्द खड़ी दीवारों से टकराकर मेरी नजरें वापस लौट आईं। कोई खिड़की नहीं थी कमरे में। रोशनदान का तो वैसे भी आज-कल चलन खत्म हो चुका है। पिछली दीवार में एक दरवाज़ा अवश्य था जो लगता है स्थाई रूप से बंद कर दिया गया है। हो सकता है दूसरी ओर से घर के मालिक ने इसे बंद कर दिया हो।

(जब रानो कालू के साथ चंडीगढ़ आई थी तब शायद उसे इस बात का आभास न होगा कि कालू की दौलत उसे घर नहीं दे सकती।)

"व्हिस्की की बोतल ही निकाल ले।"

"व्हिस्की वाले तो खुद विदेश चले गए। पीछे तो अब बस खाली बोतलें ही रह गई हैं।" रानो ने ठंडी आह भरते हुए कहा।

"ओह हो!" उमा झेंपते हुए मुस्कुराया। कुछ पल कमरे में खामोशी रही।

"सारा दिन क्या करती रहती हो?"

"सड़कों की नाप-जोख करती हूँ।"

"किस सड़क की पैमाइश कर ली?"

"मैं नाम याद नहीं रखती।"

"सड़कों पर ज़्यादा भी मत घूमा करो। अकेली सड़कों पर घूमने वाली औरतों को पता है विदेश में क्या कहते हैं?"

"क्या?"

"बाजारी औरत।" उमा ने हंसते हुए कहा।

मैंने कंपकपाते हुए रानो की तरफ देखा। उसका चेहरा अनजान सड़क की तरह बिल्कुल सपाट था जैसे उसे बात समझ में न आई हो।

"अच्छा, कहते होंगे।" वह शायद कोई और ही ख्यालों में गुम थी।

मैंने उमा को देखा। मुझे अजीब सा प्रतीत हुआ कि यह व्यक्ति किस हद तक निष्ठुर हो सकता है।, पत्थर दिल ।

उस वक़्त परिस्थिति की मांग थी कि मैं रानो का पक्ष लेते हुए उमा के साथ टकरा जाती क्योंकि वह भी मेरी जाति की एक औरत थी, फालतू औरतों के वंश की। परंतु फालतू औरतें लड़ा नहीं करतीं। लड़ने-झगड़ने का अधिकार तो केवल बीवियों को है। फालतू औरत के लिए मर्द के साथ झगड़ा करना जान-बूझकर कुएं में छलांग लगाने जैसा है। मगर मेरे अंदर चुप कर बैठी कमीनगी ने निर्णय लिया कि मेरा इरादा अभी आत्महत्या का नहीं है।

बहुत देर तक सब खामोश बैठे रहे।

"चलें?" उमा ने मेरी तरफ देखते हुए कहा।

"हूँ।" मैं चलने के लिए खड़ी हो गई।

रानो भी खड़ी हो गई।

"अगली बार जब चिट्ठी लिखो तो लिख देना कि साहनी चौथे या पांचवें दिन आकर बीस रुपये दे जाता है और मैं भूखी मर रही हूँ।"

"साहनी आता है?" उमा ने आश्चर्य से पूछा। (अपने दोस्त के खेत के रखवाले)

"वे उसे कह कर गए थे।"

रानो ने बंद किया दरवाजा खोल दिया। कमरे की उमस के बाद अंधेरे वीरान लॉन की हवा बड़ी अच्छी लगी, खुशगवार। सांस भी आसानी से लिया गया।

खामोशी से छोटे-छोटे कदमों से बंगले की दीवार के साथ-साथ चलते हम तीनों गेट पर पहुंच गए। बाहर वाली सड़क रोशनी में नहा रही थी।

हल्की हवा और रोशनी।

अलविदा कहकर हम वहां से चले आए।

रानो ने धीमे से कहा, "फिर दोबारा जल्दी आना।"

सड़क निःशब्द थी। इस तरफ आवाजाही बहुत कम थी। सड़क के दोनों ओर बड़े-बड़े पेड़ लगे थे, गहरे अंधेरे में लिपटे हुए, शायद जामुन के वृक्ष होंगे।

हल्की-हल्की हवा चल रही थी। हम धीरे-धीरे नर्म कदमों से चले जा रहे थे कि वृक्ष से धीमी धीमी सिसकियों की आवाज आती सुनाई दी।

"यह क्या है?...." मैं ठिठक कर खड़ी हो गई। असमंजस की दशा में शायद आतंकित हो गई।

"क्या?"

"कोई सिसकियां भर रहा है।"

"कहाँ?"

"कहीं नहीं..........

यह कहकर मैं चल पड़ी।

चीकू और उसका किचन सेट

(सिंधी, हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, पंजाबी, बांग्ला, उर्दू तथा
फिजियन भाषा की ज्ञाता, विभिन्न भाषाओं की अनुवादक
सिंधी अकादमी, दिल्ली सरकारी की पूर्व उपाध्यक्ष, भारत सरकार
संस्कृति मंत्रालय में निदेशक, संस्कृति संस्कृति दर्पण की सम्पादक)

मिसना चानू

अनुवादक - **मोहिनी हिंगोरानी**

मूल लेखक, अंग्रेजी भाषा दिल्ली, भारत
असम, भारत

चीकू पाँच साल का बच्चा था और थोइबी तथा मलम का सबसे छोटा बेटा था। गोरा रंग, गहरी काली आँखों वाला गोल-मटोल चीकू शुरू से ही बहुत होशियार था और उसकी याददाश्त भी बहुत तेज़ थी । जब वह सिर्फ़ ढाई साल का था, तब उसे अंग्रेज़ी में 20 से ज़्यादा और अपनी मातृभाषा मणिपुरी में लगभग 10 छोटी कविताएँ याद थीं और वह उन्हें जब अपनी मीठी तोतली बोली में हाथों के इशारों के साथ सुनाता था तो सबको बहुत प्यारा लगता था । उसने अंग्रेज़ी ए बी सी लिखना भी बहुत जल्दी सीख लिया था। तीन साल का होने से पहले ही वह सौ तक गिनती भी जानता था। दस साल की प्रिया उसकी बड़ी बहन थी और सात साल का प्रेम उसका बड़ा भाई था। चीकू, भाई-बहनों में सबसे छोटा होने के कारण, सभी को बहुत प्यारा लगता था। सच कहें तो, इसी वजह से वह थोड़ा ज़िद्दी भी हो गया था।

उसकी एक मौसी उसको प्यार से चीकू बुलाती थी। धीरे धीरे घर के सभी लोग और उसके दोस्त भी उसे "चीकू" कहकर बुलाने लगे लेकिन उसके नर्सरी स्कूल के रजिस्टर पर उसका नाम 'मीहेन' लिखा था। उसका परिवार भारत के एक शहर मुम्बई में एक किराए के फ्लैट में रहता था । चीकू के पिता मलम एक बहु-राष्ट्रीय कंपनी में काम करते थे। उसकी माँ 'थोइबी' अपनी मर्ज़ी से एक गृहिणी थीं। वह एक अच्छी शिक्षित महिला थीं, लेकिन उन्होंने बच्चों को किसी आया या डे केयर सेंटर में छोड़ने के बजाय घर पर रहकर उनकी देखभाल करना चुना ।

चीकू के दादू -दादी भारत के सुदूर पूर्वोत्तर में स्थित मणिपुर के एक गाँव में रहते थे।उसके दादू- दादी बूढ़े थे, इसलिए उनके लिए बार बार शहर आना मुश्किल था। इसके अलावा, उन्हें गाँव में रहना बहुत पसंद था क्योंकि वहाँ स्वच्छ हवा, बगीचे की ताज़ी सब्जियाँ, दोपहर और रात के खाने के लिए तालाब की मछलियां और दुख-सुख बांटने के लिए आस-पास बहुत सारे रिश्तेदार थे ।

चीकू अपने जन्म के बाद से अपने दादू दादी के साथ केवल दो बार ही मिला था। उसके माता-पिता के लिए भी अक्सर दादू-दादी से मिलने जाना मुश्किल था, क्योंकि परिवार के पाँचों सदस्यों का रेलगाड़ी का किराया और अन्य खर्च भी बहुत था, जबकि परिवार में केवल उसके पिता ही अकेले कमाने वाले थे। इसके अलावा, दादू- दादी से मिलने के लिए सही समय निकालना भी आसान काम नहीं था, क्योंकि बच्चों को स्कूल जाना होता था और उनके पिता को भी ऑफ़िस से लम्बी छुट्टी मिलना मुश्किल होता था ।

चीकू का पाँचवाँ जन्म दिन था और पाँच साल बाद उसके दादू-दादी उससे मिलने आए। पिछली बार वे चीकू के जन्म के समय आए थे। परिवार ने घर पर पड़ोस के बच्चों और उनके पिता के कुछ दोस्तों के परिवारों के साथ एक छोटी सी जन्मदिन की पार्टी की। उन्होंने घर को रंग-बिरंगे ग़ुब्बारों, लाल पीली हरी झंडियों तथा छोटी छोटी रंगीन बत्तियों की झालरों से सजाया। चीकू की मम्मी ने आलू की गोल गोल टिक्कीयाँ बनाई।

बाहर से पिज़्ज़ा भी मँगाया गया। बच्चों ने बहुत मस्ती की। चीकू ने अपने दादा-दादी और दोस्तों के साथ केक काटा और अपनी पाँचवीं सालगिरह का भरपूर आनंद लिया।

अगली सुबह, हमेशा की तरह, चीकू अपनी बहन और भाई के साथ खुशी खुशी उन सभी उपहारों को खोल रहा था जो उसे उसके जन्मदिन पर मिले थे। लेकिन जैसे ही चीकू ने आखिरी उपहार का डिब्बा खोला तो उसका मुँह बन गया और उसके चेहरे से उसकी प्यारी मुस्कान गायब हो गई।

उसकी बहन प्रिया ने हैरानी से पूछा,

"क्या हुआ, चीकू?

"क्या तुम्हें अपने जन्मदिन के सारे तोहफे पाकर खुशी नहीं हो रही?"

चीकू ने कोई जवाब नहीं दिया। फिर प्रिया ने पूछा,

"तुम इतने उदास क्यों लग रहे हो चीकू? क्या बात है?"

उस बार चीकू ने जवाब दिया,

"मैं उदास हूँ क्योंकि मुझे वह उपहार नहीं मिला जिसकी मुझे उम्मीद थी!"

प्रिया ने पूछा,

"लेकिन तुम्हें आखिर क्या चाहिए था, चीकू?"

प्रेम ने कहा,

"उसे तो जन्मदिन के तोहफे में बहुत सारे खिलौने मिले हैं, और मम्मी-पापा ने उसे रिमोट-कंट्रोल हेलीकॉप्टर भी दिलवाया है।"

उसने आगे कहा,

"मुझे नहीं पता इस लड़के को क्या दिक्कत है!"

"अगर मैं उसकी जगह होता, तो इतने सारे खिलौने पाकर मैं खुशी से उछल पड़ता; एक रिमोट-कंट्रोल कार, एक हेलीकॉप्टर, एवेंजर्स की मूर्तियाँ और भी बहुत कुछ।"

प्रिया ने प्रेम को चुप रहने को कहा। उसी समय, चीकू की माँ उस कमरे में आईं जहाँ बच्चे चीकू के जन्मदिन के तोहफों के बारे में बात कर रहे थे।

एक हाथ के तौलिये से हाथ पोंछते हुए थोइबी ने पूछा,

"क्या बात है बच्चों? क्या तुम्हें स्कूल के लिए देर नहीं हो रही?"

उन्होंने आगे कहा,

'तुम्हारी पानी की बोतलें और टिफिन के डिब्बे तुम्हारे स्कूल बैग में रखे हैं, और नाश्ता डाइनिंग टेबल पर लगा है। जाओ... जल्दी तैयार हो जाओ!"

थोइबी ने चीकू से पूछा,

"क्या बात है मेरे बेटे?"

"तुम इतने उदास क्यों लग रहे हो?"

उस बार चीकू ने गुस्से से जवाब दिया,

"क्योंकि मुझे मेरे जन्मदिन के उपहार में कोई किचन सेट नहीं मिला!"

प्रिया और प्रेम ज़ोर से हँसे, यह जानकर कि चीकू को अपने जन्मदिन के उपहार के रूप में किचन सेट मिलने की आशा थी।

उसी पल चीकू रोने लगा। फिर रुंआसी आवाज़ में उसने कहा,

"मम्मा, मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि मुझे अपनी दोस्त रिया की तरह खेलने के लिए एक किचन सेट चाहिए।"

प्रिया ने कहा,

"तुम्हारी दोस्त रिया एक लड़की है, और तुम एक लड़के हो, चीकू।"

"और लड़के किचन सेट से नहीं खेलते!"

प्रेम उसे चिढ़ाने लगा,

"चीकू एक लड़की है! चीकू लड़की है!"

थोइबी ने बच्चों को चुप कराया और कहा,

"सुनो बच्चों! ऐसी कोई बात नहीं है कि लड़के किचन सेट से नहीं खेल सकते और लड़कियाँ बंदूक या कारों के खिलौनों से नहीं खेल सकतीं!"

प्रिया ने कहा,

"लेकिन मम्मा, मैं कोई ऐसा लड़का नहीं जानती जो किचन सेट से खेलता हो।"

थोइबी ने जवाब दिया,

"सिर्फ इसलिए कि तुम कुछ नहीं देखतीं, इसका मतलब यह नहीं कि वह कहीं होता नहीं।"

"और यह तय करना कि लड़कों और लड़कियों को किससे खेलना चाहिए, यह भी एक तरह का भेदभाव है। यह कुछ ऐसा है जिसे हमें करना बंद कर देना चाहिए।"

"कहा जाता है कि शिक्षा घर से शुरू होती है।"

"नैतिक शिक्षा भी विज्ञान या कला की तरह ही महत्वपूर्ण है।"

उन्होंने आगे कहा,

"इसके अलावा, हर किसी को खाना बनाना सीखना चाहिए, चाहे वह लड़का हो या लड़की, अपने भले के लिए।"

"याद रखो मेरे बच्चों, हम इसलिए खाना नहीं बनाते क्योंकि हम महिलाएँ हैं या पुरुष, बल्कि हम खाना इसलिए बनाते हैं क्योंकि हमें भूख लगती है और हमें खाने की ज़रूरत होती है।"

"और लड़कों का किचन सेट से खेलना या पुरुषों का रसोई में खाना बनाना बिल्कुल भी गलत नहीं है।"

फिर थोइबी ने चीकू को आश्वासन दिया कि उसके पिता स्कूल से आने से पहले उसके लिए किचन सेट ले आएँगे। उस पल चीकू के चेहरे पर मुस्कुराहट फ़ैल गई और उसने अपनी माँ को गले लगा लिया।

चीकू की दादी ने वह सब सुन लिया जो थोइबी बच्चों को बता रही थीं और उन्हें यह विचार पसंद नहीं आया। वह एक शिक्षित और कामकाजी महिला थीं। जब वह जवान थीं, तो उन्होंने गाँव के एक स्कूल में

शिक्षिका के रूप में काम किया था। फिर भी, यह पीढ़ी के अंतर या समाज की पुरानी मान्यताओं के कारण है कि लोग वही सोचते हैं जो समाज उन्हें सोचने पर मजबूर करता है। हालाँकि चीकू की दादी नहीं चाहती थीं कि चीकू किचन सेट से खेले या लड़के खाना बनाना सीखें, फिर भी वह चीकू को उदास नहीं देख सकती थीं। इसीलिए उन्होंने अपनी बहू का विरोध नहीं किया। इसलिए, वह कुछ बड़बड़ाती हुई रसोई में चली गईं।

जब चीकू स्कूल से वापस आया, तो उसे अपनी माँ के वादे के अनुसार उसका किचन सेट मिल गया। वह बहुत खुश था। उसने अपनी माँ को धन्यवाद दिया और जैसे ही उसने स्कूल की वर्दी उतारी, वह किचन सेट से खेलने लगा।

दो घंटे बाद, चीकू की बहन और भाई हमेशा की तरह अपनी स्कूल बस से स्कूल से लौटे। वे अपने फ़्लैट से दूर दूसरे स्कूल में पढ़ते थे, जोकि चीकू के स्कूल के विपरीत दिशा में था। लेकिन चीकू अभी भी लिविंग रूम में अपने किचन सेट के साथ खेल रहा था और अलग-अलग व्यंजन बनाने का नाटक कर रहा था। उसकी दादी और दादा भी उसी कमरे में टीवी देख रहे थे।

सोफे पर बैठी प्रिया चीकू को मज़े से खेलते हुए देख रही थी।

फिर प्रिया ने पूछा,

"चीकू, जब तुम बड़े हो जाओगे तो क्या बनना चाहोगे?"

चीकू ने तुरंत जवाब दिया,

"मैं एक शेफ (रसोइया) बनना चाहता हूँ"

"और मैं तुम्हारे लिए, मम्मा, पापा, दादू और दादा के लिए स्वादिष्ट व्यंजन बनाऊँगा!"

प्रिया जब यह सुनकर हँस पड़ी। चीकू के दादा और दादी ने एक-दूसरे की ओर देखा और मुस्कुरा दिए।

धूप-छाँव

(मूल उर्दू कहानी का हिन्दी अनुवाद)

असरार गांधी
मूल लेखक एवं अनुवादक
प्रख्यात साहित्यकार - हिन्दी एवं उर्दू भाषा, प्रयागराज, भारत

वह अपना घर छोड़कर ओल्ड एज होम आ गया था और उसके दिन आँसुओं से भर गए थे। पिछले पचास वर्षों की जिंदगी भूलना इतना आसान नहीं था। हर पल कुछ न कुछ बातें उसके दिल और दिमाग में सूई की तरह तैरती रहतीं और उसका पूरा अस्तित्व छलनी हो कर रह जाता।

किसी ने दरवाजा खटखटाया तो उसे बिस्तर छोड़कर उठना पड़ा।

बाहर होम का नौकर खड़ा था।

"क्या बात है?" वह नौकर को देखते हुए बोला।

"चाय का समय है, आप मेसों में आकर चाय पी लीजिए।"

"चलो, मैं आता हूँ।" वह कपड़े बदलकर मेस की तरफ चल पड़ा।

बड़ी हरी-भरी जगह पर था यह होम। यहां के लोग बड़े नरम-मिजाज थे। बहुत ही प्रेम से बातें करते, हर तरह का ख्याल रखते, शायद उन्हें ऐसी ट्रेनिंग ही दी गई थी।

उसने मेस में चाय पी और बाहर आकर लॉन में रखी हुई एक आराम कुर्सी पर बैठ गया। लॉन पर और भी कई लोग बैठे थे जिन्हें वह नहीं जानता था क्योंकि उसे यहां आए हुए अभी कुछ ही दिन हुए थे।

लॉन पर मखमली घास फैली हुई थी और वहां कतार में रखे गमलों में खूबसूरत फूल खिले हुए थे। शायद होम को इसलिए भी खूबसूरत बनाया गया होगा ताकि अकेलेपन के शिकार ये बुजुर्ग खुद को इस खूबसूरती का हिस्सा बना लें और उनका वक्त आसानी से कट सके।

लेकिन उस वक्त उसे यह खूबसूरती भी मानसिक शांति नहीं दे सकी।

उसे अपना घर याद आ रहा था। घर के लोग याद आ रहे थे। वे लोग जिन्होंने उसे यहां आने दिया और उसके घर छोड़कर इस होम में आ जाने के संबंध में पूरी तरह चुप्पी साध ली थी। शायद उन्हें इस तरह उसका यहां आना अच्छा लगा हो। शायद वे लोग यही चाहते भी थे कि वह उनकी मर्जी के अनुसार जीवित न रह सकता था।

उसने नजर उठाकर लॉन की ओर देखा जहां कई लोग आपस में मिलकर हंसी-मजाक कर रहे थे। ये लोग भी तो यूं ही यहां नहीं आए होंगे। उनकी भी घर छोड़ने की मजबूरियां रही होंगी। किसकी औलाद कब हुई है अपने बूढ़े मां-बाप की। लेकिन उसके बच्चे तो अपनी मां के हो गए। उसे वे बातें याद आईं, "देखो, तुम्हारे बाप ने मुझे बहुत परेशान किया है। मैंने तुम्हारे लिए बड़ा जुल्म सहा है।" बड़े होते हुए बच्चे अपनी माँ की बातों पर यकीन कर लेते और उनकी आंखों में नफरत के साए लहराने लगते।

उसने सोचा कांश उसने भी अपने बच्चों को सच बताने की कोशिश की होती लेकिन फिर यह सोचकर चुप हो जाता कि बड़े होकर ये अपने आप ही सच जान जाएंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। बच्चे वैसे के वैसे रह गए। उसे सोचना चाहिए था कि जब औलादें जवान हो जाती है तो मांएं अपने पति के सामने खड़ी होने लगती हैं।

और अब वह इस ओल्ड एज होम में था, जो बड़ी हरी-भरी जगह पर बनाया गया था और यहां उसके जैसे कितने लोग धीरे-धीरे आने वाली मौत का इंतजार कर रहे थे।

वह लॉन से उठा और अपने कमरे में आ गया। बिस्तर पर लेटते ही बहुत सी यादों और आवाजों ने उसे घेर लिया। उसे याद आया कि वह अपनी बेटी से कितना प्यार करता है, लेकिन बेटी का बेपरवाही वाला रवैया हमेशा उसके अस्तित्व को टुकड़ों में बांट देता। कई बार वह सोचता कि आखिर उसका क्या कसूर है। फिर उसे अपने अंदर से आती हुई एक आवाज सुनाई देती कि इन परेशानियों के जिम्मेदार तो तुम खुद हो। तुमने ही तो अपने अस्तित्व को एक साउंड प्रूफ कमरे में बंद कर लिया था। इन दिनों क्या तुमने कभी अपने बच्चों के बारे में भी सोचा? वह उस आवाज को सुनकर डर जाता।

उसने सोचा कि कितनी खामोशी से ज़्यादातर दोस्त दूर होते चले गए और वह अकेला होता चला गया। सिर्फ एक सादिका ही थी जो अब भी उसकी दुखों को समझने वाली थी।

सादिका जो एक जानी-मानी पेंटर थी। शायद वह सादिका ही थी, नहीं निश्चित रूप से वह सादिका ही थी जिसने पहली मुलाकात के कुछ दिनों बाद उसका हाथ अपने हाथों में लेते हुए कहा था -

"अपने ऊपर लादी गई एक लंबी और बेहद गहरी नींद हारे हुए इंसान के लिए होती है, इस सोच से बाहर आओ। जिंदगी बहुत खूबसूरत होती है. मैं तुम्हारे साथ हूँ।"

फिर वह सचमुच उन दिनों से बाहर आ गया था, जो आँसुओं से भरे थे। कितने दिनों बाद गर्मजोशी के साथ वे दिन लौटे थे। एक अलग सा एहसास, एक अलग सी खुशबू लिए हुए। अचानक फिर किसी ने दरवाजा खटखटाया तो वह चौंक पड़ा और उसकी सोच के परिंदे उड़ गए। वह झुंझलाकर उठा और दरवाजा खोलकर देखा तो होम का एक चपरासी खड़ा था। उसने काट खाने वाले अंदाज में पूछा, "क्या है?"

'साहब शाम को लॉन पर एक जरूरी मीटिंग है, आप इसमें जरूर आइए।"

चपरासी चला गया और उसने बड़बड़ाते हुए दरवाजा बंद किया। फिर बिस्तर पर आकर दोबारा लेट गया और यादों की पगडंडी फिर से रोशन हो गई।

उसने सोचा कि उसने सादिका को पहली बार कब देखा था. फिर उसे तुरंत याद आया कि वह उसे पहली बार एक पेंटिंग की प्रदर्शनी में मिली थी।

उस दिन वह यूं ही इधर-उधर टहल रहा था कि उसकी नज़र उस हॉल पर पड़ी जहां पेंटिंग्स की एक प्रदर्शनी लगी हुई थी। वह हॉल में दाखिल हो गया।

हॉल में बड़े सलीके से पेंटिंग्स लगाई गई थीं। वह चित्रकला के खूबसूरत नमूनों को देखते हुए उस तक पहुंचा था।

उसने बहुत खूबसूरत रंगों में अपनी पेंटिंग्स बनाई थीं। वह कुछ पल वहां रुका रहा, फिर पेंटिंग्स से नजरें हटाकर उसकी ओर देखा। यह कहना उसके लिए मुश्किल था कि वह ज्यादा खूबसूरत थी या उसकी बनाई हुई वे तस्वीरें।

उसने अपने कदम आगे बढ़ाए ही थे कि वह उसके करीब आकर धीरे से बोली, "पेंटिंग्स कैसी लगी?"

"बहुत खूबसूरत बनाई है आपने ये पेंटिंग्स। लेकिन अगर आप इन पेंटिंग्स से थोडा दूर हटकर खड़ी होंगी तो ये पेंटिंग्स और भी ज्यादा हसीन नजर आने लगेगी।"

वह शरमा गई।

वह भी मुस्कुराता हुआ आगे बढ़ गया, लेकिन उसने महसूस किया कि जैसे उसके अंदर कोई चीज कहीं ठहर गई हो।

अगली मुलाकात भी ऐसी ही एक दूसरी प्रदर्शनी में हुई थी। उस दिन वह उसे हॉल के दरवाजे पर ही मिल गई थी।

"आप" वह उसे देखता हुआ बोला।

"हाँ, मैं सादिका हूँ।"

"बहुत अच्छा लगा आपसे मिलकर।"

"मुझे भी।"

"आज आपकी पेंटिंग्स?"

"मैं आज सिर्फ दूसरों की रचनाओं का आनंद लेने आई हूँ।"

"आपने अच्छा किया।"

क्यों?"

"आज आपको देखकर आपकी पेंटिंग्स और भी शर्मिंदा हो जातीं।"

वह उसे देखकर मुस्कुराई, "धन्यवाद।"

"चलिए, यहाँ लगे हुए चित्रकला के नमूनों को देखा जाए। "वह धीरे से फिर बोली।

'डॉ. चलिए, आपके साथ इन पेंटिंग्स को देखने का मजा कुछ और ही होगा। वरना मुझे रंगों के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं है।"

फिर वह उसे देर तक इन तस्वीरों की बारीकियां समझाती रही।

"क्या आप मेरे साथ कहीं बैठकर एक कप कॉफी पीना पसंद करेंगी?" अचानक वह उसकी आँखों में झांकता हुआ बोला।

थोड़ी सी हिचकिचाहट के बाद वह तैयार हो गई।

कुछ देर बाद वे एक खूबसूरत से रेस्टोरेंट महफिल में बैठे हुए थे।

कॉफी का घूंट लेते हुए सादिका बोली, "क्या आपको भी पेंटिंग्स बनाने का शौक है या सिर्फ देखने तक सीमित है?"

'सिर्फ देखने तक ही। दरअसल, पेंटिंग्स मेरे अंदर मौजूद सौंदर्यबोध को संतुष्ट करती हैं और यह बात सिर्फ पेंटिंग्स तक ही सीमित नहीं है बल्कि वह अचानक चुप हो कर उसे देखने लगा और अपनी बात अधूरी छोड़ दी।

उसने सादिका के अंदर कुछ हलचल सी महसूस की।

सादिका चुपचाप हॉल का जायजा ले रही थी। हर टेबल पर एक लैंप लटका हुआ था. जिसकी रोशनी एक छोटे से घेरे तक ही सीमित थी। इन मेजों के अलावा हॉल में हर तरफ एक रहस्यमय सा अंधकार फैला हुआ था।

"आप कौन सा परफ्यूम इस्तेमाल करती है? बड़ी मदमस्त खुशबू है, काफी रोमांचक।"

उसकी आवाज सुनकर वह चौंक गई।

'यह आपका भ्रम है, मैं परफ्यूम कभी इस्तेमाल नहीं करती।" वह बड़े गरिमापूर्ण अंदाज में बोली।

वह झिझक गया, लेकिन उसे आश्चर्य जरूर हुआ कि उसने सच में खशबू महसूस की थी।

कॉफी खत्म करने के बाद वह धीरे से बोली, "चलिये चलते हैं।"

चलिये। वह भी उठ खड़ा हुआ।

काउंटर पर बिल दे कर वे महफिल से बाहर निकल आए।

वह अपनी कार की तरफ बढ़ते हुए बोला, "आपको कहां ड्रॉप कर दूं?"

"कहीं भी नहीं, मैं चली जाऊंगी।"

उसके कई बार कहने के बावजूद वह नहीं मानी और एक रिक्शा लेकर अपने घर की ओर चल दीI

न जाने क्यों उसे एक शर्मिंदगी का एहसास हुआ। फिर एक लंबी सांस लेते हुए उसने अपनी कार स्टार्ट की और आगे बढ़ गया।

अचानक उसने एक झुरझुरी सी ली और अतीत से वर्तमान में आ गया। उसने उठकर फ्रिज से ठंडे पानी की एक बोतल निकाली और गिलास में डालकर पीने लगा। फिर वह आकर बिस्तर पर बैठ गया और आंखें बंद कर ली, आखें बंद करते ही अतीत फिर से लौट आया।

उस दिन सुबह-सुबह उसका फोन आया था। 'क्या कर रहे हैं आप?"

"कुछ नहीं, बस बीते दिनों की याद।" वह कुछ उदास से लहजे में बोला।

'एक बात जानना चाहती हूँ, बताएंगे आप?"

"आपकी बात सुनकर ही कुछ कह सकता हूँ।'

"दरअसल, मैं आपकी निजी जिंदगी में थोड़ा दखल देना चाहती हूँ।"

'पूछिए, आपको पूरा अधिकार है।"

'मैंने कई बार महसूस किया है कि आप बात करते-करते कहीं खो जाते हैं और आपकी नीली-नीली रोशन आंखें अचानक बुझ सी जाती हैं।"

एक पल के लिए गहरी चुप्पी छा गई।

"आज मौसम बहुत अच्छा है।" वह धीरे से बोला।

'शायद आप मेरी बात का जवाब नहीं देना चाहते।"

कुछ देर चुप रहने के बाद वह धीरे से बोला, "अगर आपको एक दिन यह पता चले कि आपके बच्चे आपके लिए नहीं बल्कि मां के लिए हैं और अगर बच्चों की आंखों में कभी आपके लिए प्यार के दीपक जले ही नहीं तो आप क्या महसूस करेंगी? जैसे ही मुझे इन बातों का ख्याल आता है, मेरी बेबसी मेरी आंखों की रोशनी को बुझा देती है।" उसके लहजे में गहरा दुख था।

'सॉरी, मेरा सवाल आपको उदास कर गया।" वह धीमे से बोली।

"नहीं, कोई बात नहीं. मुझे बार-बार इस हालत से गुजरना पड़ता है. यह तो मेरी जिदगी का एक हिस्सा बन गया है। जिंदगी की सच्चाइयों की तरफ मेरी बेपरवाही मुझे यहाँ लेकर आई है। मैं किसी को दोष नहीं देता लेकिन उतनी बड़ी सजा का हकदार भी तो नहीं था। उसके लहजे में थरथराहट थी।

'काश! मैं आपके लिए कुछ कर पाती।"

'मैं जानता हूँ कि आपकी अपनी फैमिली है, जिम्मेदारियां है। आप कुछ करना चाहें भी तो नहीं कर सकतीं।"

'देखिए मैं फिर उसने अपनी बात पूरी किए बिना फोन काट दिया।

उसके लहजे में बड़ी कंपकपाहट थी।

उसे पता था कि वह बहुत भावुक है।

यादों का कारवां अब भी चला जा रहा था।

उस दिन किसी ने बहुत जोर से उसका दरवाजा भड़भडाया था और उसकी नींद टूट गई थी। वह दांत पीसता हुआ उठा और दरवाजा खोलकर देखा तो काशिफ सामने खड़ा था।

'क्या बात है. इतनी जोर से दरवाजा क्यों भड़भड़ा रहे हो?" वह गुस्से में बोला. फिर अगले ही पल सामान्य हो गया।

"सॉरी काशिफ, आओ आओ! मैं नींद में डूबा था, अचानक इस तरह उठना.......”

"चलो कोई बात नहीं। क्या रात देर से सोए थे?"

"हाँ, पता नहीं क्यो रात देर से नीद आई।"

"क्यों? क्या कोई बात हुई?"

"नहीं, बस किसी के फोन का इंतजार था। नहीं आया तो कुछ उलझन सी हुई और नींद किसी लंबे टैक्सी की ओर उड़ान भर गई।"

"तुम तो नींद की गोलिया भी लेते हो?"

"हाँ, मगर कभी-कभी वे भी काम नहीं करती। मैं शायद थोडा ज्यादा ही संवेदनशील हो गया हूँ।

"यह ठीक नहीं है। वैसे इस वक्त तुम्हारे घर में सन्नाटा छाया हुआ है। क्या कोई नहीं है?"

'हाँ, सब मुंबई गए हुए हैं।"

"क्यों?"

'बस यूं ही घूमने के लिए।"

"यह क्या बात हुई. तुम्हें अकेला छोड़कर मनोरंजन के लिए मुंबई चले गए, उन्हें पता है कि तुम दिल के मरीज हो।"

"मैं अकेला कहाँ हूँ।"

"कौन है तुम्हारे साथ?" काशिफ ने फिर सवाल किया।

उसने आसमान की ओर देखा, मुस्कुराया, फिर धीरे से बोला, "कोई और भी है, जिसे हर वक्त मेरा ख्याल रहता है। नाश्ता किया, खाना खाया, तबियत कैसी है, आराम करो, कहीं घूम आओ। ये और ऐसी कई बातें. वह मुझे जीने का हौसला देती हैं, वरना शायद अब तक..... वह चुप हो गया और आँखें बंद करके जल्दी-जल्दी सांस लेने लगा।

काशिफ उसे ध्यान से देखते हुए बोला, "अच्छा चलो उठो, मोहल्ले के किसी चायखाने में चाय पीते हैं, बातें बाद में करेंगे।"

चाय पीकर वे वापस आ गए।

'तुम आज फ्री तो हो?" काशिफ कुर्सी पर बैठते हुए बोला।

'नहीं यार, इस जिन्दगी में फुर्सत कहाँ। आज मुझे दो मीटिंग्स में शामिल होना है और एक रैली में हिस्सा लेना है।"

'लानत है तुम्हारी इस व्यस्त जिन्दगी पर, कभी फुर्सत ही नहीं होती। सोशल एक्टिविस्ट होना भी एक तरह का जुनून है। नहीं, आज तुम कहीं नहीं जाओगे। मेरे साथ रहोगे। चलो बच्चों के लिए कुछ खरीदारी करेंगे, फिर कहीं खाना खाकर ट्रीट में कॉफी पीयेंगे।"

"और जो मैं सभी से वादे कर चुका हूँ, उसका क्या होगा?"

'सबसे माफी मांग लो। कह दो, तबियत ठीक नहीं है।"

वह काशिफ की जिद के आगे झुक गया।

घर से निकलते समय उसने दीवार घड़ी की ओर देखा तो बारह बज रहे थे। थोड़ी देर बाद वे सिविल लाइंस के एक पाश मार्केट में स्टेशनरी की एक दुकान पर थे।

'यहाँ क्या काम है?" वह काशिफ की तरफ देखकर बोला।

'बच्चों के लिए पेंसिल, रबर, गम और रंग खरीदने हैं।"

'चलो." वह दुकान में जाते हुए बोला।

"अरे तुम!" अचानक उसकी जुबान से निकला।

वह पलटा तो उसकी आँखों में भी हैरानी थी।

"यहाँ कैसे?"

'बस बच्चों के लिए कुछ चीजें लेने आई थी।"

अचानक उसे काशिफ की याद आई जो रंगों के चयन में व्यस्त था।

"काशिफ, इधर आओ," उसने आवाज लगाई।

काशिफ आया तो वह बोला, "इनसे मिलो.

उसके पहले कि वह कुछ कहता, वह खुद बोल पड़ी, "मै सादिका हूँ।"

"यह काशिफ है, मेरा दोस्त।"

कुछ देर तक औपचारिक बातें हुई, फिर सादिका चली गई और वे एक रेस्टोरेंट में खाना खाने के बाद ट्रीट में कॉफी के लिए पहुँचे तो हॉल लगभग भरा हुआ था।

वह काशिफ को लेकर एक खाली मेज पर पहुंच गया। उसे देखकर कई लोगों ने सलाम के लिए हाथ उठाए और वह गर्दन के इशारे से सबको जवाब देता रहा।

उसे काशिफ कुछ बेचैन सा लगा।

"क्या बात है, तुम कुछ कहना चाहते हो?" तुम्हारे साथ

'डॉ. बस यही कि सादिका की आँखें इतनी जानलेवा है और तुम अभी तक जिंदा हो।"

वह हंस पड़ा, फिर बोला.

'कभी उसके सामने उसकी खूबसूरती की तारीफ मत कर देना, वरना वह नाराज हो जाएगी और सलाम-दुआ भी बंद कर देगी। एक बार किसी के साथ ऐसा हो चुका है।"

काशिफ उसे हैरानी से देखने लगा।

"काशिफ, आज तुमने बड़ी गड़बड़ कर दी। मीटिंग्स में मेरा जाना जरूरी था।"

कुछ पल के लिए सन्नाटा छा गया। फिर काशिफ गंभीर स्वर में बोला,

"कोई गड़बड़ी नहीं की। मुझे पता है तुमने अपनी जिन्दगी इतनी व्यस्त क्यों कर ली है। तुम घर के अंदर चल रही उन आवाजों से बचना चाहते हो जो तुम्हारे पूरे अस्तित्व में सूईयों की तरह चुभती हैं। तुम्हारी व्यस्तता तुम्हारे लिए भागने का एक रास्ता है।"

वह बुरी तरह तिलमिला गया, लेकिन कुछ कहा नहीं।

वह डॉल का जायजा लेने लगा। अचानक उसकी नजर उस कलाकार पर पड़ी जो सादिका पर मेहरबान था। उसके चेहरे पर मुस्कान फैल गई। उसने सोचा कि हर किसी को यह हक है कि वह किसी को भी पसंद कर सके। यह अलग बात है कि उसकी पसंद को दूसरा व्यक्ति कैसे लेता है। उसे पता था कि सादिका उसे पसंद नहीं करती।

फिर वह उठ खड़े हुए।

ट्रीट से निकलते समय उनके रास्ते अलग थे।

मोबाइल की आवाज से वह फिर चौंक पड़ा और यादें कहीं दूर चली गई।

कॉल सादिका की थी। उसके चेहरे पर चमक लौट आई।

"हेलो सादिका." वह धीरे से बोला।

"कैसे हैं आप?"

बस ठीक हूँ। तुम कहीं से फुर्सत निकालकर आ जाओ तो बिल्कुल ठीक हो सकता हूँ।"

"आज तो बहुत व्यस्त हूँ, घर पर कुछ मेहमान आने वाले हैं। बच्चों के लिए शॉपिंग करनी है,

चाहकर भी आना मुश्किल है।" वह चुप रहा, जैसे बुझ सा गया हो।

मैं वादा करती हूँ कि कल जरूर आऊंगी। ठीक है न?"

'चलो कोई बात नहीं, यह भी करके देखते हैं।"

अगले दिन वह सचमुच उसके पास आ गई। I

"मैं आ गई। बोलो अब तो खुश हो ना?

वह कुछ बोला नहीं, आँखों में देखते हुए उसके गले में अपनी बाँहें डाल दी। यह उसकी बाँहें हटाते हुए बोली,

"दवा खाई?"

"हाँ, जीना है तो दवा खानी ही पड़ेगी।" वह धीरे से बोला।

"आप लेट जाइए और फिर आराम से बातें कीजिए।"

"बस मैं ठीक हूँ। दिन भर लेटा ही रहता हूँ।"

सादिका के आग्रह पर यह लेट गया।

"सादिका, अगर तुम न होती तो मैं अब तक अपनी कब्र में कंकाल बन चुका होता।"

"फिर वही बातें, आप मुझे रुलाना चाहते हैं क्या?"

"सारी-सारी मैं अब ऐसी बातें नहीं करूँगा, खुश?"

वह मुस्कुराई फिर उसके बालों को अपनी उँगलियों से सँवारने लगी।

उसने अपनी आँखें बंद कर ली।

"अरे हाँ, एक बात तो बताना भूल ही गई, मैं कुछ दिनों के लिए बाहर जा रही हूँ।"

"क्यों, कहाँ जा रही हो?"

"वह क्या है कि, दिल्ली में अंतरराष्ट्रीय स्तर का एक आर्ट फेस्टिवल हो रहा है। मुझे भी अपनी पेंटिंग्स लगाने की दावत मिली है।"

"अरे वाह, क्या बात है!"

वह बिस्तर से उठा और सादिका को जोर से गले लगा लिया।

"सादिका, यह तुम्हारे लिए बड़ी सफलता है। मैं बहुत खुश हूँ।" वह फिर बिस्तर पर बैठते हुए बोला। अचानक उसने महसूस किया कि सादिका की चमकदार आँखें बुझ सी गई हैं और उसके चेहरे पर एक उदासी छा गई है।

"अरे क्या बात है. तुम उदास क्यों हो गई? तुम्हें तो इस समय बेहद खुश होना चाहिए था।"

"कोई बात नहीं, बस मैं अब चलती हूँ।"

"नहीं, तुम अभी थोड़ी देर और रुको और मुझे बताओ क्या बात है?"

"कुछ खास नहीं, बस मैं यह सोच रही थी कि कभी मेरी सफलताओं पर मेरे पति ने ऐसी खुशी क्यों नहीं जताई। वह केवल 'भाई वाह' तक क्यों सीमित है? उसने कभी मेरे अंदर छुपे हुए कलाकार तक पहुँचने की कोशिश क्यों नहीं की?" वह बोलते-बोलते चुप हो गई।

"देखो सादिका, हालात को समझने की कोशिश करो, वह कॉर्पोरेट लाइफ का आदमी है. उसके लिए आर्थिक फायदे ही सब कुछ हैं। उसने तुम्हारे जीने के लिए सारी सुविधाएँ जुटा दी हैं। उसके हिसाब से तुम्हारे लिए यही काफी है। उससे दार्शनिक रवैये की उम्मीद रखना बेवकूफी है. तुम्हें अब तक यह बात समझ लेनी चाहिए थी।"

"आप ठीक कहते हैं, उसके यहाँ खूबसूरती का मतलब सिर्फ मेरे चेहरे तक ही सीमित है और बस।"

'हाँ, मैं तुम्हारे लिए हूँ और जब तक जिंदा हूँ तुम्हारे लिए रहूँगा। मैं जानता हूँ कि मेरी जिन्दगी में तुम उन्हीं मानसिक सुकून के लिए आई हो और शायद तुम खुश भी हो।"

वह चुप होकर उसे देखने लगा। वह अपनी जगह से उठी और उसके माथे को चूमकर बोली, "अच्छा चलते हैं, काफी देर हो गई, फिर मिलते हैं।"

फिर सादिका के लाख मना करने के बावजूद वह उसे गेट तक छोड़ने आया। जब वह अपने कमरे की ओर लौट रहा था तो उसने अपने पैरों में कपकंपी महसूस हो रही थी। उसने सोचा कि कल अपना चेकअप जरूर कराएगा, नहीं तो हो सकता है कि यह और बीमार पड़ जाए।

इस वृद्धाश्रम में उसे आए लगभग एक साल होने वाले थे। घर से कई बार फोन आए लेकिन उसने रिसीव नहीं किया। वह भावनात्मक तौर पर ब्लैकमेल नहीं होना चाहता था। उसने अपनी एक दिनचर्या बना ली थी। दिन में कॉफी हाउस और शाम को होम में रहने वालों के साथ गपशप या फिर उन दोस्तों से मिलना जो अब भी उससे मिलने के लिए आते रहते थे।

सादिका तो बराबर आती ही रहती थी। वह जब भी आती उसे जीने का हौसला देती। उसे सादिका के साथ बिताए हुए पल जिंदगी का असली मतलब लगते।

आज भी वह आई थी। देर तक उसके साथ रही, प्यार भरी बातें, हँसी-मजाक और पेंटिंग्स के बारे में कई बातें हुई।

कमरे के बाहर सूरज डूब चुका था। लोग लॉन पर बैठकर गपशप कर रहे थे। आज वह कमरे के बाहर नहीं निकला। जाने क्यों आज वह एक अजीब सी हालत महसूस कर रहा था। उसे अपनी बेटी मोना याद आ रही

थी. वही मोना जो उसकी मोहब्बतों और दुलार का केन्द्र रही है और वही मोना जो हर पल उसके साथ बेपरवाह रवैया अपनाती रही है। उससे बातें करते समय उसका व्यवहार कितना ठंडा-ठंडा होता है। कितना जहर भर दिया गया है उसकी नसों में, उसने सोचा।

फिर उसे याद आया कि उसे जल्दी सो जाना चाहिए, नहीं तो उसकी तबियत और खराब हो सकती है। वह उठा और अलमारी में रखी नींद की गोलियों का नया पैक खोलकर दो गोलियाँ निकालकर एक गिलास पानी के साथ निगल गया।

वह आकर अपने बिस्तर पर लेट गया और आँखें बंद करके नींद का इंतजार करने लगा। थोड़ी देर बाद उसने महसूस किया कि नींद अभी भी दूर है। वह सोने के लिए बेचैन था। फिर उठा और नींद की गोलियों वाली शीशी से दो गोलियाँ फिर निकालीं और पानी के साथ निगल गया। इस बार वह गोलियों वाली शीशी को अलमारी में रखने के बजाय अपने साथ बिस्तर पर ले आया था। कोई दो घंटे बाद भी उसे नींद नहीं आई। उसका डिप्रेशन बढ़ने लगा था. उसने शीशी से फिर तीन-चार गोलियाँ निकालीं और एक झटके में सब खा गया। गोलियाँ खाकर पानी पीते समय उसकी नजर दरवाजे पर पड़ी तो देखा कि दरवाजे की कुंडी खुली हुई है। उसने सोचा कि अभी उठकर बंद कर देगा।

रात के दो बज चुके थे लेकिन नींद का कहीं पता नहीं था। उसकी झुंझलाइट अपने पूरे चरम पर पहुंच गई थी। वह अचानक उठा और शीशी से सारी गोलियाँ एक साथ निकालकर निगल गया।

कुछ देर बाद उसे नींद आ गई।

अगले दिन सादिका दोपहर के बाद आई और दरवाजा खटखटाने के लिए दरवाजे पर हाथ रखा तो दरवाजा खुल गया। उसे बहुत आश्चर्य हुआ कि वह अभी तक सो रहा था। उसने उसका हाथ छुआ तो वह बर्फ की तरह ठंडा था। उसने जल्दी से उसकी माथा छुआ तो वह भी बिल्कुल ठंडा था, यही हाल पैरों का भी था।

सादिका को लगा जैसे वह खुद भी बर्फ बनती जा रही है।

वह जोर से चीखी। होम के सभी लोग एकत्र हो गए और उसे लेकर तुरंत अस्पताल भागे। कई डॉक्टरों ने चेकअप किया लेकिन अब वहाँ था ही क्या? वह कभी न टूटने वाली लंबी नींद सो चुका था।

सादिका उससे गले लगाकर बिलख-बिलख कर रो रही थी।

पोस्टमार्टम के बाद उसी शाम उसके दोस्तों की मौजूदगी में उसे दफन कर दिया गया और उसकी वसीयत के मुताबिक उसके घर वालों को उसकी मौत की सूचना नहीं दी गई थी।

प्रतिशोध

(उर्दू से अनूदित)

जी. डी. चंदन
मूल लेखक
दिल्ली, भारत दिल्ली, भारत

अनुवादक - **डॉ. रख़्शंदा रूही मेहदी**
शिक्षाविद्, हिंदी एवं उर्दू कथा लेखिका

अशोक ने उसकी तरफ़ पीठ मोड़ ली और पूर्णिमा की रात को कमला के बिस्तर पर अँधेरा हो गया।

अभी शाम तक उन दोनों में झगड़ा हो रहा था जिसके दौरान कमला ने अशोक को खरी-खोटी सुनाई थी लेकिन बाद में उसे गुमसुम देखकर वह कुछ घबरा गई और अपने कहे-सुने की माफ़ी माँग ली थी।

अशोक जब रात की सैर से वापिस आया तो कमला खुले बालों पर रिबन बांधे सफ़ेद रेशमी ब्लाउज और हल्का स्लेटी पेटीकोट पहने साफ़ बिस्तर पर लेटी हुई थी। ज्यों ही अशोक कुछ गुनगुनाता हुआ दाखिल हुआ कमला ने उसे हाथ से थाम कर पास बैठा लिया।

"ये ब्लाउज़ देखा तुमने?" कमला ने उसे आकर्षित करते हुए कहा।

"हूँ....." अशोक ने हुंकार भरी।

"ये उसी साटन का है जो तुमने पिछले हफ्ते खरीद कर दी थी।"

"हूँ....."

"कितनी प्यारी चाँदनी है।" कमला ने उसके दिल में उतरने की कोशिश की।

"हूँ.....।" अशोक ने उसी बेदिली से जवाब दिया।

"ऐसे वक़्त में तुम्हें बाहर जाने की क्या सूझती है।"

"जी हाँ ये मेरे लिए जरूरी है।"

"क्या जरूरी है।"

"रात की सैर।"

"सुबह सैर, शाम को सैर, रात को सैर। ये हर वक़्त घूमते रहने से क्या मिलता ?"

"ख़्यालों की कलियाँ, यादों की तस्वीरें, सपनों की बहार।"

"क्या मतलब ?"

"तुम नहीं समझ सकतीं।"

“मैं नहीं समझ सकती।”

“हाँ......।”

“मैं खूब समझती हूँ कि तुम्हारे ख़्यालों में कौन है, यादों में कौन है, सपनों में कौन है।”

“तो फिर पूछने की क्या ज़रूरत है।”

“मैं कोई गाय नहीं हूँ। मुझे भी भगवान ने दिमाग दिया है।”

“मैंने कब इंकार किया “

“पर तुम समझते तो यही हो कि मैं तुम्हारी बातों को नहीं समझती।”

“लेकिन मैं भी तुम्हारी कई बातों को नहीं समझ सकता।”

“जैसे....।”

“जैसे : घरेलू मसले, खाना-पकाना वगैरह।”

“वह तुम समझने की कोशिश ही नहीं करते।”

“तुम्हारे होते हुए मुझे इसकी ज़रूरत भी नहीं।”

“बहुत अच्छे। ये कही मज़ेदार बात।”

अशोक उसकी तरफ़ देखकर कड़वाहट से मुस्कुराया।

“कितनी अच्छी रात है।” और कमला ने उसे बाजू से खींच लिया।

अशोक एक असली पिल्ले की तरह उसके साथ लेट गया।

चाँद पूरी जवानी पर था। फ़जा नूर से निखरी जा रही थी और उस माहौल में कमला अपने कम कपड़ों में उसकी गोद में सवाली अप्सरा की तरह पड़ी हुई थी। उसके बदन की आँच से अशोक की अवरूद्ध संवेदनाएँ आँखें खोलने लगीं और दिन-भर से मंडराने वाले साये ज़हन से हटने लगे। उसने कमला के बालों में उंगलियाँ डूबो दीं और फिर दोनों हाथों की पकड़ में उसके पूरे चेहरे को जाम की तरह थाम लिया।

कमला नशे भरी आँखों से उसे ताकती रही।

अशोक जाम के रंग से मस्त होने लगा और फिर जाम को और क़रीब ले आया। कमला.....छलक पड़ी।

“अब बताओ तुम्हारे ख़्याल में कौन है ? यादों में कौन है ? सपनों में कौन है ?”

“क्या मतलब ?”

और अशोक के हाथ से जाम छूट गया और पत्थर की तरह तकिये पर जा गिरा। उसने एक नज़र गिरे हुए जाम पर डाली और फिर उसने मुँह मोड़ लिया।

सहमी हुई कमला ने उसकी भयभीत आँखों में देखा और उसकी नाड़ी और सीने को टटोल-टटोल कर रुकती-चलती सांसों को भाँपने लगी। “मैं ज़िन्दा हूँ।” अशोक ने उसे परे करते हुए कहा और उसकी तरफ़ पीठ मोड़ ली।

वह कुछ देर तक पीठ किए पड़ा रहा और फिर रंग और खुशबू की नज़दीकी भी बर्दाश्त न कर सका। साफ़-सुथरे बिस्तर पर खेलने वाली चाँदनी उसे चौमासे की धूप की तरह चुभने लगी और कमला की काया का हर स्पर्श उसे जंबूर की तरह काटने लगा।

वह वहाँ से उठा और अपने बिस्तर पर जाकर लेटा गया।

चाँद आसमान के बिल्कुल बीच में था और सीधा उसकी आँखों में झांक रहा था। वह आँखें जो सिर से होने के बाद ज़हन के दर्द को हल्का कर रही थीं। यह दर्द दिन-भर से वहाँ रुका हुआ था और एक पुराने मुलाक़ाती की तरह जमता जा रहा था।

दो दिन पहले मीरा ने आज उसे एक पिकनिक में शामिल होने की दावत दी थी और उस पिकनिक में उसका पति रंजीत भी शामिल हो रहा था। कमला ने उसमें जाने से इंकार कर दिया था क्योंकि उसको घर का काम-काज इतना ज़्यादा था कि पिकनिक के लिए समय नहीं निकाल सकती थी। वैसे भी वह पिकनिक को एक बेकार चीज समझ रही थी।

अशोक को मीरा से खास लगाव था। पड़ोसियों में यही एक घर ऐसा था जिससे उसका संबंध कुछ गहरा था। वरना बाक़ी सबसे साहब-सलामत ही थी। मीरा और रंजीत दोनों अशोक के लगाव के क़ायल थे और कमला के दबे-दबे रूखेपन के बाद अक्सर उनके यहाँ आ जाया करते थे।

मीरा संगीत की शौक़ीन और एक बड़ी मधुर गायिका थी और फिल्मों के हर मषहूर पक्के या हल्के गीत को बड़ी कामयाबी से गा सकती थी। उस फ़न की वजह से वह समारोहों की जान थी। इसके विपरीत रंजीत शेरो-शायरी से अंजान एक साधारण आदमी था और उसे इन समारोहों पर कोई एतराज़ नहीं था जिनका मीरा अपने शौक़ को पूरा करने के लिए अक्सर आयोजन किया करती थी। इन समारोहों में मीरा की बड़ी तमन्ना होती कि वह अशोक के गीत सुने और सुनाए और इस वजह से उसके और अशोक के बीच एक ऐसा जुड़ाव पैदा हो गया था जिसका इज़हार वक़्त का पाबंद नहीं था। कभी अशोक ने नया गीत लिखा है तो वह उसे सुनाने के लिए खुद मीरा के घर पहुँच गया। कभी मीरा ने किसी नए गीत का सुर तैयार किया है तो वह अशोक के यहाँ पहुँच गई। इस मेल के बीचों-बीच एक दूसरे के विचारों के तबादले का ऐसा सिलसिला जारी रहता जो जिन्दगी के चक्र और इंसानों की विभिन्नता के हर विशय पर फैला होता और एक बार जब ये सिलसिला शुरु हो गया तो रंजीत की मौजूदगी या कमला की आवाजें उसे तोड़ने में नाकाम रहतीं। कमला को बातचीत के ये सिलसिले एक आँख न भाते थे। उसकी नज़र में तो उनकी कोई हैसियत ही न थी। वह उन्हें सिर्फ टाइम-पास समझती थी। रंजीत से तो वह किसी तरह नाराज नहीं हो सकती थी लेकिन अशोक को वह अक्सर आड़े हाथों लिया करती थी।

''हर वक़्त बे सिर-पैर की बातों में वक़्त गंवाने से क्या मिलता है।''

''हर रोज की ये दिल्लगी तुम्हारे चाल चलन की तस्वीर है।''

''तुम्हारे पास चुहलबाजी के लिए तो वक़्त है लेकिन घर में दिलचस्पी लेने के लिए नहीं।''

''तुम्हारी मनमानियों से बच्चों की बागें ढीली हो रही हैं।

''पराई औरत से ऊटपटांग संबंध बनाए रखने का क्या मतलब है।''

लेकिन अशोक उन सबका एक ही जवाब देता।

''तुम नहीं समझ सकतीं।''

और इससे कमला की नाराजगी और भड़क उठती।

आज जब कमला ने सुबह पूछा कि इस फिजूल पिकनिक का क्या फायदा है। जो कुछ वहाँ जाकर खाना-पीना है वह घर में तैयार किया जा सकता है।" और अशोक ने दबी आवाज में छोटा सा जवाब दिया कि तुम नहीं समझ सकतीं तो कमला गुस्से से बावली हो गई।

"मैं तुम्हें बताए देती हूँ कि तुम इस पिकनिक में नहीं जा सकते। वहाँ सिवाय गप-शप और चुहलबाजी के कुछ नहीं होगा। या फिर तुम मीरा की खुशामद के गीत और वह तुम्हारी कविता के गुन गाएगी। सब बेकार की आदतें हैं। ये शरीफ़ों के लच्छन नहीं कि बाहर खुले मैदान में पराई औरत से दिल्लगी करें।"

"लेकिन वहाँ तो रंजीत और दूसरे लोग भी होंगे। वहाँ ऐसी बात किस तरह हो सकती है जिनका तुम शक कर रही हो।"

"रंजीत भी कोई आदमी है। मोम की नाक की तरह जिधर मोड़ो मुड़ जाता है और दूसरे लोग सभी एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। तभी तो सब ने मिलकर ये पिकनिक रचाई है।"

"तुम्हारी नज़र में तो सबके सब खराब हैं। तुम तो हंसने-खेलने को जो रूह का भोजन है, पाप समझती हो।"

"हंसना-खेलना क्या घर में नहीं हो सकता? पराई औरत से हंसना-खेलना जरूर पाप है।"

"तुम नहीं समझ सकतीं, जाओ ना"ता तैयार करो।"

"मैं नहीं समझ सकती। क्योंकि मैं बच्ची हूँ, ना समझ हूँ। तुम समझ सकते हो, क्योंकि तुम मर्द हो, मौजी हो, शादी से पहले तो तुम जो कुछ करते हो, करते ही हो, लेकिन शादी के बाद भी घर-घर की मिट्टी सूँघते हो। मैं बताए देती हूँ कि मैं अपने घर में ये नहीं चलने दूँगी। मैं तुम्हारी बीवी हूँ, इस घर की मालकिन हूँ मुझे हक़ है कि मैं तुम्हें बुराइयों से रोकूँ।"

"कमला तुम बेवजह बिगड़ रही हो। एक मामूली से मन-बहलावे पर आपे से बाहर हो रही हो। आज की दुनिया में जिन्दगी के नजरिये बहुत बदल गए हैं। आज पराई औरत हव्वा नहीं है और न चाल-चलन बिगाड़ने वाली वेश्या। वह तेरी और मेरी तरह एक इंसान है। समाज का हिस्सा है और समाज को बनाना हम सबकी जिम्मेदारी है क्योंकि अच्छे और काम आने वाले समाज से ही अच्छी और काम आने वाली जिन्दगी बन सकती है घर जिन्दगी के लिए बहुत जरूरी है लेकिन सिर्फ़ घर ही से सारी जिन्दगी नहीं बन सकती। उसे बनाने के लिए समाज को भी साथ-साथ लेना चाहिए। समाज में से अपने मिज़ाज वालों को चुनना चाहिए और उनसे मिल-जुल कर जिन्दगी की क्षमताओं की परवरिश करनी चाहिए।"

"ये तुम्हारी वही उल-जुलूल बातें हैं, बहाने हैं, चालें हैं, अपना उल्लू सीधा करने की।"

"इसीलिए मैं कहता हूँ कि तुम नहीं समझ सकतीं।"

"मैं इसलिए नहीं समझ सकती कि तुम्हें मनमानियों से रोकती हूँ। तुम इसलिए सयाने हो कि पकी-पकाई मिलती है और घर की कोई फ़िक्र नहीं। सवेरे आओ, अंधेरे आओ दस्तरख़्वान बिछा हुआ मिलता है। अकेले आओ, दुकेले आओ, दासी खुशादमत के लिए हाजिर है। अब आज ध्यान से सुन लो कि यह ज़्यादा देर

नहीं चल सकता और अगर आज तुमने पिकनिक पर जाने का नाम लिया तो शाम से मुझे घर की कुछ फिक्र न होगी। खुद ही लाओ, खुद ही पकाओ और खुद ही हम सबको खिलाओ। आखिर ये घर मेरा ही तो नहीं है।''

''कमला ये सब बेजोड़ बातें हैं। मेरा फर्ज घर बनाना है तुम्हारा फर्ज घर चलाना है। मैं अपना काम कर रहा हूँ तुम अपना किए जाओ।''

''तुम अपना फर्ज नहीं कर रहे हो। हाँ एक तन्ख़्वाह ज़रूर लाते हो लेकिन वह तो नौकरी लगी हुई है उसमें अब कौन सी रोज मुश्किल उठानी पड़ती है और मैं हूँ कि रोज नया काम, रोज नया झमेला, रोज नई आफत।''

''यही तुम्हारी सूझ है न। याद रखो पति की बेक़द्री से घर सुखी नहीं हो सकता।''

''हाँ घर तो सुखी हो सकता है घर से बाहर रह कर। अपने बच्चों और बीवी से बेखबर रह कर, गीतों की सभाएँ लगाकर। ठीक है न?''

अशोक ने कोई जवाब न दिया।

''घर सुखी हो सकता है ठट्ठे-मखौल के नए सामान सजाकर, मीरा से प्यार बढ़ाकर और आशनाई के नए घर बनाकर।''

पिछले पहर मीरा उसके घर आई और उससे पिकनिक में न पहुँचने की सख़्त शिकायत की। ''आपने तो हमें बहुत मायूस किया। मैंने क्या-क्या सोच रखा था पर वह सब का सब धरा रह गया। मौसम इतना अच्छा था कि मैं शाम-भर गीत सुनाती रही। जाने आपने कैसे न आने का हौंसला किया।''

अशोक उसकी शिकायत को सुकून से सुनता रहा और किसी दूसरे प्रोग्राम में शरीक होने की दलील देकर अपनी शर्मिंदगी मिटाता रहा। आइंदा प्रोग्राम में शरीक होने के वादे पर बाद में वह खुद भी सोचने लगा।

''क्या ये मुमकिन होगा ? क्या कमला जिन्दगी को समझ सकेगी ? क्या मैं उसका मिजाज बदल सकूँगा?''

चाँद बराबर उसकी आँखों में झांक रहा था। वह आँखें खुद ज़हन के दर्द को अब और भी ज़्यादा नंगा कर रही थीं। ऐसा महसूस हुआ कि ये दर्द उसकी जिन्दगी का हिस्सा बन गया है। उसकी एक-एक सांस में जाग रहा है।

मीरा की शिकायत का एक-एक शब्द उसके दिल-जिगर में उतरा जा रहा था। उसकी रुह के तारों पर आघात लगा रहा था। मैं कितना कमबख़्त हूँ। सिफ़र् बीवी की खुशी के लिए एक बेहद गलत फैसला कर लिया। कमला तो रोज ही किसी न किसी बात पर खफ़ा हो जाती है। उसका तो मिज़ाज ही ऐसा है ये सब कुछ जानते हुए मैंने मीरा को मायूस किया। वह मुझे इसके लिए कभी माफ़ न करेगी और इस ख़्याल से उसका दम सूखने लगा।

वह मीरा की नाराजगी को किसी भी सूरत में कुबूल नहीं कर सकता था क्योंकि उससे संबंध खत्म हो जाने का डर था। वह संबंध जिन्होंने उसके ख़्यालों और ख़्वाबों में मीठा महीन रस घोल दिया था। उसके

गीतों में मस्ती उंडेल दी थी और उनमें राग भर दिए थे। कमला के कारण इन संबंधों को कोई नुक़सान पहुँचने के ख़्याल से उसे नफ़रत होने लगती थी और वह उसके ख़्याल में एक क़ातिल बनकर उभर आती थी। गाँव की एक अकड़बाज और बदतमीज मुँहजोर औरत जो अपने अहम में हर तरफ़ दरांती चला रही हो, जिसे जिन्दगी में सिर्फ कांटे ही नज़र आते हों, जिसे जिन्दगी के हुस्नो-जमाल और लोच से कोई संबंध न हो। जिसने अपने धारदार उसूलों से जिन्दगी को कांटों भरी सेज बना दिया हो। उसकी नन्ही खुशियों को बर्बाद कर दिया हो और उसके पृष्ठ-पृष्ठ पर पवित्रता का टीका लगा दिया हो। वह छिपे-छिपे उससे भाग जाने के लिए सोचने लगा था।

मीरा से संबंध का कोई स्पष्ट खाका उसके पास नहीं था लेकिन न जाने क्यों कमला से झगड़ा हो जाने की सूरत वह दोनों में तुलना करने लगता और मन ही मन कमला को मीरा की ख़ूबियां गिनवाने लगता। जब कमला न मानती और अपनी बात पर अड़ी रही तो वह उसे धमकी देता कि वह उसे छोड़ कर मीरा की पनाह ले लेगा और उसे दिखा देगा कि वह कैसी कामयाब जिन्दगी का सामान कर सकता है। मगर उसी पल उसे रंजीत का ख़्याल आता और वह अपनी बेवकूफ़ी पर शर्मिंदा हो जाता।

मीरा के अच्छे बर्ताव का वह दिलो-जान से क़ायल था और उसकी अदाओं व मीठे बोलों को सहन ही नहीं कर सकता था। वह कई बार अपनी विनम्रता के सदके़ उस पर न्योछावर हो गई थी। एक बार जब उसने उसकी सालगिरह के मौके़ पर जबकि खुश-गप्पियाँ हो रही थीं कितनी मासूमियत से कहा था।

''अशोक साहब आपकी हर सालगिरह नौजवानी का पैग़ाम हो।''

और एक बार जब रंजीत एक तयशुदा प्रोग्राम में शामिल हुआ था तो उसने किस खुलेपन से उससे कहा था कि आपके साथ छोड़कर ये न जाने क्यों मुझसे बेफ़िक्र हो जाता है।

और एक बार जब वह अपनी डायरी उसके यहाँ भूल आया था तो उसने उसे वापिस लौटाते हुए कितनी प्यारी बात कही थी।

''ये आपकी भूलने की आदत कहीं हमें ही न भुला दे।''

आज भी उसकी शिकायत में कितनी हसीन संभावनाएँ छिपी थीं।

''मैंने क्या-क्या सोच रखा था पर वह सब धरे का धरा रह गया।''

कितना उदासी भरा इज़हार था। आवाज की मलिका तसव्वुरात और कल्पनाओं का गुलदस्ता बनकर आई थी और खुद ही इसकी नजर हो जाना चाहती थी। किस क़दर हसीन, किस क़दर जमील मौक़ा था। उसके बदन में एक जबरदस्त सनसनी दौड़ गई। अंग-अंग में मस्ती मचल गई।

दर्दो-ग़म में थके जहन में एक ख़्याल उभरा और पारे की तरह थिरकने लगा। थिरकते-थिरकते ये जज़्बा बन गया। जज़्बा दिमाग में टहलने लगा, दिमाग के बाद दिल में, दिल के बाद जिगर में और जिगर के बाद एक-एक अंग में उतरता गया और फिर हर अंग ही धलनियों में झंझनाने लगा। सारे वजूद में एक बेचैनी, एक जुनून एक रोमांच गर्दिश करने लगा, जानलेवा रोमांच जिससे दिमाग में एक भगदड़ मच गई। जिस्म का एक-एक हिस्सा बेताबी से बेक़ाबू होने लगा और वह बिस्तर पर पड़ा जल बिन मछली की तरह तड़पने लगा।

उसने सोचा कि वह उठकर भागे और सीधा मीरा के यहाँ पहुँच जाए लेकिन गहराइयों में चुप एक भारी एहसास ने उसे बताया कि वह अपनी जगह से हिल नहीं सकता। उसने चाहा कि वह बुलंद आवाज से

बोले। भारी एहसास ने उसमें एक ऐसी घुटन भर दी थी कि उसकी बोलने की ताक़त उसका साथ नहीं दे रही थी। उसने चाहा कि वह रो दे लेकिन आँखें दहशत से इस क़द्र फट चुकी थीं कि उनमें आँसू भी नहीं उतर रहे थे।

रात आधी से ज़्यादा गुजर चुकी थी लेकिन चाँद बराबर उसकी फटी-फटी आँखों में झांक रहा था। चाँदनी ने फ़िजा में एक ठंडक और नमी सी भर दी थी लेकिन उसके बदन में एक ज्वालामुखी खौल रहा था। उसका सारा बदन एक सुलगती आग में फुँक रहा था।

मीरा अपनी मोहिनी सूरत से उसके सामने खड़ी मुस्कुरा रही थी। उसकी हीरे की तरह चमकती आँखें और उजले माथे पर बालों का एक घेरा उसके गिर्द एक जाल की तरह फैल गया था और वह उस जाल में बुरी तरह गिरफ़्तार हुआ जा रहा था।

वह उसके मोहक वाक्यों को बार-बार दोहराने लगा जैसे वह दिल ही में मिलन के मजे समेट रहा हो। मीरा अपनी मोहिनी सूरत से बराबर मुस्कुराए जा रही थी, मुस्कुराए जा रही थी और उसे महसूस हुआ कि वह मुस्कुराती हुई उसके क़रीब जा रही है...................और क़रीब.........बेहद क़रीब और उसने होठों को एक हल्की सी हरकत दी। "आओ" और यह कहकर उसने अपने बाजू फैला दिए।

इस छोटी सी आवाज ने चाँदनी भरे खामोश माहौल में बाधा डाल दी और वह चौंक कर दाएँ -बाएँ देखने लगा।

उसने देखा कि कमला दीदे फाड़कर घूर रही है। इतनी देर बहकने और घुटने के बाद उसे अब मालूम हुआ कि कमला उस पर नज़रों का पहरा लगाए हुए है। उसका खून खौल उठा उसे महसूस हुआ कि ये वही है जिसने उससे एक सुनहरा मौक़ा छीन लिया। उस परिकल्पना में तृष्णा का जहर दाखिल किया, उसकी कल्पनाओं को बर्बाद किया। वह नशीली नजरों से उसे घूरने लगा लेकिन वह भरपूर उसे ताक रही थी। माथे पर शिकन से भौंहे तनी हुई थीं, चेहरा दहक रहा था। अशोक सिटपिटा रहा था। उसे ऐसा महसूस हुआ जैसे कोई दुश्मन उसके आशियाँ को जलाने चला आ रहा हो। वह एक बिफरे हुए कुत्ते की तरह उठा और कमला से लिपट गया।

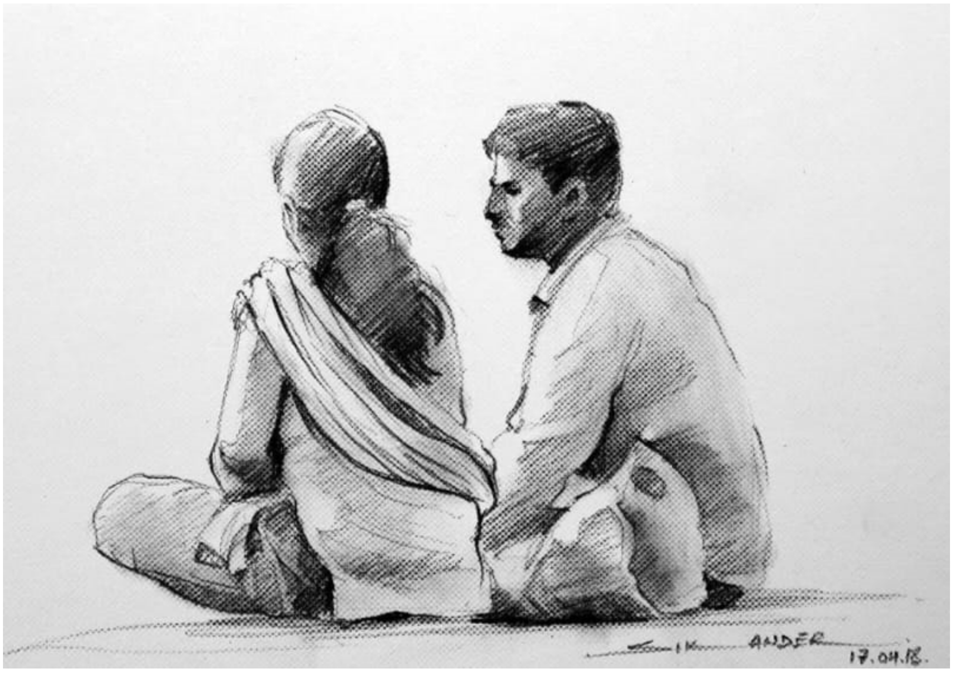

शिकार

(मूल अंग्रेजी कहानी का हिन्दी अनुवाद)

मूल लेखक - **असरोर अल्लायारोव**
उज़्बेकिस्तान लेखक, सम्पादक, अनुवादक,
विजटिंग फैकल्टी फरगाना, उज़्बेकिस्तान,
स्टेट यूनिवर्सिटी, प्रयागराज, भारत

अनुवादक – **डॉ. शमेनाज़**

आज

दरवाज़ा लगातार दस मिनट तक खटखटाया गया। दरवाजे के पीछे बैठे 60 साल के, काली भौंह, चौड़े माथे और मुंहासों से ढके चेहरे वाले आदमी ने झिझकते हुए अपने घर वापस जाने का फैसला किया कि कोई है या नहीं। कुछ देर पहले उसकी पत्नी ने उसे याद दिलाया कि बाहर जाने से पहले अपने कपड़े इस्त्री कर लेना। यहाँ तक कि उसके पड़ोसी ने भी उसे समय पर वापस नहीं दिया। इसलिए, वह लोहा वापस लेने आया था। इतनी देर तक कठोर लकड़ी के दरवाज़े पर दस्तक देने के कारण उसकी उंगलियाँ दुखने लगी थीं।

वामशी की पत्नी नंदिनी अपनी बहू और पोते-पोतियों के साथ अपने जन्मस्थान मैसूर गई। अब अनिल को याद आया कि उसके पड़ोसी ने उससे कहा था कि वामशी कई दिनों तक घर पर अकेली रहेगी। उसने सोचा कि वामशी अभी भी सो रहा है।

अनिल ने अपने बाएँ कान से दरवाजे को छूते हुए अंदर की बात सुनने की कोशिश की। जब उसने वापस जाना चाहा तो उसे घर के फर्श पर एक आवाज़ सुनाई दी। अचानक वह रुक गया.

“कृपया, दरवाज़ा खोलो, पड़ोसी - उसने कहा। मुझे हमारे लोहे की ज़रूरत है। दुर्भाग्य से, हमारे पास दूसरा नहीं है।”

उसने कोई प्रतिक्रिया नहीं सुनी. लेकिन आवाज से उसे एहसास हुआ कि यह कदमों की आहट जैसी लग रही है। कदम मजबूत और भारी हो गये.

“वह मुझसे छिपने के लिए दूसरे कमरे में भाग गया” - अनिल ने सोचा। “या तो वह स्नान कर रहा है”।

अनिल ने कुछ मिनट और इंतजार करने का फैसला किया। तभी उसने दोबारा दरवाजा खटखटाया.

“कृपया, जल्दी आओ, हमें जल्दी करनी चाहिए' - अनिल की पत्नी ने खुली खिड़की से कहा।

“वामशी आ रहा है, कपड़े तैयार करो” - वह चिल्लाया: “चलो, अपनी गांड हिलाओ, वामशी।”

उसे प्रतिक्रिया के स्थान पर कदमों की आवाज सुनाई दी। सीढ़ियाँ दरवाज़े के बिल्कुल करीब आ गईं और वापस चली गईं। तभी अनिल चिल्लाया-

“दरवाज़ा खोलो नहीं तो मैं तोड़ दूँगा।”

अभी तक कोई जवाब नहीं आया. कुछ जमीन पर गिर गया और तेजी से चलने लगा।

अनिल ने दरवाजे पर कंधा मारा तो उसकी कुंडी टूट गई और दरवाजा आधा खुल गया।

“आह, क्या यहाँ कोई जानवर मर गया?” अनिल अपना चेहरा आस्तीन से छिपाते हुए उस दिशा में गया, जिधर गंध फैल रही थी। उसने हॉल में मेज पर रखी धूल भरी इस्त्री उठाई और अपने पड़ोसी वामशी को फिर से बुलाया।

वामशी उठा और अपनी आँखें मली। वह दौड़कर हॉल में गया और जब अनिल ऊंघ रहा था तो उसने नमस्ते करने के लिए अपना हाथ उसकी ओर बढ़ाया। लेकिन अनिल ने उस पर ध्यान नहीं दिया और अपने घर में टहल रहा था और देख रहा था कि लेस की गंध कहाँ से आ रही है।

वामशी ने अनिल का पीछा किया और उसकी हरकतों को आश्चर्य से देखा। तभी उसने अनिल को उस कमरे में जाते देखा जिसमें वह कुछ देर पहले सो रहा था। वामशी अपने घर पर किसी के आने का इंतजार कर रहा था। चूँकि कल रात उनकी मृत्यु हो गई, चूहों ने उनके शव को छूना और सूंघना शुरू कर दिया।

जब अनिल वामशी के कमरे में प्रवेश कर रहा था तो वह कांप उठा, बाहर की ओर भाग गया। उसे लगा कि बदबू बिस्तर से आ रही है, बिल्कुल वामशी की लाश से।

वामशी दरवाजे तक अनिल के पीछे भागा और विनती की।

“अरे, हम 20 साल से सामंजस्यपूर्ण पड़ोसी हैं। आप बाहर क्यों भाग रहे हैं? आप कहां जा रहे हैं? आपने देखा है कि चूहे मेरी लाश को काट रहे हैं और कुछ समय बाद वे इसे छिद्रपूर्ण बना देंगे। जब आप अंदर आए तो मुझे बहुत खुशी हुई मेरा घर। मैं चाहता था कि आप मेरी मृत्यु के लिए अंतिम संस्कार की व्यवस्था कर सकें।”

दरवाज़ा ज़ोर से बंद हुआ.

अधमरे वामशी ने छोटे से प्रार्थना कक्ष के अंदर भगवान कृष्ण को देखा, जबकि दो चूहे बिस्तर पर उसके शव को नोच रहे थे।

“मैं जानता हूं, तुम मेरी लाश अपने चूहों को खिला रहे हो” - उसने सोचा। इसने उन्हें राजस्थान के चूहा मंदिर की याद दिला दी, जहां वे बचपन में गए थे। उन्होंने वहां लोगों को चूहों को भगवान मानकर उनके लिए प्रार्थना करते देखा।

वामशी बेंगलुरु शहर के जय प्रकाश नगर प्रांत में पले-बढ़े। उन्होंने उनके किराये के घर के पास के सरकारी स्कूल में पढ़ाई की। बाद में उनके माता-पिता ने उन्हें प्री-यूनिवर्सिटी की पढ़ाई के लिए ऑक्सफोर्ड स्कूल में भेज दिया और उन्होंने वहां बिजनेस मैनेजमेंट में ग्रेजुएशन किया। वामशी ने कई वर्षों तक अपने स्कूल के पीछे 33वें क्रॉस में 404वें अपार्टमेंट में स्थित कंपनी में प्रबंधक के रूप में काम किया।

और उनकी पत्नी नंदिनी ने पेंशन मिलने तक तीन अलग-अलग कॉलेजों में रिसेप्शनिस्ट के रूप में काम किया। उनके दो बच्चे हैं. उनका बेटा राहुल शादी के बाद काम करने के लिए अमेरिका चला गया और उनकी बेटी ने मैसूर में रहने वाले अपने रिश्तेदार से शादी कर ली.

फिलहाल, वामशी की पत्नी, उनकी बहू और उनके पोते-पोतियां अपने रिश्तेदारों के साथ मैसूर फॉल के रिसॉर्ट में ठंडी तैराकी का आनंद ले रहे थे। उनकी बेटी जिंसी सभी बच्चों की देखभाल कर रही थी। नंदिनी तैरने के लिए झील में गई। उसे वामशी की चिंता हो रही थी क्योंकि वह सुबह उसका फोन नहीं

उठा रहा था।

वामशी एक शांत लेकिन अपनी अजीब भावनाओं के साथ बहुत प्रभावशाली व्यक्ति हैं। उनके कर्मचारी भी उन्हें दार्शनिक मानते थे। क्योंकि उन्होंने अपने भाषण के दौरान कई बार अपने दार्शनिक चिंतन से कार्यकर्ताओं को आश्चर्यचकित कर दिया है. उदाहरण के लिए, उन्होंने अपने एक व्याख्यान में कहा -

“प्रगति और नए आविष्कार दुनिया को बदल रहे हैं। फिर भी, वह प्यार जो अदृश्य है और लाखों साल पहले मानव आत्मा में आपके साथ पैदा हुआ था। यह माता-पिता, पत्नी, नौकरी या अन्य चीजों के लिए हो सकता है। आप अपनी नौकरी से प्यार करें , लेकिन आपकी कंपनी नहीं। चूंकि कुछ कंपनियां जीवित नहीं रहेंगी, लेकिन आपकी नौकरी हमेशा के लिए आपकी रहेगी।”

उस वक्त सभी कर्मचारियों ने मिलकर उनकी सराहना की. यहां तक कि कंपनी के डायरेक्टर भी उनका हाथ थामने के लिए उनके पास आए. दरअसल, इस शख्स ने उस पर ऐसा एहसान किया जो जिंदगी में किसी ने नहीं किया। इसीलिए वामशी उन्हें भगवान से भी बढ़कर मानते हैं. उन्होंने अपने पिता की राख को गंगा नदी पर बहाने के लिए वामशी को 10 दिनों के लिए नौकरी से मुक्त कर दिया और मालिक ने उसका वेतन अग्रिम भुगतान कर दिया।

उन्होंने वामशी को वफादार प्रबंधक के रूप में सेवानिवृत्त किया। ग्रेजुएशन के बाद उन्होंने केवल अपनी कंपनियों के बारे में सोचा। कभी-कभी वह रात में भी काम करते थे। इस कारण उनका नौकरी छोड़ना मुश्किल हो गया.

“मैंने अपनी नौकरी के लिए अपनी पूरी ताकत खर्च कर दी और अपने रिश्तेदारों को हर चीज मुहैया कराई। इसलिए, मेरे लिए मानसिक शांति अलग थी। अब मैं कथित तौर पर अकेला महसूस कर रहा हूं” - उन्होंने स्टाफ को अलविदा कहते हुए कहा।

उस दिन, वामशी शाम तक सड़कों पर पड़ा रहा। फिर वह पुराने कम्पेसाटर के पास पार्क में आया। वहां उन्होंने अपने जैसे बहुत सारे बूढ़े लोगों को देखा और वे प्रशिक्षण ले रहे थे। उसे लगा जैसे वह अपना समय बर्बाद कर रहा है।

“वे सभी फुर्सत हैं” - उन्होंने खुद कहा।

अब उन्मुक्त जीवन उसे अजीब लगता है। वह सुबह से शाम तक, यहां तक कि सप्ताहांत में भी, फिर से कार्यालय में काम करना चाहता था। इसके अलावा, वामशी को लग रहा था कि उनकी आज़ाद जिंदगी के बजाय अपने कर्मचारियों को नियंत्रित करना आसान है।

वह एक पार्क में कुर्सी पर बैठ गया। वह कई वर्षों तक अपने परिवार और रिश्तेदारों, पड़ोसियों से दूर रहे। अब उनके और उनके परिवार के बीच रिश्ते सामान्य होने में कितना वक्त लगेगा...

उन्होंने एक पार्क में एक लड़की को देखा और लड़के ने उन्हें गले लगा लिया। उन्हें इस बात की चिंता थी कि दूसरे लोग उन्हें देख रहे हैं।

“तो, ये घबराहट एडम और ईवा से विरासत में मिली है,” उसने सोचा। दरअसल, यौन संबंध दुनिया की पहली सेवा थी।”

जब वामशी घर वापस जा रहा था तो उसने अपनी पत्नी नंदिनी के पहले पति के किशोर बेटे सुनील को देखा। सुनील अपने दाहिने हाथ पर दो रुपये का सिक्का पकड़ते हुए छोटे बाजार से आ रहा था। एक बार की बात है, वामशी ने नंदिनी को अपने छोटे बेटे को विशेष विकलांग सोसायटी को देने के लिए राजी किया। उसे उस अजीब बच्चे से नफरत थी. नंदिनी दर्द सहते हुए परफॉर्म करने के लिए तैयार हो गईं और उन्होंने सुनील के भविष्य के लिए ऐसा किया। उसने अपने बेटे सुनील को कष्ट रहित जीवन देने के लिए उसे अशक्त बनाने का निर्णय लिया।

दरअसल, कई गरीब परिवारों ने अपने बच्चों को विशेष विकलांग सोसायटी को दे दिया। सोसाइटी के कर्मचारियों ने सभी अमीर गरीब बच्चों के पैर और हाथ काट दिए, कभी-कभी एक पैर और एक हाथ भी काट दिया ताकि वे दूसरों के लिए दयनीय हो जाएं और उनका भविष्य उज्ज्वल होगा और उन्हें कभी भी धन और भोजन की कमी महसूस नहीं होगी।

जब वे दूसरों से भीख मांगते हैं तो हर दो में से एक व्यक्ति दया भाव से भिक्षा देता है। भले ही वे विकलांग लड़के चल-फिर और लेटने में असमर्थ हों, लेकिन वे अमीर रहते हैं।

एक दिन जब नंदिनी मैजेस्टिक टाउन गई तो उसकी मुलाकात अपने बेटे सुनील से हुई। उस वक्त महिला अपने आंसू नहीं रोक पाई. वह अपने प्यारे बेटे के पास आई और उसके रूमाल में 10 रुपए जमीन पर रख दिए। सुनील नीचे लेटा हुआ था और उसके दोनों पैर और बायां हाथ कटा हुआ था. लेकिन हांकी के ऊपर बहुत सारा पैसा था। सुनील बाज़ार जा रहे लोगों को ईर्ष्या की दृष्टि से देखता है, लेकिन उसके चेहरे पर मुस्कान रहती है. जब सुनील ने अपने सामने उस महिला को देखा तो वह काफी देर तक देखता रहा। महिला ने उसे याद दिलाया, कोई।

सुनील की हेंकी पर बहुत सारे सिक्के थे और ऐसा लग रहा है कि उन्हें अपना पेट भरने में कोई दिक्कत नहीं हो रही है. माँ की आत्मा तृप्त हो गयी. फिर वह वामशी से उसके बच्चों को लेकर बाजार चला गया।

उस वक्त वामशी ने भी अपनी जेब से 5 रुपये का सिक्का निकाला और सुनील को दे दिया. फिर वह घर चला गया.

वामशी का आगे का जीवन घर की चार दीवारों के बीच बीता। वह अपने परिवार से प्यार करता है लेकिन उसे लगता है कि एक घर में समूह के रूप में रहना अजीब है।

"एक समूह में रहने से आपका जीवन कठिन हो जाता है," उसने एक दिन बिस्तर पर लेटे हुए सोचा। यह आपसी रिश्तों को शर्मसार करता है।"

अगले दिन नंदिनी अपनी बहू और पोते-पोतियों के साथ घर वापस आ गई। जब वह लाश को कुतरते हुए अपने हाथों से चूहों और मच्छरों को दूर कर रही थी तो काफी देर तक उसे देखती रही। उसे उसके चेहरे का एहसास तब हुआ जब उसने उसके निर्जीव शरीर से खून से सना कंबल हटाया।

नंदिनी को लगा कि उसके पति की मौत भूख से हुई है।

चिड़िया जैसी माँ

(हिन्दी कहानी)

सूर्यबाला
व्यास सम्मान से सम्मानित साहित्यकार
मुंबई, महाराष्ट्र, भारत

मेरी अपनी बहुत अच्छी माँ।

पता नहीं अब के पहले किसी बेटे ने अपनी माँ को इस तरह का पत्र लिखा या नहीं, लिखेगा भी या नहीं। पर कभी न कभी हर बड़ा हुआ, उद्विग्न और कई तूफानी लहरों के बीच फँसा हुआ बेटा, अपनी माँ को एक ऐसा खत लिखने के लिए छटपटाया जरूर होगा, इतना मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ। एक बात और भी समझ लो माँ ।... कि आम तौर पर लड़के, लड़कियों को शर्मीली, संकोची और दब्बू कहकर चाहे जितना चिढ़ाया करें, लेकिन अपना दुःख-दर्द खुलेआम कहने, बाँटने, अपने अंदर का सब कुछ जग-जाहिर करने में जितने दब्बू, जितने संकोची लड़के होते हैं, लड़कियाँ नहीं। नन्हीं बच्चियों से लेकर दादियाँ, नानियाँ तक हँसते-रोते बड़ी सहजता से अपना आत्म-पुराण बखान कर लेती हैं, जबकि मर्द-मानुष बच्चे से लेकर वयोवृद्ध तक, अपने अहसासों की पोटली समेटे ताउम्र अनकहा खड़ा रह जाता है।

मैं स्वयं भी, इस समय जो कुछ, जितना महसूस कर रहा हूँ, उसे सहमा, सकुचाया, अटक-अटककर ही तुम तक पहुँचा पा रहा हूँ, क्योंकि कहा न, तुम्हारे पास बैठकर, गले में बाँहें डाल, सब कुछ कह पाने की पात्रता नहीं मुझमें। जानता हूँ, इस संकोच की बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी है मुझे। क्योंकि तुम सोचती हो कि तुम्हारे इस बेटे के पास तुमसे कहने-सुनने के लिए कुछ है ही नहीं। कारण, अब उसके पास एक अदद पत्नी जो है।

यों, कहता-सुनता तो यह बेटा पहले भी नहीं था तुमसे। पर तब वह अकेला था। अक्खड़, उद्दंड और खिलंदड़ । बोले या न बोले। कहे या न कहे। था तो सिर्फ अपनी माँ का बेटा ही। लेकिन अब? अब उसके पास एक अदद पत्नी है। अब वह मन का सब कुछ नवोढ़ा पत्नी से ही बाँटता होगा, इसलिए माँ से नहीं बाँटता, यह अंदेशा, सच-सच कहो माँ। क्या तुम्हें अंदर-अंदर विकल नहीं किए रहता?

नहीं, जाहिर नहीं किया तुमने कभी, कुछ भी। मुझसे बहुत छुपाकर रखी है अपनी यह बेचैनी, यह बेकली। शायद अपने आप में स्वीकारोगी भी नहीं कि कहीं बेटे की मधूलिका वधू से अति अंतरंगता तुम्हें एक खालीपन के अहसास से, कुछ हाथ से सरक जाने के अंदेशे से, एक विचित्र किस्म की विकलता सौंप गई है। मुझे मालूम है, इस अहसास-मात्र से तुम खुद अपनी दृष्टि में लज्जित और शर्मिंदा महसूस करोगी। कभी पूरे होशोहवास में स्वीकारोगी भी नहीं ।

लेकिन मेरा मन कर रहा है कि एकदम तुम्हारे सामने, तुम्हारी खाट पर बैठकर, तुम्हें समझाकर कहूँ कि अगर तुम इस तरह की असहजता या बेचैनी महसूस कर रही हो तो इसमें लज्जित होने जैसा कुछ भी नहीं। एकदम स्वाभाविक प्रतिक्रिया है यह, तुम्हारे जीवन में आए जबरदस्त उलटफेर की ।

उलटफेर? बेटे की शादी? एक माँ का सबसे मोहक, लाड़-भरा सपना... लेकिन अनादिकाल से इस मोहक सपने के साथ जुड़ी विडंबना जाने कितनी माँओं ने चुपचाप सही होंगी, तथा किसी और के सामने स्वीकारोक्ति की लज्जा और पीड़ा से बचे रहने की यथासंभव कोशिशें की होंगी ।

पीड़ा क्यों नहीं होगी माँ? धुर बचपन से पूरे छब्बीस सालों तक जिस बेटे पर तुम्हारा एकाधिपत्य रहा, जो एकमात्र तुम्हारी मिल्कियत रहा, वह एकदम, सिर्फ दो-चार दिनों के हेर-फेर में तुमसे छिटककर कहीं और जा पड़ा। तुम्हारे देखते-देखते किसी और का अंतरंग हो गया । और यह जगह भी किसी और ने नहीं, बल्कि एक लड़की यानी एक अन्य स्त्री ने ही ली । ली क्या, तुम्हारे समूचे भावनात्मक हक पर चुटकी बजाते आसन जमा के बैठ गई, तो 'लुटी-पिटी' तो तुम महसूस करोगी ही। नहीं माँ, मेरी समझ से यह जरा भी अस्वाभाविक नहीं ।

जानता हूँ, मेरे द्वारा प्रयोग में लाए इस 'लुटे-पिटे' शब्द पर तुम्हें आपत्ति होगी । कहोगी, "क्या ? मैं मधूलिका के आने से लुटी-पिटी महसूस करूँगी ? तुझे क्या पता, कैसा छोह उमड़ता है बेटे-बहू को साथ-साथ देखकर! जब मेरी उम्र का होगा तब पता चलेगा। माँ की ममता में डूबते-उतराते मार्मिक गीतों का एक अक्षय भंडार है अपनी लोक-संस्कृति में, इसका साक्ष्य रूप..."

जानता हूँ माँ! मैंने इस सच से कब इनकार किया ? यह एक पूरा सच है !

'सिर्फ एक पूरा सच नहीं', तुम तड़पकर, छटपटाकर कहोगी, "ऐसे असंख्य, अनंत सच हैं... तुझे मालूम है, पूरे तीस सालों से, अनारदाने जैसे माणिकों से सजा सतलड़ा सहेजकर रखा था, पुत्रवधू का घूँघट उठा उसके गले में पहनाने की साध से। लेकिन जैसे ही पता चला कि मधूलिका को जयपुरी कंगनों का शौक है, वह एकमात्र सतलड़ा तुड़ाकर कंगन गढ़वा दिए... सिर्फ इसलिए कि मुझे मधूलिका वधू की आँखों में छलकती उस ख़ुशी की विकल प्रतीक्षा थी जो उसके अनचाहे कंगनों को 'सरप्राइज' में पाने पर होती.... मधूलिका की हँसी, मधूलिका की खुशी, मधूलिका की सुख-सुविधा मेरे जीवन की एकमात्र आकांक्षा बन गई थी... इस रंग की साड़ी, ऐसा घाघरा-काँचली पर जरी का काम, ओढ़नी पर तिल्ले का... वधू को ऐसे सजाऊँ, सँवारूँ, ऐसे पहनाऊँ, ऐसे उढ़ाउँऊँ....

हाँ-हाँ, माँ... यह एक पूरा सत्य है। लेकिन इसके साथ एक सच यह भी कि अपने इस हद से गुजरते जुनून में तुम कहीं बिल्कुल भूल गईं कि मधूलिका तुम्हारी बहू के सिवा कुछ और भी है। एक पत्नी, एक लड़की, एक परिपक्क व्यक्ति और एक माँ की बेटी भी, उसकी अपनी रुचि, अपने शौक, अपनी इच्छा, अपनी स्वाधीनता...

"मैं कहाँ बाधक थी इस सब में, मैंने तो उसकी बेटी से बढ़कर चाहना की थी, सास का नहीं, माँ का लाड़ लुटाना चाहती थी उस पर।"

के बस, यही तो तुम्हारी सबसे बड़ी भूल थी माँ। एक माँ होकर भी तुम इतना नहीं समझ पाईं कि माँ हमेशा एक ही होती है। माँएँ कई नहीं हुआ करतीं। तुम चाहे जितना लाड़ लुटा डालो, बीस-बाईस वर्षों तक जन्मदायिनी माँ के साथ रही बेटी, हफ्तों-महीनों के अंदर किसी अन्य स्त्री को अपनी माँ कैसे मान बैठेगी? सुनो और समझो माँ! तुम किसी बहू के लिए दुनिया की सबसे अच्छी 'सास' भले हो सकती हो, माँ से बढ़कर हो सकती हो, लेकिन 'माँ' नहीं। इसी बात को उलटकर कहूँ तो 'बहू' को भी तुम, बेटी से बढ़कर भले मान लो लेकिन 'बेटी' नहीं हो सकती वह तुम्हारी।

न, मेरी तरफ विस्फारित और फटी-फटी आँखों से मत देखो माँ! न यह तुम्हारी अवमानना है, न तुम्हारी भावनाओं का अस्वीकार।

सिर्फ एक अनुरोध, एक याचना-जीवन हमेशा भावनाओं से नहीं चला करता, रिश्तों के स्वरूप भी उम्र के साथ थोड़े-बहुत बदलते जाते हैं। इस ठोस वास्तविकता को समझो माँ! कुछ बेहद मधुर सत्य कभी-कभी क्रमशः अत्यंत करुण बल्कि कड़ुवे सचों में बदलते चले जाते हैं, हमारे देखते-देखते... और हम लाचार, अवश खड़े रहे जाते हैं- मैं खुद भी तो-

पूछोगी क्यों?

हाँ, मैं चाहता था, तुम पूछो मत, क्यों ? जिससे मैं उत्तर में कह सकूँ कि तुम्हारा यह मोहपाश, तुम्हारी ममता और देख-रेख का यह बढ़ता हुआ दबाव मुझसे ज्यादा तुम्हारी मधूलिका वधू के लिए एक बोझ बनता जा रहा है। मैं एक अपराध-बोध और आत्मधिक्कार के बीच जाने के लिए बाध्य होता जा रहा हूँ। सोचने में कैसे विपरीत, विलोमार्थक-से शब्द लगते हैं न माँ-ममता और आतंक? लेकिन एक उम्र में आकर यह भी सच हो जाता है। तुम पूछोगी, कैसे ?

तो सुनो, अपनी मधूलिका वधू को भरपूर समेट पाने के लिए जैसे-जैसे तुम्हारे ममता की उत्ताल तरंगें हरहराती आतीं, मधूलिका वैसे-वैसे कतराती जाती । जितना तुम देना चाहतीं, मधूलिका उतना ले पाने का उत्साह बिल्कुल न दिखाती ।

लेकिन तुम्हारी उमंग का ओर-छोर न था। तुम हर शर्त पर जल्दी से जल्दी मधूलिका पर मेरे समान ही ममता की गागर उलट देने को उतावली थीं, लेकिन मधूलिका को तुम्हारी भरी गागर का आभास ही जैसे जुकाम के अंदेशे से बिदका देता।

मैं मूक दर्शक बना देखा किया। तुमने हम दोनों को सुबह की चाय तक दरवाजा खटखटा कर देनी शुरू कर दी। मधूलिका बिल्कुल न पसीजी। बल्कि ‘उलटे’ उसे लगा, तुम जरा सब्र से काम लेतीं तो वह खुद थोड़ी देर में तुम्हें चाय का कप थमा सकती थी। यह तो उसे शर्मिंदा-सा करना हुआ ।

तुमने धुलकर सूखे मेरे कपड़ों के साथ-साथ मधूलिका के कपड़े भी तहाने शुरू कर दिए। यह मिसाल पेश करते हुए कि भला बेटे और बहू में फर्क कैसा ? देखने-सुनने वालों ने अवश्य तुम्हें मानवी के आसन से उठाकर देवी के आसन पर ला बिठाया होगा, लेकिन क्या तुम विश्वास करोगी माँ! एक दिन मधूलिका ने मुझसे कहा कि उसका मन करता है, कभी वह मेरे सूखे कपड़े तहाए और अलमारी में रखे ।

विस्मित कर देने वाली हैं न, मानव मन की ये तिलिस्मी जटिलताएँ।

तुम विकल थीं, आहत भी। मधूलिका की बर्फीली तटस्थता तुमसे छुपी नहीं थी; लेकिन उन बर्फीली दरारों को पाटने का जो तरीका तुमने अपनाया उसने तो हिमनदों को फोड़कर महाजलप्लावन की विभीषिका ही उपस्थित कर दी।

इस तरह कि एक दिन यूनिवर्सिटी से लौटकर मधूलिका ने देखा, उसकी अलमारी के थोड़े अस्त-व्यस्त रखे कपड़े बड़े करीने से दुबारा सजाकर रखे गए हैं। उसका माथा ठनका। उसने मुझसे पूछा कि क्या मैंने उसकी अलमारी ठीक की है? मेरे 'ना' कहने पर उसका चेहरा खिंचता चला गया। पता चला, बहू रोज-रोज जल्दबाजी में यूनिवर्सिटी भागती है, सारी अलमारी गुड़मुड़ी, अव्यवस्थित... आज अधखुली अलमारी से आधा पेटीकोट बाहर झूलता देख तुमने सोचा, क्यों न बहू के कपड़े आज करीने से रख दूँ। कुछ मन में यह भी

रहा ही होगा कि इसी बहाने उसे कपड़े ढंग से रखने-तहाने का सलीका भी सिखा दूँ। अब न सिखाऊँगी तो कब? और मैं न सिखाऊँगी तो कौन?

लेकिन हुआ इसका उलटा। यह पता चलते ही कि तुमने उसकी पूरी अलमारी खंगाल डाली है, खुश या कृतज्ञ महसूस करने के बदले मधूलिका का चेहरा उत्तेजना से खिंचता चला गया। क्रमशः अपनी खिंचती नसों को नियंत्रित करने में असमर्थ, वह तेजी से भागती हुई बिस्तर पर ढह पड़ी। मैंने बिस्तर के करीब जाकर कुछ कहने की कोशिश की ही थी कि मधूलिका वहशियों-सी चीख पड़ी-जैसे मैं पास आया नहीं कि भूचाल आ जाएगा और वह कहीं से भी कूद, फलाँग जाएगी। जैसे मेरा स्पर्श मात्र, बिच्छू के डंक-सा जहरीला हो।

हत्बुद्धि, अवाक् मैं चुपचाप खड़ा रहा, मधूलिका के अनजाने, एक निश्चित दूरी पर। अचानक जैसे कई ज्वालामुखियों के बीच कोई सैलाब आया हो, इस तरह विक्षिप्त हो वह फफक-फफककर रो उठी-बदहवास शब्दों में सिर्फ एक ही वाक्य दुहराती कि... मुझे मुक्ति चाहिए। मैं छुटकारा चाहती हूँ, छुटकारा- इस घुटन से, सब कुछ से-सब कुछ से ।

मैं लज्जित हूँ माँ! नतमस्तक भी। मधूलिका द्वारा तुम्हारी माया-ममता और शिक्षा-दीक्षा की चाहना के इस निर्मम अस्वीकार पर !...

तुम्हारी फटी-फटी-सी, शून्य में निहारती विस्फारित आँखों का सामना कर पाने का साहस नहीं मुझमें। इसीलिए तो जीवन में पहली बार तुमसे बात कर पाने के लिए इस कलम और अक्षरों का सहारा लिया ।

विश्वास करो माँ! मधूलिका को समझाने की मैंने जब-जब कोशिश की, उसे और ज्यादा अनुदार और असहिष्णु ही पाया । कारण सिर्फ एक । मधूलिका मुझ पर अपना समूचा एकाधिकार चाहती है । उसके सपनों का संपूर्ण साम्राज्य सिर्फ मेरी धुरी पर टिका है।... वह भूल जाती है कि मेरी धुरी तुम हो! मेरी माँ!

मधूलिका गलत है, लेकिन कुछ गलतियाँ सुधरने के लिए ज्यादा समय माँगती हैं। अतः हमें सब्र से काम लेना होगा और हमेशा की तरह तुम्हें ही उदार होना होगा।

वह इस तरह कि प्रकृति के कठोर नियमों के हवाले से तुम्हें खुद को समझाना होगा माँ कि जैसे पेड़-पौधे, कीट-पतंग और पशु-पक्षी अपने शिशु-शावकों को दाना-चुग्गा दे, उन्हें पंखों पे सहेजकर उड़ा देते हैं, उड़ाकर विमोह हो जाते हैं, ऐसा ही कुछ एक मानवी माँ को भी होना पड़ेगा। जीवन के उत्तरार्द्ध में क्रमशः छिटकते, दूर जाते बच्चों को अपने से हिलकाए रखने की करुण, दयनीय कोशिशों को संयमित करना होगा । माया-मोह की अपनी पिटारी चुपचाप समेट लेनी होगी...

कैसा लगता है! आज मैं तुम्हें जग की रीत सिखा रहा हूँ। पूरे छब्बीस सालों तक तुम्हारी महामोही गोद में पलने-पुसने के बाद, तुम्हें विमोह हो जाने की शिक्षा दे रहा हूँ- एक चिड़िया जैसी हो जाने की - मुझे क्षमा करना माँ - लेकिन मेरी कही बात पर एक बार सोचना अवश्य! एक चिड़िया जैसी हो पाने वाली बात...

इवान की दुल्हन

("ट्यूलिपों की धरती नीदरलैंड की जादुई लोककथाएँ" से साभार)

डॉ ऋतु शर्मा नन्नन पाँडे
नीदरलैंड

बहुत समय पहले की बात है किसी देश में एक राजा अपनी रानी और तीन राजकुमारों के साथ रहता था। राजा के तीनों राजकुमारों की सुन्दरता और बहादुरी के चर्चे बहुत दूर-दूर तक फैले हुए थे । उसके बड़े बेटे का नाम आर्यन,दूसरे का नाम जैफ और तीसरे बेटे का नाम ईवान था। एक दिन राजा ने अपने तीनों बेटों को बुलाया और उन तीनों को बहुत सुंदर तीर कमान देकर कहा " तुम तीनों अपनी मनचाही दिशा में तीर चलाओगे ।महल के चारों ओर शाही लोग, बड़े – बड़े व्यापारी , सैनिक और शाही रिश्तेदार रहते थे। राजा ने कहा " जिस घर में तुम्हारे तीर गिरेंगे तुम्हें उसी घर की बेटी से विवाह करना होगा।

तीनों बेटों ने तीर हवा में छोड़े । बड़े बेटे आर्यन का तीर एक बड़े व्यापारी के घर में गिरा , दूसरे बेटे जैफ का तीर एक सेना नायक के घर में गिरा और सबसे छोटे बेटे इवान का तीर एक तालाब में गिरा और एक मेंढकी ने उसे पकड़ लिया। दोनों बड़े भाईं के लिए अच्छी लड़कियाँ मिल गई थी पर इवान को मेंढकी से शादी करनी की बात होनी लगी। इवान ने अपने पिता से कहा मैं किसी मेंढकी से कैसे शादी कर सकता हूँ। लेकिन उसके पिता ने कहा हमें हमारी बात का पक्का होना चाहिए । अब अगर तुम्हारी क़िस्मत से बंधी है तो तुम्हें मेंढकी से ही शादी करनी होगी। बेचारा इवान उसके पास अपने पिता की बात मानने के अलावा कोई चारा नहीं था। तीनों भाइयों का विवाह हो गया। इवान का विवाह भी मेंढकी से हो गया। एक दिन राजा ने कहा "मैं कल सुबह तुम्हारी पत्नियों के हाथों का बना केक खाना चाहता हूँ। इवान के दोनों भाइयों ने ख़ुशी ख़ुशी अपनी पत्नियों को यह बताई । इवान जब घर पहुँचा तो वह बहुत उदास था ,उसका उदास चेहरा देख कर उसकी मेंढकी बीवी ने उससे पूछा " क्या हुआ क्या महल में कुछ बुरा हुआ?"

"बुरा नहीं बहुत बुरा हुआ है, मेरे पिताजी तुम्हारे हाथों से बना केक खाना चाहते हैं।"इवान ने झुंझला कर मेंढकी से कहा।

"मेंढकी ने कहा " आप आराम से जा कर सो जाइए । रात की नींद सारी परेशानी हटा देती है। " इवान ने अपनी पत्नी की बात मानी और वह सोने चला गया।

आँधी रात को मेंढकी ने अपनी मेंढकी की खाल उतारी और वह एक सुंदर राजकुमारी बन गई । एक श्राप के कारण वह रात के दो पहर तक ही अपने असली राजकुमारी के रूप में रह पाती थी। वह अपने कमरे के आँगन में आई और उसने ताली बजा कर अपने सेवकों को बुलाकर कहा" मेरे ससुर जी के लिए एक अच्छा सा स्वादिष्ट केक बनाओ जैसा मैं अपने पिता के घर खाती थी।" कुछ ही देर में उसके कमरे में बहुत बड़ा स्वादिष्ट केक रखा था।

अगली सुबह जब इवान सो कर उठा देखा तो कमरे में एक स्वादिष्ट और ख़ुशबूदार केक रखा था । राजा ने जब वह केक खाया तो उसे मेंढकी का बनाया केक सबसे ज़्यादा पंसद आया।

अगले दिन राजा ने फिर से अपने तीनों लड़कों को बुलाया और कहा" मैं चाहता हूँ की इस बार तुम्हारी पत्नियां एक सुंदर सा क़ालीन बुने। दोनों भाई फिर से खुश हो कर अपने घरों को चल दिए । इवान फिर से दुखी मन से घर पहुँचा । वह सोच रहा था कि एक मेंढकी क़ालीन कैसे बुनेंगी? " जब वह घर पहुँचा तो

उसकी मेंढकी पत्नी ने फिर से उसके दुखी होने का कारण पूछा। इवान ने कहा" इस बार मेरे पिताजी मेरी पत्नी के हाथ से बुना क़ालीन देखना चाहते हैं । मुझे पता नहीं मैं यह कैसे करूँगा? मेंढकी ने कहा " आप परेशान न हों अपने कमरे में जा कर सो जाओ , कल की सुबह कोई न कोई हल लेकर आएगी। इवान मेंढकी की बात मान कर सोने चला गया। रात होते ही मेंढकी फिर से सुंदर राजकुमारी बन गई । उसने आँगन में आ कर आवाज़ लगाई सेवकों जाओ मेरे लिए एक बहुत ही सुंदर रेशम के धागों से बुना क़ालीन बना कर लाओ । ऐसा शानदार जैसा मेरे पिताजी के महल में था। " रात भर मेहनत करके करें सेवकों ने सुंदर सा क़ालीन बुन दिया।

अगली सुबह जब इवान सो कर उठा तो उसने कमरे में बहुत सुंदर और मुलायम चाँदी और सोने के धागों से बुना क़ालीन था।

इवान ख़ुशी ख़ुशी वह क़ालीन अपने पिता के पास ले गया। जैसे ही राजा ने वह क़ालीन देखा उसने इवान से कहा "यह क़ालीन तो बहुत क़ीमती और सुंदर है। लगता है तुम्हारी पत्नी किसी शाही परिवार से है। इस बार राजा ने कहा मैं अब तुम तीनों की पत्नियों से मिलना चाहता हूँ । अब इवान और ज़्यादा दुखी था। जब वह घर पहुँचा वह बहुत परेशान था। मेंढकी ने उससे पूछा " क्या बात है क्या तुम्हारे पिताजी को क़ालीन पंसद नहीं आया?" नहीं ऐसी बात नहीं है तुम्हारा बनाया क़ालीन तो उन्हें सबसे अधिक पसंद आया।" इवान ने मेंढकी को बताया। फिर क्या बात है जो तुम इतने परेशान हो? मेंढकी ने पूछा ।

"मेरे पिताजी मेरी पत्नी यानी तुमसे मिलना चाहते है। अब तुम ही बताओ मैं तुम्हें अपने पिताजी और भाइयों से कैसे मिलवा सकता हूँ ? मेरे भाईयों की होने वाली पत्नियाँ बहुत सुंदर है । वह तुम्हें मेरे साथ देखेंगे तो मेरा और तुम्हारा दोनों का मज़ाक़ बनाएँगे। बस यही सोच कर परेशान हो रहा हूँ ।" इवान ने मेंढकी को बताया।

हाँ बात तो चिन्ता की है पर कोई बात नहीं, कल सुबह तक इस परेशानी का भी कोई न कोई हल ज़रूर निकल आएगा। अगर तुम सही समझो तो कल तुम अकेले अपने पिता के पास आगे-आगे जाना । मैं पीछे पीछे आऊँगी। पर जब तुम कोई अजीब आवाज़ सुनो तो डरना नहीं। सबको बस यही कहना मेरी अभागी पत्नी मेंढकी उसकी आ रही है। इवान ने मेंढकी की बात ली और वह अपने कमरे में जा कर सो गया ।

अगले दिन इवान और मेंढकी को उसके पिता से मिलने जाना था। इवान ने वैसा ही किया जैसा उसे मेंढकी ने करने को कहा था। इवान महल में अकेला आगे-आगे चला ,मेंढकी धीरे-धीरे उसके पीछे- पीछे चल रही थी। इवान को यूँ अकेला महल में आता देख उसके दोनों भाई जो पहले ही अपनी सुंदर पत्नियों के साथ वहाँ उपस्थित थे ।उन्होंने इवान का मज़ाक़ उड़ाते हुए कहा" भाई तुम्हारी पत्नी इतनी खूबसूरत है कि तुम उसे घर पर ही छोड़कर आ गए?"

अचानक महल में एक अजीब सा शोर हुआ,सभी लोग उस आवाज़ से सहम कर इधर-उधर देखने लगे। राजा ने कहा " यह कैसा शोर है?" इवान ने कहा " कुछ नहीं मेरी आ रही है।" तभी वहाँ छह सफ़ेद घोड़ों की सोने से बनी बग्गी हवा में से राजदरबार के बीचों-बीच आ कर रुकी और उसमें से एक परियों जैसी सुन्दर राजकुमारी उतरी । सबकी आँखें उस सुनहरी बग्गी में से उतरी राजकुमारी पर टिक गईं । ऐसा लग रहा था कि जैसे मानों आज से पहले किसी ने इतनी सुंदर राजकुमारी न देखी हो। राजकुमारी ने बग्गी में से उतरने के लिए अपना हाथ इवान की ओर बढ़ाया । इवान ने अपना हाथ बढ़ा कर राजकुमारी को बग्गी से नीचे उतारा वह स्वयं भी इतनी सुंदर राजकुमारी को देख कर हैरान रह गया था । राजकुमारी ने इवान के पास आते हुए धीरे से उसके कान में कहा" डरो मत मैं तुम्हारी मेंढकी हूँ ।" इवान मेंढकी के इस रूप को देख कर बहुत खुश

हुआ । उसने अपने पिता सहित सभी मेहमानों से अपनी पत अपनी पत्नी को मिलवाया। महल में आए सभी मेहमानों ने राजकुमारी बनी मेंढकी की बहुत प्रशंसा की। इवान के साथ वह भी अलग-अलग तरह के व्यजनों से भरी टेबल पर खाने के लिए बैठ गई। जब सब खाना खा रहे तो मेंढकी बनी राजकुमारी को जब इवान ने वाइन पीने के लिए दी तो उसने उसे अपने सीधे हाथ की बाजू में उसे डाल दिया। जब इवान ने उसे तले हुए हंस खाने के लिए दिए तो उसने उन्हें भी सबकी आँख बचा कर उल्टे हाथ की बाजू में उन्हें छिपा दिया। उसे ऐसा करते देख इवान के दोनों बड़े भाइयों की पत्नियों ने देख लिया और उन्होंने भी वैसा ही किया,जैसा इवान की पत्नी ने किया था । खाना खाने के बाद सबने इवान और उसकी पत्नी को नाचने के लिए आमंत्रित किया। इवान राजकुमारी बनी मेंढकी के साथ नाचने लगा। राजकुमारी ने नाचते-नाचते अपना सीधा हाथ हवा में लहराया तो वहाँ पर एक सुंदर सी झील बन गई । जब उसने अपना उल्टा हाथ हवा में लहराया तो वहाँ उस झील में दो सुंदर हंस पानी में तैरने लगे। राजकुमारी के इस जादू ने महल में आए सारे मेहमानों का मन जीत लिया था । सब उसकी तारीफ़ करते नहीं थकते थे । जब इवान के दोनों भाइयों की उनकी पत्नियों के साथ नाचने की बारी आई तो राजकुमारी बनी मेंढकी के इस जादू को देख कर दोनों भाइयों की पत्नियों ने भी वैसे ही अपने हाथों को हवा में लहराया । पर उनके हाथों से एक तरफ़ वाइन सबके उपर गिरी और दूसरे हाथ से तले हुए हंस मेहमानों पर गिर गए। राजा सहित सभी मेहमान उन पर ग़ुस्सा हो गए। इवान राजकुमारी बनी मेंढकी के साथ नाच रहा था । तभी मेंढकी बनी राजकुमारी ने इवान के कानों में कुछ कहा और फिर वह वहाँ से ग़ायब हो गई। इवान भी उसके पीछे-पीछे उसे ढूँढने भागा, लेकिन उसको मेंढकी बनी राजकुमारी कहीं नहीं दिखाई दी पर उसकी मेंढकी की खाल का खोल ज़रूर मिल गया था। वह बहुत उदास हुआ और मेंढकी का खोल लेकर घर आ गया। उसे लगा अगर वह इस मेंढकी के खोल को जला देगा तो हो सकता है मेंढकी राजकुमारी वापिस आ जाए। ऐसा सोच कर उसने मेंढकी का खोल जला दिया।जब मेंढकी बनी राजकुमारी घर आई तो वह अपने मेंढकी के खोल को ढूँढने लगी। उसने इवान से पूछा कि उसका मेंढकी का खोल कहाँ है? इवान ने उसे सारी बात बता दी । बेचारी राजकुमारी बनी मेंढकी रोने लगी। इवान ने उसके रोने का कारण पूछा तो मेंढकी ने बताया की उसका यह रूप एक जादूगर के श्राप के कारण है। अब कुछ ही दिनों में उसका श्राप ख़त्म होने वाला था और वह फिर से हमेशा के लिए राजकुमारी बनने वाली थी। लेकिन अब तुमने समय से पहले ही मेंढकी का खोल जला दिया इसलिए अब उसे फिर से जादूगर के महल में जा कर रहना होगा। इतना कहते ही वह एक हंस बन कर खिड़की से निकल आकाश में उड़ गई। इवान बहुत दुखी हुआ और मेंढकी को ढूँढने के लिए चल पड़ा। वह कई दिनों तक यूँ ही मेंढकी की खोज में चलता रहा। एक दिन उसे रास्ते में एक बूढ़ा मिला उसने इवान से पूछा वह कहाँ जा रहा है ।" इवान ने अपनी कहानी उस बूढ़े आदमी को सुनाई। बूढ़े आदमी ने कहा " तुमसे गलती तो हुई है। पर तुम अपनी पत्नी को बहुत प्यार करते हो इसलिए मैं तुम्हें यह गेंद देता हूँ , यह जादूई गेंद है इसे तुम जिस दिशा में फेंकोगे बस तुम्हें बिना डरे उसी दिशा में चलना होगा और वहीं तुम्हें तुम्हारी मंज़िल मिल जाएगी। इवान ने वैसा ही किया । जिस दिशा में इवान ने गेंद फेंकी वह उसी दिशा में आगे चलने लगा। रास्ते में उसे एक भालू मिला। इवान ने डर के मारे भालू को मारने के लिए जैसे ही अपने तरकश में से तीर निकाला ,भालू ने हाथ जोड़कर इवान से विनती की कि वह उसे न मारें, हो सकता है मैं आगे के सफ़र में तुम्हारे काम आऊँ? इवान ने भालू को नहीं मारा और वह आगे बढ़ गया। तभी वहाँ पर आसमान में एक सफ़ेद हंस उड़ा । इवान ने उसका शिकार रोकने के लिए जैसे ही अपना तीर खींचा ,हंस ने इवान से विनती करते हु कहा मुझे मत मारो हो सकता है मैं कभी तुम्हारे काम आऊँ ।इवान को उस पर दया आ गई और वह आगे बढ़ गया । कुछ दूर चलने पर उसे एक नीला ख़रगोश भागता हुआ दिखा। वह उसे वहीं छोड़ गेंद की दिशा में आगे बढ़ने लगा आगे जा कर उसे एक बड़ा सा समुद्र दिखाई दिया । समुद्र के पास रेत पर एक बड़ी सुनहरी मछली भूख के मारे तड़प रही थी। उसने इवान से

प्रार्थना की कि वह उसे समुद्र में ले जाए। इवान को उस पर दया आ गई उसने उस सुनहरी बड़ी मछली को समुद्र में धकेल दिया और गेंद के पीछे-पीछे चलने लगा। गेंद लुढ़कते हुए एक बड़े से मुर्ग़े के पैरों पर बनी बड़ी सी झोपड़ी के पास आ कर रूक गई । इवान ने झोपड़ी से कहा " ऐ झोपड़ी मेरी तरफ़ मुड़ो ।" झोपड़ी ने झट से अपना मुँह इवान की तरफ़ कर लिया। इवान ने झोपड़ी में अंदर झाँक कर देखा तो वहाँ एक बहुत बड़ी और बदसूरत चुड़ैल थी । जिसने इवान को देखते ही ग़ुस्से से पूछा " तुम यहाँ क्यों आए हो?"

इवान ने अपने तरकश से तीर निकालते हुए कहा" आपके यहाँ दूर से थके हुए आए मेहमानों से क्या इसी तरह बात की जाती है?"

इवान के हाथों में तीर कमान देखते ही वह चुड़ैल डर गई और उसने इवान से क्षमा मागते हुए उसका बहुत आदर सत्कार किया।इवान ने उसे अपनी पत्नी की कहानी बताई तो चुड़ैल ने इवान को बताया कि जिस जादूगर का श्राप उसकी मेंढकी को लगा है वह बहुत ही ख़तरनाक जादूगर है। उसी के महल में तुम्हारी पत्नी क़ैद है। उस जादूगर को कोई मार नहीं सकता ।उसकी जान एक काली सूई में बंद है, और काली सूई एक काले ख़रगोश के अंदर है। वह ख़रगोश एक बूढ़े ऑक के पेड़ में पिंजरे में बंद है। वह पेज घने जंगल में हैं और जादूगर उस पेड़ की निगरानी खुद करता है। ऐसे ही वह वह तुम्हारी पत्नी पर भी निगरानी करता है। इवान के कहने पर चुडैल ने उसे जंगल का रास्ता बता दिया। इवान ने अपनी पत्नी तक जल्दी पहुँचने के लिए चुडैल की आँधी बात सुनी और जंगल में पहुँच गया। जब वह जंगल में पहुँचा तो उसने वहाँ बहुत सारे बजे और मोटे मोटे ऑक के पेड़ देखें अब वह भूल गया की उसे कैसे क्या करना है।तभी उसने देखा उसे जंगल में मिला भालू अपने मित्रों साथ वहाँ से जा रहा था। इवान ने उस भालू को अपनी मुश्किल बताई । भालू और उसके साथियों ने कुछ ही देर में सारे ऑक के पेड़ों को उखाड़ उसको बीचोंबीच में अलग-अलग कर दिया। पेड़ों के बीच में से अलग होते ही काले ख़रगोश का पिंजरा ज़मीन पर गिर गया और पिंजरा खुलने से उसमें बंद काला ख़रगोश भागने लगा। तभी वहाँ पर जंगल वाला नीला ख़रगोश आया और उसने काले ख़रगोश को दबोच कर मार डाला। तभी उस काले ख़रगोश के अंदर से एक काला हंस निकल कर उड़ा और आकाश में अदृश्य हो गया। आकाश में उड़ते सफ़ेद हंस जिसको इवान ने छोड़ दिया था वह वहाँ आया और काले हंस का पीछा करने लगा। सफ़ेद हंस काले हंस को पकड़ने ही वाला था की काले हंस ने एक अंडा दे दिया वह अंडा समुद्र में गिर कर गया। सफ़ेद हंस ने काले हंस को मार गिराया। जब इवान ने देखा अंडा नीले समुद्र में गिर गया तो वह उदास हो कर रोने लगा। उसे लगा अब वह कभी भी अपनी पत्नी से नहीं मिल पाएगा। अचानक समुद्र में ऊँची-ऊँची लहरें उठीं उसने देखा एक बड़ी सी सुनहरी मछली उसके पास आ रही है। इवान को याद आया यह वहीं बड़ी सुनहरी मछली थी जिसे उसने समुद्र की रेत से उठा कर समुद्र के पानी में रखा था। वह बड़ी सुनहरी मछली अपने मुँह में काला अंडा दबा कर ला रही थी। उसने अंडा इवान को दिया ,इवान ने अंडा तोड़ा तो उसके अंदर से वह काली सूई निकली जिसमें जादूगर की जान बंद थी। इवान वह काली सूई लेकर जादूगर के महल पहुँचा और उसने रात को जब जादूगर सो रहा था वह सूई उसके शरीर में चुभा दी जिससे जादूगर की मृत्यु हो गई और उसके महल में कैद बहुत सारी सुंदर राजकुमारियाँ आज़ाद हो गई। इवान को उसकी मेंढकी राजकुमारी को भी जादूगर के श्राप से हमेशा हमेशा के लिए मुक्ति मिल गईं। इवान और राजकुमारी ने भी जानवरों का धन्यवाद किया और ख़ुशी ख़ुशी अपने महल में जा कर रहने लगे।

हर औरत की कहानी

(हिन्दी कहानी)

डॉ. निशी सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
एम.एम.वी. (पी.जी.) कालेज, किदवई नगर,
कानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सुमन सिंह, मेरी मौसी, जो अब बासठ वर्ष की हैं, अपनी जीवन-कथा को किसी व्यक्तिगत त्रासदी की तरह नहीं, बल्कि हर औरत की कहानी की तरह सुनाती हैं। यह उस स्त्री की कथा है जिसने पुरुष-प्रधान समाज में अधीनता और संरक्षण के नाम पर थोपे गए नियंत्रण को स्वीकार नहीं किया।

वह कभी एक नाज़ुक-सी युवती थीं। सांवला रंग, तीखी बुद्धि, लंबे बाल और दुबला शरीर। नानाजी के मुख्य अभियंता पद से सेवानिवृत्त होने के बाद वह अपने माता-पिता के साथ पैतृक गाँव में रहती थीं। परिवार की सबसे छोटी बेटी होने के कारण वह उस समय गाँव के विद्यालय में कक्षा ग्यारह की छात्रा थीं।

विद्यालय का प्रधानाध्यापक उन पर आसक्त था। उसका व्यवहार शिक्षा से परे था, जो धीरे-धीरे छेड़छाड़ में बदल गया। सुमन ने उसका स्पष्ट विरोध किया। इनकार किया। प्रतिशोध में उसने दो वर्षों तक उन्हें कक्षा उत्तीर्ण नहीं करने दिया। वे तभी पास हो सकीं जब किसी कारणवश वह प्रधानाध्यापक उस विद्यालय से स्थानांतरित हो गया।

वह अपनी माँ से कहा करती थीं,

"अम्मा, हेडमास्टर कहता है कि मैं बहुत सुंदर हूँ। मैं सुंदर क्यों हूँ? मुझे यह बहुत असहज लगता है..."

और वहीं रुक जाती थीं, अपनी माँ को और कष्ट नहीं देना चाहती थीं।

समय बीता। समाज ने विवाह का दबाव डाला। एक प्रतिष्ठित डॉक्टर परिवार से रिश्ता आया, जिसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया। यह उनकी उस उम्र की नासमझी थी। उन्होंने मन ही मन गाँव के एक युवक को चुन लिया था, जो उनकी सुंदरता और आकर्षण की प्रशंसा करता था और बार-बार कहता था कि यदि उससे विवाह न हुआ तो वह मर जाएगा।

उस युवक की चिंता में और अपनी बचकानी भावनाओं के कारण, उन्होंने अपने लिए आए सभी विवाह प्रस्ताव ठुकरा दिए।

सबसे गहरा आघात तब पहुँचा, जब वह युवक बिना कोई सूचना दिए अपने ही समुदाय की किसी अन्य लड़की से विवाह कर बैठा। सुमन अपने ही निर्णय पर लज्जित रह गईं। हृदय टूट चुका था। उन्होंने तब किसी से भी विवाह करने के लिए सहमति दे दी। सचमुच, किसी से भी। उन्होंने स्वयं को पूरी तरह भाग्य के हवाले कर दिया।

कहानी के इस मोड़ पर वह ठहरती हैं, फिर हल्के से हँसती हैं। वह हँसी जीवन से समझौते की नहीं, अनुभव की है।

"किस्मत ने भी मेरे साथ कोई भलाई नहीं की," वह कहती हैं।

पति क्रूर और असहिष्णु निकला। उसके साथ रहना असंभव था। उन्होंने उसे हमेशा के लिए छोड़ने का निर्णय लिया और अपनी माँ के घर लौट आईं।

जब कोई और विकल्प शेष नहीं रहा, तब उन्होंने स्वयं से एक वचन लिया। वे पढ़ेंगी। वे उदाहरण बनेंगी।

नौ महीने के शिशु के साथ उन्होंने फिर से पढ़ाई शुरू की। आर्थिक तंगी थी, सामाजिक दबाव था, पर उनका ईश्वर में विश्वास अडिग रहा। उन्होंने किसी से सहायता नहीं ली। अपने जीवन की बागडोर उन्होंने स्वयं संभाली।

साधारण बातचीतों में वह कहा करती थीं,

"कभी-कभी लगता है कि मेरी सुंदरता ही मेरे जीवन की सारी कठिनाइयों की वजह बनी। या शायद सिर्फ़ औरत होना।"

फिर स्वयं को टोकते हुए जोड़तीं,

"नहीं, असल में हमारे समाज के पुरुष हर औरत को निशाना बनाते हैं। यदि स्त्री थोड़ी भी असावधान हो, तो वे उसे अपनी सुविधा की वस्तु बना लेते हैं। चाहे वह प्रधानाध्यापक हो या प्रेम का दावा करने वाला युवक।"

फिर वह कहती थीं,

"हमारा समाज पुरुषों को एक ही साँचे में ढाल देता है, ताकि वे स्त्रियों को नियंत्रित कर सकें।"

और अंत में उनका यह वाक्य ठहर जाता है—

"हे भगवान, अगर किसी तरह मेरी बेटी होती, तो मैं चाहती कि वह आत्मनिर्भर हो, गरिमापूर्ण हो और उन पुरुषों के प्रति सजग हो, जो स्त्रियों को फँसाते और अपमानित करते हैं।"

लंबे वर्षों के मौन संघर्ष के बाद उन्हें सरकारी शिक्षण सेवा में नौकरी मिली। वे अपने पुत्र के साथ शहर में बस गईं। पुत्र बड़ा हुआ, उसका विवाह हुआ, और अब बहू उनकी देखभाल करती है।

पर सम्मान अब भी अधूरा रहा।

एक दिन उन्होंने अनजाने में बहू को कहते सुना,

"मम्मीजी कहती हैं कि उन्होंने पूरी ज़िंदगी अकेले गुज़ारी। हमारे समाज में यह कैसे संभव है? ज़रूर कुछ छुपा रही होंगी। कुछ तो गड़बड़ है।"

वही हँसी फिर लौट आई। वही पुरानी हँसी, जो उन्होंने जीवन भर ओढ़ी थी। अब अपनी ही बहू से।

आज सुमन सिंह उस समाज की एक मौन दर्शक हैं, जहाँ स्त्रियों के साहस, उनके संघर्ष और उनके आत्मसम्मान को सम्मान नहीं मिलता, केवल संदेह और उपहास मिलता है।

यही कारण है कि वह अपनी कहानी को हर औरत की कहानी कहती हैं।

संवेदना का संघर्ष

(हिन्दी कहानी)

- डॉ. शुभी मिश्रा
परास्नातक, ग्लोबल चेंज एंड सस्टेनेबिलिटी,
यूनिवर्सिटी ऑफ विएना, ऑस्ट्रिया कंसल्टेंट, यूएनडीपी, सऊदी अरब

शहर के प्रतिष्ठित परिवारों में से एक, शुक्ला सदन, अपनी सादगी और परंपरा के लिए जाना जाता था। शुक्ला जी बैंक में नौकरी करते थे, और उनके दिवंगत पिता शहर के विख्यात वकील और कई अधिकारिक पदों पर आसीन रहे थे। शुक्ला जी की पत्नी, जिन्हें परिवार में शुक्लाइन कहा जाता था, एक शिक्षित महिला थीं। उन्होंने अपनी पीएचडी की पढ़ाई स्थगित कर दी थी और फिलहाल अपनी दो छोटी बेटियों की परवरिश में व्यस्त थीं। बड़ी बेटी चार साल की थी और छोटी लगभग डेढ़ साल की।

शुक्ला सदन की दिनचर्या का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थी पुत्तन, एक घरेलू कामगार, जिसका परिवार पीढ़ियों से शुक्ल परिवार की सेवा करता आ रहा था। पुत्तन ने हाल ही में एक बेटे, नाटू, को जन्म दिया था और अपनी जीविका के लिए मोहल्ले के तीन-चार घरों में काम करती थी। वह घरेलू हिंसा का शिकार थी और आर्थिक तंगी से जूझते हुए भी अपने बेटे का पालन-पोषण करने की कोशिश करती थी।

एक दिन की बात है, सर्दियों का मौसम था। पुत्तन काम करने शुक्ला सदन आई, लेकिन उसका चेहरा उतरा हुआ और शरीर थका हुआ लग रहा था। शुक्लाइन जी ने तुरंत उसकी हालत को भांप लिया। उन्होंने उसे छुट्टी दी और डॉक्टर को दिखाने के लिए पैसे भी दिए।

कुछ दिन तक पुत्तन का कोई अता-पता नहीं था। चौथे दिन, पुत्तन नाटू को गोद में लिए शुक्ला सदन के आंगन में आकर बैठ गई। उसकी आंखों में आंसू थे। कांपती आवाज़ में उसने कहा, "भाभी, डॉक्टर ने कहा कि मुझे टीबी हो गई है।" उसकी हालत इतनी खराब थी कि वह अपने बेटे को गोद में संभालने तक में असमर्थ थी।

पुत्तन की हालत देख शुक्लाइन का हृदय करुणा से भर गया। उन्होंने उसे अपने घर में ठहरने की अनुमति दी और तुरंत बरामदे में बिस्तर, कंबल और अंगीठी की व्यवस्था की। लेकिन पुत्तन का बेटा भूख से रो रहा था। शारीरिक कमजोरी के कारण पुत्तन अपने बेटे को दूध नहीं पिला पा रही थी।

शुक्लाइन से यह दृश्य देखा नहीं गया। वह खुद भी एक मां थीं और अपनी छोटी बेटी को स्तनपान करा रही थीं। उन्होंने बिना कोई झिझक नाटू को गोद में लिया और उसे दूध पिलाया। ठीक उसी समय शुक्ला जी घर लौटे। पुत्तन का बिस्तर और यह दृश्य देखकर वह दंग रह गए।

शाम का वह वक्त घर में विवाद लेकर आया। शुक्ला जी अपनी पत्नी पर क्रोधित थे। उनकी आंखों में चिंता और असमंजस स्पष्ट झलक रहा था। कुछ देर चुप रहने के बाद उन्होंने शुक्लाइन से कहा, 'इस तरह का कदम उठाने से पहले थोड़ा सोच तो लिया होता... घर में छोटे बच्चे हैं, और स्थिति भी इतनी गंभीर है।

शुक्लाइन शांत थीं लेकिन उनकी आंखों में दृढ़ता थी। "वह कहां जाती, शुक्ला जी? वह यहां की पीढ़ियों की सेविका है। अगर हम उसे सहारा नहीं देंगे, तो कौन देगा?"

बहस बढ़ने लगी। शुक्ला जी का तर्क था कि टीबी एक संक्रामक बीमारी है, और घर में दो छोटे बच्चों के साथ यह जोखिम भरा है। शुक्लाइन का कहना था कि नैतिकता के आधार पर पुत्तन की मदद करना उनका कर्तव्य है। अंततः, दोनों के बीच बातचीत बंद हो गई।

पुत्तन की हालत दिनों-दिन खराब होती गई। पड़ोस के अवस्थी परिवार ने उसे अपने घर में पनाह दी। लेकिन कुछ ही दिनों बाद खबर आई कि पुत्तन का निधन हो गया है। नाटू को उसके पति के बड़े भाई ने केवल इसलिए अपना लिया कि बड़े होकर वह घर की आय का साधन बनेगा।

पुत्तन की मृत्यु ने शुक्लाइन को गहरे सोच में डाल दिया। समाजशास्त्र की पढ़ाई करने वाली इस महिला ने महसूस किया कि समाज में नैतिकता की बातें करना और उन्हें अमल में लाना दो बिल्कुल अलग बातें हैं। वह ग्लानि से भरी रहीं कि वह पुत्तन के लिए और कुछ न कर सकीं।

समय के साथ पुत्तन की यादें अतीत बन गईं, लेकिन शुक्लाइन के भीतर एक बदलाव आ चुका था। जीवन के इस पहलू ने उनके सोचने का तरीका बदल दिया। उनकी गंभीरता और संवेदनशीलता अब उनकी पहचान का हिस्सा बन चुकी थी।

चाय पर चर्चा

(हिन्दी कहानी)

अभिषेक दत्ता चौधरी

शोध छात्र, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मेरे पिता को यह भ्रम था कि मैं अपना कीमती फ्री टाइम लिखने में बर्बाद कर रहा हूँ।
वे चाहते थे कि मैं अपना समय किसी कंस्ट्रक्टिव काम में लगाऊँ।
जबकि सच्चाई यह थी कि मैं शब्दों से जिंदगी जोड़ तोड़ कर देख रहा था। मैं जो लिखता हूँ – वही मेरा कंस्ट्रक्शन साइट है
कॉफी जगह । की सीमेंट और हैं लगते शब्द जगह की ईंटों यहाँ बस—
लिखना उन्हें अधूरा काम लगता है—
ना नौकरी कुछ। हूँ लटका में बीच ;शौक ना ,
उन्हें यह विश्वास है कि फ्री टाइम नाम की चीज़ इंसान को केवल दो ही कामों में लगानी चाहिए—
या तो पैसा कमाने में,
या कम से कम ऐसा दिखाने में कि भविष्य में पैसा कमाया जाएगा।
आखिरकार एक दिन उन्होंने कहा—
“इतना लिखते हो, कहीं छपवाते क्यों नहीं?”
मैंने बताया कि छपवाया है,
सैकड़ों एंथोलॉजीज़ में। थोड़ाथोड़ा।-
पापा ने वैसा ही चेहरा बनाया जैसा कोई दुकानदार बनाता है जब आप कहें—
”एक किलो नहीं, सौ ग्राम देना”
बोले—
“अरे तो क्या हुआ! अपनी किताब छपवाने की बात ही कुछ और होती है।”
मैने तर्क दिया-
खर्चाकिश्तें। की आत्मा ,उद्योग प्रकाशन ,धोखा ,
पर पापा पहले ही कनक्लूज़न पर पहुंच चुके थे,
और अगले दिन घर में समाधान ले आया गया।
नाम था,कपधारी बंकू —
काम ,संपादक में प्रेस साहित्य राजमहल —
आत्मविश्वास। ज़्यादा से अनुभव —
घर में घुसते ही बोले—
“मैं इन्हें कवि बना कर ही छोड़ूँगा।”
ऐसे बोले जैसे अभी-अभी आए हो पर्सनली डील करके भगवान से
फिर फेसबुक खुला।
हर दूसरी तस्वीर में कोई ,“लेखक बड़ा”

हर तीसरी पोस्ट में कोई ।“मुलाक़ात साहित्यिक”
अगर फेसबुक सच बोलता तो बंकू भईया अब तक साहित्य अकादमी के अध्यक्ष होते
मैंने एक सीधा सवाल पूछा—
"रॉयल्टी कितनी मिलेगी?”
बंकू भईया हँस दिए रॉयल्टी, वो तो फेमस कवियों को मिलती है, बाकी साहित्य तो भावना से चलता है
मतलब साफ़ था ,खर्चा करना पड़ेगा!!
उन्होंने मेरी कुछ कविताएँ देखीं,
एक किताब उठाई और बोले—
“इसे ले चलता हूँ, चर्चा करवाऊँगा।”
चर्चा ऐसी कि दो महीने तक कोई ख़बर नहीं, और न ही किताब वापस मिली।
मैंने व्हाट्सएप किया—
“भईया, किताब?”
जवाब आया—
“ओके।”
यह साहित्यिक दुनिया का सबसे सुविधाजनक शब्द है “ओके”
ना वादाज़िम्मेदारी। ना ,मना ना ,
खैर एक दिन किताब लौटी।
नहीं-
लौटी नहीं, किसी तरह से लौटा कर लाई गई।
नीचे की ओर एकगहरा छेद,
आधे से ज़्यादा पन्ने भूरे,
और पीछे के कवर पर एक बड़ा सा भूरा धब्बा चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा था—
“मुझ पर चाय गिरी है!”
मैं किताब लेकर पापा के पास गया।
पापा उस समय अपने ट्रूलवमें। ध्यान डिजिटल थे। व्यस्त साथ के—हेडफोन और मोबाइल—
दोकी। कोशिश बार तीन-
कोई प्रतिक्रिया नहीं।
आख़िरकार मैंने उनके चेहरे के सामने किताब लहरानी शुरू की।
कई कोशिशों के बाद हेडफोन उतरे।
पापा बोले—
"बंकू ने कहा किताब पर पानी गिर गया था।”
मैंने कहा,
“पानी?”
यह पानी ऐसा था जो चाय की खुशबू देता है बिस्कुट की संगत में रहता है और किताबों को डुबोकर सुखाया जाता है।

मैंने कहा—
“पापा, यह किताब पानी से नहीं,पूरी चाय से नहलायी गई है।“
मैंने पूरी थ्योरी रख दी—
“बैंकू महोदय चाय पीते-पीते किताब पढ़ रहे होंगे। बिस्कुट की जगह किताब ही चाय में डुबो दी। फिर डैमेज कंट्रोल के लिए घबराकर छेद कर सुखाया… पर निशान रह गए।साहित्य है,
वह सबूत छोड़ देता है।“
मैं चिल्लाया—
“रीडिक्यूलस।”
पापा ने पूछा—
“एं? कुछ कहा?”
मैंने कहा—
"नहीं, कुछ नहीं।”
हेडफोन वापस कान में चले गए थे।
और समाधि मोड ऑन हो गया था।
उसी वक्त मुझे समझ आ गया था कि इस देश में कवि बनने से पहले, किताब को चाय पीनी पड़ती है धब्बे, है। पड़ता सीखना रहना चुप को लेखक और,हैं पड़ते सहने
और बंकू भईया?
वो आज भी किसी और घर में चाय पीते-पीते कह रहे होंगे कि
“मैं इन्हें कवि बना कर ही छोड़ूँगा।”

‘खबरदार’करती हैं कुर्रतुल-ऐन हैदर की कहानियां

(आलेख)

- डॉ. धनंजय चोपड़ा

पाठ्यक्रम समन्वयक, सेन्टर ऑफ मीडिया स्टडीज,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

किसी लेखक का पत्रकार होना, उसे अपने पाठकों के बेहद नजदीक ले आता है। कथाकार प्रेमचंद इस परंपरा के अग्रज रहे हैं। इसी परंपरा में उर्दू की बड़ी लेखिका एनी आपा यानी मुसन्निफा कुर्रतुल ऐन हैदर का नाम भी लिया जा सकता है। वे कहानियां लिखते समय अपने पाठक को तमाम सूचनाओं, विद्रूपताओं और आने वाले खतरों से आगाह करती चलती थीं। दरअसल एनी आपा अंग्रेजी भाषा की बड़ी पत्रकार भी रहीं थीं। वे बी.बी.सी. लंदन से जुड़ी रहीं। ‘द टेलीग्राफ की रिपोर्टर और इम्प्रिंट पत्रिका’ की प्रबन्ध सम्पादक रहीं। इलेस्ट्रेड वीकली पत्रिका की सम्पादकीय टीम का हिस्सा रहीं। खूब घूमा-खूब फिरा और जो दिखा, जो भोगा, जो जिया, उसे लिखकर लोगों को खबर-दार किया। आग का दरिया, पतझड़ की आवाज, कारे जहां दराज हैं और आखिरी शब के हमसफर जैसी कई कृतियां हैं, जो अपने समय व समाज के सच को इस तरह प्रस्तुत करती हैं, मानो कोई रिपोर्टर ‘जो देखा-सो लिखा’ की तर्ज पर खबर लिख रहा हो। सच कहा जाए तो कुर्रतुल ऐन हैदर की अधिकांश रचनाएं उनके भारत के सांस्कृतिक अतीत के विशेष लगाव और वर्तमान के साथ उसके सम्बन्ध-निरूपण के स्वभाव की बेजोड़ मिसाल प्रस्तुत कर रही हों।

‘आग का दरिया’ जैसी अद्भुत कृति रचने वाली कुर्रतुल ऐन हैदर किस्सागोई के बहाने जब अपने समय व समाज का अतीत और वर्तमान बड़ी ही साफगोई से रखती हैं, तो लगता है कि हम शब्दों के साथ-साथ आगे बढ़ रहे हैं। वास्तव में ऐनी आपा की यह खूबी महज इसलिए नहीं कि वे एक बेहतरीन किस्सागो थीं, बल्कि इसलिए कि वे एक प्रतिभाशाली पत्रकार भी रहीं। वास्तव में बहुत कम लोग जानते हैं कि उर्दू की बड़ी लेखिका एनी आपा यानी मुसन्निफा कुर्रतुल ऐन हैदर अंग्रेजी भाषा की बड़ी पत्रकार भी रहीं। वे बी0बी0सी0 लंदन से जुड़ी रहीं।

कुर्रतुल-ऐन-हैदर की उम्र जब मात्र 32 वर्ष थी, तब उन्होंने ’आग का दरिया’ जैसा एक महत्वपूर्ण उपन्यास लिखा। ’आग का दरिया’ वास्तव में आग का दरिया ही था। इस उपन्यास ने लोगों के दिलों में ऐसी आग लगाई थी, जिसकी तपिश आज भी महसूस होती है। किस्सागोई के बहाने इतिहास कहने की यह शैली कुर्रतुल ऐन हैदर की अपनी विशेषता थी। बुद्ध के युग से लेकर ब्रिटिश हुकूमत के दौर और उसके बाद आजाद हिन्दुस्तान की जैसी यथार्थ तस्वीर उन्होंने कथा के शिल्प में बुनी है, वह इतिहास को देखने की एक नई नजर देती हैं। ’आग का दरिया’ पुस्तक आज किसी परिचय का मोहताज नहीं। 1959 में जब आग का दरिया प्रकाशित हुआ तो भारत और पाकिस्तान के अदबी हल्कों में तहलका मच गया। भारत विभाजन पर तुरन्त प्रतिक्रिया के रूप में हिंसा, रक्तपात और बर्बरता की कहानियां तो बहुत छपीं, लेकिन अनगिनत लोगों की निजी एवं एक सांस्कृतिक-ऐतिहासिक त्रासदी के रूप में कुर्रतुल ऐन हैदर ने ही प्रस्तुत किया है। यह ऐनी आपा ही थीं, जिन्होंने उस सच को बहुत करीब से महसूस किया था, जिससे लोग बंटवारे के समय रू-ब-रू हुए थे। यही वजह थी कि वे लोगों की आहत मानसिकता और घायल मनोवैज्ञानिक अलगाव के मर्म को बड़ी ही शिद्दत के साथ प्रस्तुत कर पाने में सफल हुईं। वास्तव में ऐनी आपा ने एक न भूल पाने वाली त्रासदी तो एक महान उपन्यास की शक्ल देकर हमारा ध्यान आकर्षित किया।

इस उपन्यास का प्रारम्भ आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व भारतीय सभ्यता के उस परिप्रेक्ष्य में होता है जो शरावती और पाटलिपुत्र में विकसित हुई। मुसलमानों के आगमन से इस सभ्यता में नये तत्व शामिल होना शुरू हुआ। समय की धारा में बहते-बहते गौतम, नीलाम्बर, हरिशंकर, चम्पा, अहमद, कमाल, तलअत आदि आज के भारत में पहुंच जाते हैं। आग का दरिया के महत्व और लोकप्रियता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि उसके प्रकाशन के बाद जाने-माने शायर निदा फाजली ने कहा था- मोहम्मद अली जिन्ना ने हिन्दुस्तान के साढ़े चार हजार सालों की तारीख (इतिहास) में से मुसलमानों के 1200 सालों की तारीख को अलग करके पाकिस्तान बनाया था। कुर्रतुल ऐन हैदर ने नॉवल 'आग का दरिया' लिख कर उन अलग किए गए 1200 सालों का हिन्दुस्तान में जोड़ कर हिन्दुस्तान को फिर से एक कर दिया। अंग्रेजों द्वारा भारत के सांस्कृतिक मानस में दखल और सेंधमारी का इतिहास उपन्यास बहुत विश्वसनीय तरीके से हमें बताता है। यह उपन्यास वास्तव में किस्सागोई की सांस्कृतिक इतिहास का सबसे प्रामाणिक और भरोसेमंद दस्तावेज है।(1)

ऐनी आपा खबरची की तरह लिखतीं और अपने पाठकों के समक्ष एक ऐसा दृश्य उत्पन्न कर देतीं कि सब कुछ आंखों के सामने प्रस्तुत होता दिखने लगा। 'पतझड़ की आवाज' कहानी(2) की इन पंक्तियों से इस बात को और अधिक बेहतर ढंग से समझा जा सकता है--- ''अलीगढ़ गर्ल्स कॉलेज के दिन मेरे जीवन के सबसे अच्छे दिन थे-क्या स्वप्न भरे मदमाते दिन थे। मैं भावुक नहीं, लेकिन अब भी जब कॉलेज का सहन, लॉन, घास के ऊँचे पौधे पेड़ों पर झुकी बारिश, नुमाइश के मैदान में घूमते हुए काले बुर्कों के परे हास्टल के सँकरे-सँकरे बरामदों, छोटे-छोटे कमरों का वह कठोर वातावरण याद आता है तो जी डूब-सा जाता है। एम0एस0सी0 के लिए फिर दिल्ली आ गयी। यहाँ कॉलेज में मेरे साथ ये ही सब लड़कियाँ पढ़ती थीं- सईदा, रेहाना, प्रभा, फलानी- ढिमाकी। मुझे लड़कियाँ पसन्द नहीं आयीं- मुझे दुनिया में अधिकतर लोग पसन्द नहीं आये। अधिकतर व्यर्थ ही समय नष्ट करने वाले हैं। मैं बहुत दम्भी थी। सौन्दर्य ऐसी चीज है कि आदमी का दिमाग खराब होते देर नहीं लगती। फिर मैं तो लाखों में एक थी-शीशे का एक झलकता हुआ रंग, लालिमा लिये हुए सुनहरी बाल, एकदम हृष्ट-पुष्ट, बनारसी साड़ी पहन लूँ तो बिलकुल कहीं की महारानी लगती थी। ......ये विश्वयुद्ध के दिन थे या शायद युद्ध इसी साल खत्म हुआ था, मुझे ठीक से याद नहीं है। बहरहाल, दिल्ली पर बहार आयी हुई थी। करोड़पति कारोबारियों और भारत-सरकार के बड़े-बड़े अफसरों की लड़कियाँ -हिन्दू-सिख-मुसलमान.......लम्बी-लम्बी मोटरों में उड़ी-उड़ी फिरतीं। निज नयी पार्टियाँ, उत्सव, हंगामे-आज इन्द्रप्रस्थ कॉलेज में ड्रामा है, कल मिरांडा हाउस में, परसों लेडी इरविन कॉलेज में संगीत-सभा है। लेडी हार्डिंग और सेंट स्टीफेन्स कॉलेज, चेम्सफोर्ड क्लब, रोशन आरा, अमीरिल जीमखाना- मतलब यह कि हर ओर अलिफ-लैला के बाल बिखरे पड़े थे हर स्थान पर नौजवान फौजी अफसरों और सिविल सर्विस के अविवाहित पदाधिकारियों के ठट डोलते दिखाई देते। एक हंगामा था।''

इसी तरह 'फोटोग्राफर' कहानी भी एक अलग ढंग का आभास देती है। जीवंतता से भरी यह कहानी एक फोटोग्राफर की जद्दोजहद के साथ-साथ फोटोग्राफी से जुड़ी स्मृति परम्परा से भी जोड़ती है। कहानी कुछ इस तरह शुरू होती है-''मौसमे-बहार के फूलों से घिरा बेहद नजरफरेब गेस्टहाउस हरे-भरे टीले की चोटी पर दूर से नजर आ जाता है। टीले के ऐन नीचे पहाड़ी झील है। एक बल खाती सड़क झील के किनारे-किनारे गेस्टहाउस के फाटक तक पहुँचती है। फाटक के नजदीक वालरस की ऐसी मुँछोंवाला एक फोटोग्राफर अपना

साजो-सामान फैलाए एक टीन की कुर्सी पर चुपचाप बैठा रहता है। यह गुमनाम पहाड़ी कस्बा टूरिस्ट इलाके में नहीं है इस वजह से बहुत कम सय्याह इस तरफ आते हैं। चुनांचे जब कोई माहे-अस्ल मानने वाला जोड़ा या कोई मुसाफिर गेस्टहाउस में आ पहुँचता है तो फोटोग्राफर बड़ी उम्मीद और सब्र के साथ अपना कैमरा सँभाले बाग की सड़क पर टहलने लगता है। बाग के माली से उसका समझौता है। गेस्टहाउस में ठहरी किसी नौजवान खातून के लिए सुबह-सबेरे गुलदस्ता ले जाते वक्त माली फोटोग्राफर को इशारा कर देता है और जब माहे-अस्ल मनानेवाला जोड़ा नाश्ते के बाद नीचे बाग में आता है तो माली और फोटोग्राफर दोनों उनके इंतजार में चौकस मिलते हैं।''[3] दरअसल ऐनी आपा रहीस खानदान में पली-बढ़ीं और फिर सब कुछ बिखरते हुए उन्होंने देखा। यही वजह रही को दुनिया को देखने और समझने का नजिरया और रचनाकारों से जुदा ही था। वे अपनी कहानियों में प्रायः इठलाती मिल जाती हैं तो कहीं-कहीं बहुत संजीदा होकर बहुत से अहम सवाल उठाते हुए भी मलती हैं। बिंदास होकर अपने समय और समाज के साथ लोगों की फितरतों को दर्ज करना उनका बहुत प्यारा शगल था। अपनी कहानी लकड़बग्गे[4] की हंसी में वह अपनी एक पात्र से कहलवाती हैं- ''वह मेरा शौहर नहीं है। मैं उससे कलकत्ता रेसकोर्स पर मली थी। वह एक मालदार जोकी है। बीबी-बच्चोंवाला और परवर्ट। मैं छः महीने से इसके साथ हूं। मगर अब बोर हो चुकी हूं और इसे छोड़ना चाहती हूं। मगर वह मुझे छोड़ने को तैयार नहीं है। मैं उससे इतना माल बटोर चुकी हूं जतना साल भर में भी नहीं कमा सकती थी।'' – ऐनी आपा यह सब उस समय लिख रही थीं, जब महिला लेखिकाएं इस तरह से लिखने में परहेज बरता करती थीं। उनका लेखन उनकी खुद्दारी और बेबाकपन का ही उदाहरण प्रस्तुत करता मिल जाता है। अब चाहे वह आवारागर्द कहानी हो या फिर हसब-नसब, सभी में वे बेलौस-बिंदास लिखतीं। ऐसा लगता कि वे किसी भी तरह के कठमुल्लेपन को सिरे से खारिज करने की मुहिम चला रही हों।

आपा नितांत रूप से उस भाषा में बात कहतीं, जो आम आदमी की अपनी भाषा होती है। वे ऐसे शब्दों का प्रयोग करतीं, जो हमारे अपने शब्दकोश के होते हैं। उनकी लगभग सभी कहानियों में बोली-बानी और बतकही बतियाने का जो स्वाद मिलता है, वही उन्हें लगातार पढ़ते रहने की ताकत देता है। एक बानगी देखिए- ''सहन का फाटक खुला हुआ था। बाहर दो तांगे खड़े थे। दो-तीन लुकंदरे सामान उतरवा रहे थे। एक स्याहफ़ाम लेकिन तीख नक्शवाली औरत सुर्ख़ जार्जट की सारी पहने हरी बनारसी शाल में लिपटी दालान में मोंढ़े पर बैठी इतमीनान से घुटने हिला-हिलाकर नौकरों को अह्काम दे रही थी। एक उसकी हमशक्ल तेरह-चौदहसाला टर्री शक्लवाली उछाल छक्का-सी लड़की कासनी शलवार-कमीज पहने फर्श पर उकड़ूं बैठी एक बक्स खोलनेमें मशगूल थी। इतने में अंदर से अज्जू भाई-जी हां, हमेशा की तरह बांके छबीले अज्जू भाई दलान में आए। झुककर उस चुड़ैल से कुछ कहा। वह कहकहा लगाकर हंसी।– वास्तव में पाठकों से बतियाने की शैली ही उन्हें ऐनी आपा कहे जाने का दर्जा दिलाने में कामयाब हुई थी।''[5]

पश्चिम और भारत की गंगा-जमुनी संस्कृति का अप्रतिम उदाहरण प्रस्तुत करने वाली ऐनी आया का जन्म अलीगढ़ के एक नामी-गिरामी परिवार में हुआ। पिता सैय्यद सज्जाद हैदर 'यलदरम' अंग्रेजी हुकूमत में अफगानिस्तान, तुर्की आदि देशों में राजदूत रहे। ऐसा माना जाता है कि 'यलदरम' नई उर्दू की दास्तानगोई के पहले अधिकृत उस्ताद थे। उनकी मां नजर सज्जाद भी एक प्रसिद्ध कहानीकार थीं और उन्हें उर्दू का जेन आस्टिन कहा जाता था। जाहिर है कि ऐनी आपा का बचपन एक लिक्खाड़ परिवार व परिवेश में बीता। ऐनी

आपा की पढ़ाई की शुरूआत अलीगढ़ में हुई और उन्होंने यहीं से इण्टरमीडिएट की परीक्षा पास थी। बाद में लखनऊ से बी0ए0 किया। अट्ठारह बरस की उम्र में पहली किताब 'शीशे का घर' प्रकाशित हुई और फिर लिखने का सिलसिला चल पड़ा। इसके अगले ही बरस दूसरी किताब 'मेरे भी सनमखाने' प्रकाशित हुई और खूब चर्चित हुई। कुर्रतुल ऐन हैदर लिखती गयीं और वे खूब पढ़ी जाती रहीं। बंटवारे की आग झेली और अपने परिवार को बिखरते देखा। भाई-बहन पाकिस्तान चले गए और वे भारत में पिता के साथ रह गईं। पिता चल बसे तो भाई के साथ पाकिस्तान चली गईं। मन नहीं लगा और पहले लंदन में बी.बी.सी. जुड़कर काम किया और फिर भारत लौट आयीं। पत्रकारिता से जुड़ी और साहित्य साधना को बात कहने का माध्यम बनाया। ढेर सारी कहानियां लिखीं। उपन्यास लिखा। रिपोर्ताज और अनुवाद भी। साहित्य अकादमी पुरस्कार व ज्ञानपीठ पुरस्कार से नवाजी गयीं। ऐनी आपा ने जो लिखा बिंदास लिखा और जो कहा बिना किसी लाग-लपेट के कहा। कभी कथाकार कमलेश्वर ने कहा था-' अमृता प्रीतम, इस्मत चुगताई और कुर्रतुल ऐन हैदर जैसी विद्रोहिणियों ने हिन्दुस्तानी अदब को पूरी दुनिया में एक अलग स्थान दिलाया। जो जिया, जो भोगा या जो देखा, उसे लिखना शायद बहुत मुश्किल नहीं, पर जो लिखा वह झकझोर कर रख दे, तो तय है कि बात कुछ खास ही होगी।' तय है कि कुर्रतुल ऐन हैदर ने जो भोगा था, वह सामने इसी रूप में आना था। अपने समय का समाज, राजनीति, व्यवस्था व सत्ता को वे बहुत करीब से देख रहीं थीं और यही वजह थी कि उन्होंने जो कुछ लिखा-कहा, वह बहुत कुछ अपना सा लगा उनके पाठकों को। वे लिखती हैं कि -'हिन्दुस्तानी तहजीब किसी अखबार की सुर्खी नहीं, जो दूसरे दिन भुला दी जाए। यह तहजीब दुनिया के इतिहास का उन्वान है। जो अपनी जगह महफूज है और दूसरी तहजीबों को अपनी ओर खींचता है।'[(6)]

कुर्रतुल ऐन हैदर के लेखन की यह अभिलाक्षणिक विशेषता उनकी परवर्ती कृतियों में भी अबाध रूप से बनी रही। 1969-86 की अवधि में प्रकाशित उनके उन्यास 'कारे-जहां दराज है' और 'आखिरे-शब के हमसफर' भी हमारे लंबे इतिहास के पन्ने हैं। 'कारे- जहां दराज है' की प्रकृति आत्मकथात्मक है और यह लेखिका के पूर्वजों (जिला बिजनौर) के सैयदों की कहानी है जो 12वीं शताब्दी से शुरू होती है और वर्तमान काल तक जारी रहती है, वर्तमान में उस परिवार की कहानी कहते हुए लेखिका ने भारतीय मुसलमानों के सामान्य सांस्कृतिक आचार-व्यहार की संरचना की झांकी भी प्रस्तुत की है, 'आखिरे शब के हसमफर' (निशांत के सहयात्री) में एक उपमहाद्वीप के इतिहास के एक सर्वाधिक निर्णायक चरण का वर्णन है जो द्वितीय महायुद्ध के पहले के बंगाल की उग्रवादी घटनाओं और देशव्यापी भारत छोड़ों आंदोलन से लेकर देश-विभाजन और फिर 1971 की घटनाओं तक फैली है, जिनकी परिणति बंगला देश के उदय में हुई किन्तु ऐतिहासिक घटनाओं के चित्रण से अधिक लेखिका की रूचि यह दिखाने में है कि उच्च आदर्शों से प्रेरित अपना सब कुछ त्यागकर क्रान्ति की धुन में निकले लोग किस प्रकार समय-परिवर्तन के साथ आदिम प्रवृत्तियों और ईर्ष्या के वशीभूति होकर निहायत मामूली आदमियों के स्तर पर उतर आते हैं, लोभ भोग-विलास के चक्कर में पड़ जाते हैं संयोगवश उनका नव्यतम उपन्यास 'गार्दिशे-रंगे चमन' भी अपने में 200 वर्षों की अवधि समेटे है। काल और स्थान दोनों में ही परिव्याप्त विशालता और विस्तार की गुणवत्ता कुर्रतुल-ऐन-हैदर के कृतित्व की सर्वप्रथम विशेषता है और इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे समय की कुछ अमूल्य कथा-कृतियां उन्हीं की देन है।[(7)]

हम कह सकते हैं कि कुर्रतुल ऐन हैदर की कहानियां अपने समय की प्रगतिशील कहानियों के बरक्स एक नई शैली में नई होती दुनिया से लोगों को रू-ब-रू कराती हैं। इनकी कहानियों में इलीट कहे जाने वाले लोगों के जीवन, उनकी कारगुजारियों, स्वप्न सी जिंदगी की फलसफे, गलैमर और उसमें मद-मस्त होती जिंदगानियां, टूटते रिश्तों और बिखरते समाज, सामाजिक विद्रूपता-कुरूपता, जीवन का उतार-चढ़ाव का

बहुत ही सजीव चित्रण मिलता है। एनी आपा ने विवाह नहीं किया था, लेकिन वे औरतों की बेबसी व कमजोरी को जतनी सच्चाई से लिख देती थीं, वह कम ही देखने को मिलता है। एक इमानदार लेखिका और जुझारू पत्रकार की तरह वह अपने समय को जीवंतता के साथ दर्ज करते हुए खुद के जिंदा होने का सुबूत देने में नहीं चूकीं। यही वजह है कि ऐनी आपा अपने शब्दों के साथ पाठकों से संवाद करती आज भी मिल जाती हैं।

संदर्भ

(1) https://satyagrah.scroll.in

(2) नया ज्ञानोदय, सरहद विशेषांक, मई 2014

(3) प्रतिनिधि कहानियां, कुर्रतुल एन हैदर, राजकमल प्रकाशन

(4) प्रतिनिधि कहानियां, कुर्रतुल एन हैदर, राजकमल प्रकाशन

(5) प्रतिनिधि कहानियां, कुर्रतुल एन हैदर, राजकमल प्रकाशन

(6) https://yourstory.com/hindi

(7) सारिका, अगस्त 1990

पंजाबी संगीत में महिलाएँ

(अजित समाचार पत्र **पंजाबी**, जालंधर में 5 अप्रैल 2026 को प्रकाशित मेरे मूल पंजाबी लेख का हिंदी अनुवाद।)

डॉ. गुरपिंदर कुमार
सहायक प्राध्यापक, महिला अध्ययन केंद्र
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

आज पंजाबी संगीत वैश्विक स्तर पर एक बड़े मंच पर स्थापित हो चुका है। यूट्यूब व्यूज़, रील्स, स्ट्रीमिंग प्लेटफ़ॉर्म और अंतरराष्ट्रीय कॉन्सर्ट्स ने इसे एक विशाल उद्योग में बदल दिया है। लेकिन इस चमक-दमक के पीछे एक परेशान करने वाला प्रश्न लगातार मौजूद रहता है—इस संगीत में महिलाओं की उपस्थिति किस रूप में है? क्या वे अपनी आवाज़ और अनुभव के साथ सामने आती हैं, या उन्हें केवल देखने की वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जाता है? इस प्रश्न का उत्तर हमें 'मेल गेज' अर्थात पुरुष दृष्टि की राजनीति की ओर ले जाता है।

पंजाबी लोक संगीत से लेकर आधुनिक पंजाबी पॉप तक का सफ़र केवल संगीत शैलियों का परिवर्तन नहीं है, बल्कि देखने और दिखाने के तरीकों में आए बदलावों की भी कहानी है। जहाँ लोकगीतों में महिलाएँ बोलती थीं, वहीं आधुनिक गीतों में अक्सर उनका शरीर बोलता हुआ दिखाई देता है। यही परिवर्तन चिंता का विषय बन जाता है।

लोकगीतों की दुनिया : जहाँ स्त्री बोलती थी

पारंपरिक पंजाबी लोकगीत—गिद्धा, टप्पे और त्रिंजण—महिलाओं के सामूहिक जीवन से उत्पन्न हुए थे। ये गीत खेतों में काम करते समय, सूत कातते हुए या विवाह-संबंधी अवसरों पर गाए जाते थे। वहाँ न कोई कैमरा था और न ही कोई बाज़ार। महिलाएँ ये गीत अपने सामूहिक अनुभवों और आपसी संवाद के लिए गाती थीं, न कि पुरुष दर्शकों के मनोरंजन के लिए।इसलिए इन गीतों में स्त्री का शरीर नहीं, बल्कि उसका अनुभव केंद्र में होता था।

गिद्धा के बोलों में हास्य और व्यंग्य के माध्यम से ससुराल की राजनीति, पति-पत्नी के संबंध और सामाजिक दबावों पर टिप्पणी की जाती थी। त्रिंजण गीतों में श्रम, विरह और मित्रता की भावनाएँ व्यक्त होती थीं। ये गीत पितृसत्ता को पूरी तरह तोड़ते नहीं थे, लेकिन उसके भीतर महिलाओं को बोलने की जगह अवश्य देते थे। यह एक प्रकार का सांस्कृतिक संवाद था, जहाँ स्त्री केवल पात्र नहीं, बल्कि कथाकार भी थी।

यहाँ 'मेल गेज' का प्रश्न लगभग अनुपस्थित था। क्योंकि जब स्त्री स्वयं गा रही हो, सुन रही हो और प्रतिक्रिया दे रही हो, तब वह देखने की वस्तु नहीं रहती—वह अनुभव का केंद्र बन जाती है।

लोककथाएँ : प्रतिरोध और चेतावनी

हीर-रांझा, सोहणी-महिवाल और मिर्ज़ा-साहिबां जैसी लोककथाएँ भी इसी द्वंद्व को सामने लाती हैं। इन लोककथाओं की नायिकाएँ प्रेम करने, अपने निर्णय लेने और सामाजिक बंधनों का विरोध करने का साहस दिखाती हैं।लेकिन उनका अंत प्रायः दुखद होता है। यह समाज की ओर से एक चेतावनी जैसा प्रतीत होता है—स्त्री की स्वतंत्रता की कीमत चुकानी पड़ती है।

फिर भी, इन कथाओं में नायिकाओं की आवाज़, तर्क और भावनात्मक गहराई उन्हें केवल पीड़ित नहीं बनने देती। वे पितृसत्ता के भीतर प्रतिरोध की संभावना को जीवित रखती हैं। इसी कारण लोक परंपरा को न पूरी तरह सशक्तिकारी कहा जा सकता है और न ही पूर्णतः दमनकारी।

आधुनिक पंजाबी संगीत : कैमरा किसकी नज़र से देखता है?

समस्या तब और गहरी हो जाती है जब हम आधुनिक पंजाबी पॉप संगीत की ओर देखते हैं। आज पंजाबी गीतों को अक्सर म्यूज़िक वीडियो के बिना अधूरा माना जाता है। और यहीं 'मेल गेज' पूरी शक्ति के साथ सामने आता है।

कई पॉप गीतों में महिला की उपस्थिति उसके शरीर तक सीमित कर दी जाती है। कैमरा उसकी भावनाओं और व्यक्तित्व के बजाय उसके शारीरिक आकर्षण पर अधिक केंद्रित दिखाई देता है। वह कहानी की नायिका नहीं, बल्कि दृश्य का आकर्षण बन जाती है। पुरुष गायक सक्रिय भूमिका में होता है—वह गाता है, चाहता है और हासिल करता है। महिला केवल प्रतिक्रिया देती है, मुस्कुराती है और नृत्य करती है।

यही वह 'मेल गेज' है, जिसमें दुनिया पुरुष की दृष्टि से देखी जाती है और महिला उस दृष्टि का विषय बन जाती है।

'चॉइस' और 'ग्लैमर' का भ्रम

आधुनिक मीडिया की सबसे बड़ी चाल यह है कि वह इस वस्तुकरण को शोषण के रूप में नहीं, बल्कि 'चॉइस' और 'एम्पावरमेंट' के रूप में प्रस्तुत करता है। कहा जाता है कि यह महिला की अपनी पसंद और आत्मविश्वास का प्रतीक है।

लेकिन प्रश्न यह है कि यह पसंद किन परिस्थितियों में की जा रही है? जब गीत लिखने वाले, संगीत बनाने वाले, वीडियो निर्देशक और निवेश करने वाले अधिकांश लोग पुरुष हों, तब महिला की स्वतंत्रता कितनी वास्तविक रह जाती है? 'मेल गेज' यहाँ सबसे खतरनाक रूप धारण करता है—यह असमान शक्ति-संबंधों को अदृश्य बना देता है।

लोकगीतों में स्त्री पितृसत्ता के भीतर बोलती थी, लेकिन आधुनिक गीतों में वह बाज़ार के भीतर दिखाई देती है। यह परिवर्तन सशक्तिकरण से अधिक नियंत्रण का संकेत देता है।

युवा पीढ़ी पर प्रभाव

ये गीत और वीडियो केवल मनोरंजन तक सीमित नहीं रहते। वे युवाओं की सोच, संबंधों और आत्म-छवि को भी प्रभावित करते हैं। जब बार-बार महिलाओं को वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, तो यह संदेश सामान्य हो जाता है कि स्त्री होने का अर्थ यही है।

लड़कियों के लिए यह सुंदरता और स्वीकार्यता का दबाव उत्पन्न करता है, जबकि लड़कों के लिए प्रभुत्व और उपभोग की मानसिकता को मजबूत करता है। इस प्रकार संगीत सामाजिक असमानताओं को चुनौती देने के बजाय उन्हें पुनः स्थापित करने लगता है।

प्रतिरोध की आवाज़ें : उम्मीद की किरण

फिर भी यह कहानी पूरी तरह निराशाजनक नहीं है। हाल के वर्षों में कुछ महिला पंजाबी कलाकार इस

ढाँचे को चुनौती देती दिखाई दे रही हैं। वे अपनी शर्तों पर गीत गा रही हैं—आत्मसम्मान, स्वतंत्रता और अनुभव की बात कर रही हैं। सोशल मीडिया ने उन्हें पुरुष-प्रधान मुख्यधारा उद्योग से बाहर निकलकर अपनी जगह बनाने का अवसर दिया है।

हालाँकि यह संघर्ष अभी लंबा और चुनौतीपूर्ण है। जब तक महिलाएँ केवल पर्दे पर दिखाई देंगी और गीत लेखन, संगीत निर्माण तथा निर्णय-प्रक्रियाओं में समान भागीदारी प्राप्त नहीं करेंगी, तब तक यह प्रतिरोध सीमित ही रहेगा।

आगे का रास्ता

पंजाबी संगीत की वास्तविक शक्ति उसकी जीवंतता और सांस्कृतिक गहराई में निहित है। यदि इसे सचमुच प्रगतिशील बनाना है, तो हमें यह प्रश्न उठाना होगा कि कैमरा किसके हाथ में है और दृष्टि किसकी है। 'मेल गेज' को चुनौती दिए बिना सशक्तिकरण केवल एक आकर्षक शब्द बनकर रह जाएगा।आवश्यकता इस बात की है कि हम महिलाओं को केवल देखने की वस्तु नहीं, बल्कि देखने वाली, बोलने वाली और निर्णय लेने वाली सत्ता के रूप में स्वीकार करें। जब पंजाबी संगीत इस परिवर्तन को अपनाएगा, तभी वह मनोरंजन से आगे बढ़कर सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बन सकेगा।

संगीत समाज की आत्मा होता है। और कोई भी समाज तब तक स्वस्थ नहीं हो सकता, जब तक उसकी आधी आबादी को केवल दृश्य बनाकर रखा जाए। पंजाबी संगीत के लिए यह आत्ममंथन का समय है—ताकि इसकी धुनें केवल शोर न बनें, बल्कि समानता की आवाज़ भी सुनाई दें।

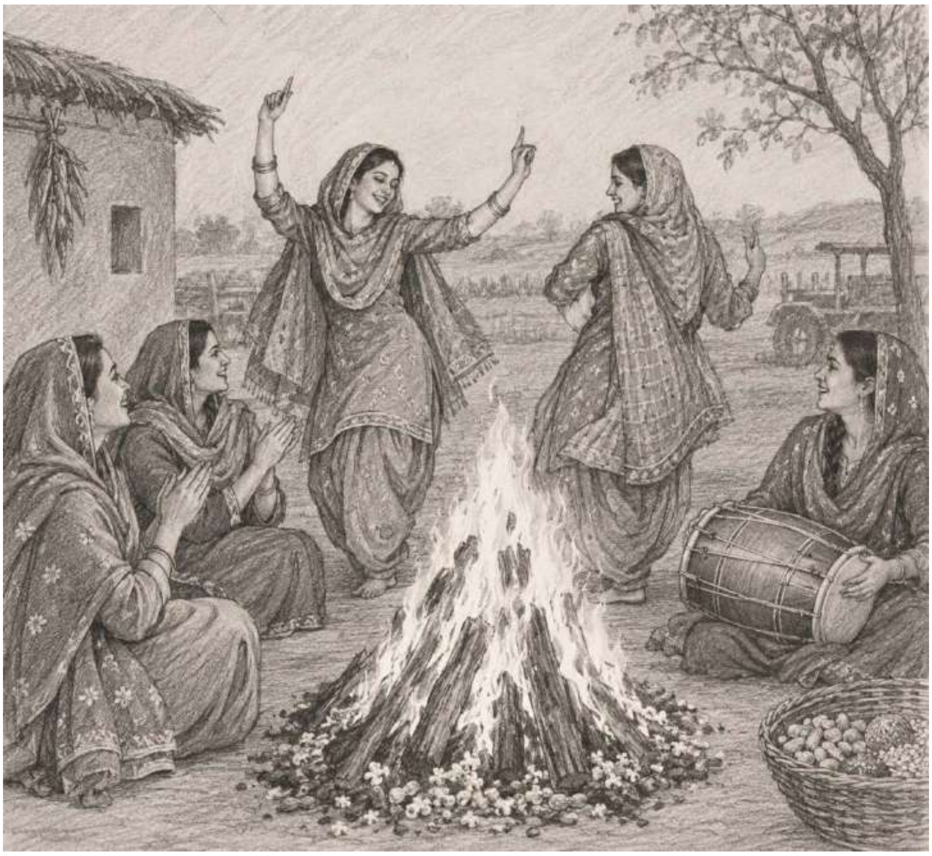

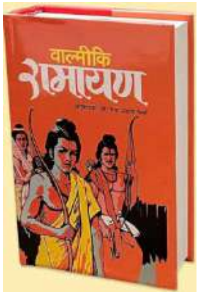

वाल्मीकि रामायण की साहित्यिक एवं आध्यात्मिक समीक्षा

(पुस्तक समीक्षा)

डा. शारदा कुमारी
पीएचडी संस्कृत, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
प्रयागराज, भारत

भारतीय वाङ्मय में रामायण केवल एक ग्रंथ नहीं, बल्कि एक जीवन्त परम्परा है। इसके रचनाकार महर्षि वाल्मीकि को 'आदिकवि' की उपाधि प्राप्त है क्योंकि उन्होंने ही लौकिक संस्कृत में प्रथम बार छंदोबद्ध काव्य की रचना की। 24,000 श्लोकों का यह महाकाव्य 'गायत्री मंत्र' के 24 अक्षरों की आध्यात्मिक शक्ति को अपने भीतर समेटे हुए है। इसकी समीक्षा कैवल शब्दों का विश्लेषण नहीं, बल्कि उस जीवन पद्धति का दर्शन है जिसे 'रामत्व' कहा जाता है। वाल्मीकि रामायण की रचना त्रेतायुग के अंत में मानी जाती है। जब नारद मुनि से वाल्मीकि ने पूछा कि इस संसार में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ और कृतज्ञ पुरुष कौन है, तब नारद ने इक्ष्वाकु वंश के राजा राम का नाम लिया। इस काव्य की रचना का आधार 'शोक' है। क्रौंच पक्षी के विलाप से उत्पन्न महर्षि की करुणा ही काव्य का बीज बनी। यह दर्शाता है कि महान साहित्य की उत्पत्ति हृदय की कोमल संवेदनाओं से होती है। इसमें सात कांड है।

1- बालकाण्ड : (बीज और संस्कार)

बालकाण्ड रामायण की आधारशिला है। यहाँ से कथा का आध्यात्मिक प्रारंभहोता है। इसमें राजा दशरथ की पुत्रकामेष्टि यज्ञ, भगवान का चतुर्व्यूह अवतार (राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न) और उनके बाल्यकाल का वर्णन है।

समीक्षा : विश्वामित्र के साथ राम का जाना केवल राक्षसों का वध नहीं था, बल्कि वह एक राजकुमार का 'दीक्षा काल' था। ताड़का वध और अहिल्या उद्धार के माध्यम से वाल्मीकि ने यह संदेश दिया कि धर्म की रक्षा के लिए आततायियों का अंत आवश्यक है और करुणा से ही जड़वत जीवन (अहल्या) में चेतना लौटती है। सीता स्वयंवर का प्रसंग 'शक्ति' और 'शिवत्व' के मिलन का प्रतीक है।

2. अयोध्याकाण्ड : (मानवीय भावों का उच्चतम संघर्ष)

साहित्यिक दृष्टि से यह काण्ड सर्वाधिक प्रभावशाली है। यहाँ राम का राज्याभिषेक रुक जाता है और उन्हें 14 वर्ष का वनवास मिलता है।

समीक्षा : वाल्मीकि ने यहाँ दशरथ के मोह, कैकेयी के हठ और मंथरा की कुटिलता का जैसा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है, वह आज के मनोविज्ञान के लिए भी शोध का विषय है। राम का सहज भाव से राज्य त्यागना और वन गमन करना 'त्याग' की पराकाष्ठा है। भरत का चरित्र यहाँ निखरकर सामने आता है, जो 'सत्ता' के मोह को ठुकराकर भ्रातृ-प्रेम की नई परिभाषा लिखता हैं।

3. अरण्यकाण्ड : (संघर्ष और नियति)

वनवास के दौरान ऋषियों के आश्रमों का भ्रमण और राक्षसों से युद्ध इस काण्ड का मुख्य भाग है।

समीक्षा : यहाँ प्रकृति का वर्णन बहुत सघन है। पंचवटी का सौंदर्य और फिर सीता का अपहरण कथा को चरम बिंदु पर ले जाता है। शबरी की भक्ति और जटायु का बलिदान यह सिखाता है कि भक्ति में जाति या योनि बाधक नहीं होती। राम का विलाप उनके 'नर' रूप को दर्शाता है, जिससे पाठक स्वयं को कथा से जोड़ पाता है।

4. किष्किन्धाकाण्ड : (कूटनीति और अटूट मैत्री)

सीता की खोज में राम का ऋष्यमूक पर्वत पर जाना और हनुमान-सुग्रीव से मिलना इस अध्याय की धुरी है।

समीक्षा : यह काण्ड राजनीति और मित्रता का पाठ है। बाली वध के माध्यम से धर्म-अधर्म की सूक्ष्म व्याख्या की गई है। हनुमान जी का परिचय उनकी बुद्धिमत्ता और वाकपटुता का प्रमाण है। यहाँ से संगठित शक्ति (वानर सेना) का उदय होता है।

5. सुन्दरकाण्ड : (संकल्प और आत्मविश्वास)

यह भाग कहानी का हृदय है। हनुमान जी का समुद्र लांघना, लंका में सीता को खोजना और रावण को चेतावनी देना इसके मुख्य प्रसंग हैं।

समीक्षा : इसे 'सुन्दर' इसलिए कहा गया क्योंकि इसमें भक्त और भगवान के मिलन की सुंदरतम अभिव्यक्ति है। सीता की मानसिक दृढ़ता यह सिखाती है कि विपरीत परिस्थितियों में भी चरित्र कैसे बचाए रखना है। यह काण्ड मनुष्य के भीतर छिपी असीमित शक्तियों को जाग्रत करने का मंत्र है।

6. युद्धकाण्ड/लंकाकाण्ड : (धर्म और अधर्म का महासंग्राम)

राम और रावण के बीच का युद्ध हीं इस काण्ड का केंद्र है।

समीक्षा : यह काण्ड वीरता और शौर्य का सागर है। राम द्वारा समुद्र पर सेतु निर्माण उनके नेतृत्व कौशल को दर्शाता है। विभीषण की शरणागति यह स्पष्ट करती है कि धर्म किसी भी कुल या राष्ट्र से बड़ा है। रावण का वध अहंकार की पराजय और 'सत्यमेव जयते' का प्रत्यक्ष प्रमाण है। अग्नि परीक्षा का प्रसंग, यद्यपि आधुनिक दृष्टि से विवादास्पद लगता है, परंतु वाल्मीकि ने इसे सीता की पवित्रता को जगत् में सिद्ध करने के उपक्रम के रूप में लिखा है।

7. उत्तरकाण्ड : (मर्यादा और विरक्ति)

इसमें राम का राज्याभिषेक, रामराज्य की स्थापना, सीता का परित्याग और अंततः जल-समाधि वर्णित है।

समीक्षा : यह काण्ड दार्शनिक रूप से कठिन और भावुक है। सीता का धरती में समा जाना उनके आत्मसम्मान की अंतिम घोषणा है। लव-कुश द्वारा रामायण गायन यह संदेश देता है कि इतिहास को अगली पीढ़ी तक पहुँचाना कितना आवश्यक है।

वाल्मीकि रामायण के प्रत्येक पात्र की चरित्रगत विशेषताएं भी अप्रतिम हैं। श्रीराम 'मर्यादा पुरुषोत्तम' हैं। उनका क्रोध भी धर्म सम्मत है और उनकी दया भी। वे एक आदर्श पुत्र, भाई, पति और राजा के रूप में मानव जीवन मापदंड निर्धारित करते हैं। सीता केवल एक पीड़िता नारी नहीं हैं, बल्कि 'साध्वी' और 'शक्ति' का रूप हैं। वनवास के निर्णय में उनकी दृढ़ता और रावण की अशोक वाटिका में उनकी निर्भीकता उन्हें विश्व साहित्य की महानतम नायिकाओं में स्थापित करती है। वाल्मीकि ने रावण को भी एक दुष्ट राक्षस मात्र नहीं

बताया। वह वेदों का ज्ञाता, महान शिव भक्त और कुशल राजनीतिज्ञ था। उसका पतन यह सिखाता है कि ज्ञान और शक्ति यदि चरित्रविहीन हों, तो वह विनाशकारी हो जाता हैं।

काव्यगत एवं भाषाई समीक्षा के क्रम में हम यह पाते हैं कि वाल्मीकि की भाषा 'प्रसाद गुण' से युक्त है। उनकी शैली सरल और प्रवाहमयी है। वे लंबे समासों का प्रयोग नहीं करते, जिससे कथा का प्रवाह बना रहता है। कालिदास को भले ही उपमा के लिए जाना जाता हो, परंतु उसका स्रोत भी वाल्मीकि ही हैं। वर्षा ऋतु के वर्णन में वे कहते हैं कि "पृथ्वी प्यासी होने के कारण वर्षा के जल को वैसे ही पी रही है जैसे मनुष्य दुख में आँसुओं को पी जाता है।" महर्षि वाल्मीकि के द्वारा प्रयुक्त अनुष्टुप छंद का प्रयोग इसे कंठस्थ करने के योग्य बनाता है।

निष्कर्षतः यह कह सकते हैं कि वाल्मीकि रामायण केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि इसमें जीवन को महान् बनाने का मूल सूत्र विद्रद्यमान है। इसमें महर्षि ने भाषा, भाव, दर्शन और कथा का ऐसा मणिकांचन संयोग किया है जो विश्व के किसी अन्य साहित्य में दुर्लभ है। यह ग्रंथ हमें 'राम' बनाने की प्रेरणा नहीं देता, बल्कि हमारे भीतर के 'राम' को जगाने का प्रयास करता है। जब तक इस पृथ्वी पर पर्वत और नदियाँ विद्रद्यमान हैं, तब तक वाल्मीकि की यह अमृतवाणी मानव जाति का मार्गदर्शन करती रहेगी। यह काव्य नहीं, बल्कि मानवीय चेतना का महासागर है जिसमें जितनी बार डुबकी लगाई जाए, उतनी बार नए सत्य के मोती प्राप्त होते हैं।

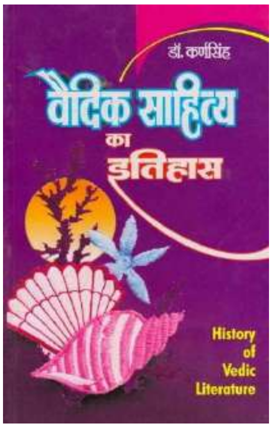

वैदिक साहित्य का इतिहास

(पुस्तक समीक्षा)

लेखक डॉ. कर्ण सिंह

(साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार,
मेरठ- 250002, संस्करण-2021,)

डॉ. निशा खन्ना
सहायक आचार्य,
संस्कृत विभाग, आर्यकन्या डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

"डॉ कर्ण सिंह" द्वारा रचित पुस्तक "वैदिक साहित्य का इतिहास" गागर में सागर की उक्ति को पूर्णतः चरितार्थ करती है। वैदिक साहित्य के विषय में देशी और विदेशी विद्वानों द्वारा अनेक ग्रन्थों की रचना की गयी है, लेकिन प्रस्तुत पुस्तक का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि अन्य विद्वानों द्वारा लिखे गये ग्रन्थों का सार इस ग्रन्थ में समाहित हो गया है। यह पुस्तक लेखक की सारग्राहिणी प्रतिभा का प्रमाण प्रस्तुत करती है। इतनी छोटी सी पुस्तक में सम्पूर्ण विशाल वैदिक साहित्य का परिचय देना और उसके विषय में अन्य विद्वानों के मत को सरल रीति से समझा देना कोई सरल कार्य नहीं था, किन्तु लेखक ने प्रस्तुत ग्रन्थ में संक्षिप्त रूप में कुशलतापूर्वक वैदिक साहित्य के इतिहास की सामग्री को प्रस्तुत किया है। यह ग्रन्थ अपने लघु कलेवर में भी विस्तृत वैदिक साहित्य को समेटे हुए है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखक का मत है कि प्रायः लोग यह समझते हैं कि ऋग्वेद आदि वैदिक ग्रन्थों की भाषा भी संस्कृत ही है, किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, क्योंकि ऋग्वेद आदि वैदिक भाषा में है, जो लेखक के अनुसार संस्कृत से भिन्न हैं। भारत में जो भाषा बोली जाती है, वह भारतीय आर्यभाषा है और जिस भारतीय आर्यभाषा में ऋग्वेद आदि रचनायें उपलब्ध होती हैं, वह "वैदिक भाषा" कहलाती है।

लेखक के अनुसार वैदिक साहित्य के पाठकों को यह बात विशेष रूप से ध्यान रखनी चाहिए कि वैदिक भाषा में उपलब्ध साहित्य ही वैदिक साहित्य कहलाता है।

इस दृष्टि से वैदिक भाषा की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं का वर्णन लेखक द्वारा प्रस्तुत पुस्तक में किया गया है, यथा- वैदिक भाषा के शब्दों में होने वाली सन्धि के नियम बहुत शिथिल हैं, कहीं सन्धि हो जाती है, कहीं सन्धि योग्य स्थलों पर भी सन्धि नहीं होती। वैदिक भाषा में शब्दरूपों का धातुरूपों में भी अनेक रूपता है, इस प्रकार की अनेक विशेषताओं का वर्णन करते हुये लेखक ने वैदिक और लौकिक संस्कृत की बहुत ही सुन्दर तुलना की है।

वैदिक साहित्य केवल भारत ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण संसार का सर्वप्राचीन साहित्य है और जिस प्रकार संसार के सभी साहित्य मानवों के द्वारा रचित हैं, उसी प्रकार वैदिक साहित्य की रचना भी लेखकों द्वारा ही की गयी है।

यद्यपि परम्परागत मान्यताओं के अनुसार वेदों को अपौरूषेय माना गया है और इसी का समर्थन आधुनिक युग में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी किया है। अतः लेखक का मन्तव्य है कि हमारा यही मानना उचित है कि भारत में भाषाओं के वैदिक, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राकृत और आधुनिक भाषाओं के प्रवाह की भाँति ही, भारत में साहित्य की रचना का प्रवाह भी वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य, प्राकृत, अपभ्रंश और साहित्य और आधुनिक साहित्य के रूप में निरन्तर होता रहा है।

अतः लेखक का मन्तव्य है कि संस्कृत साहित्य का अध्ययन, वैदिक साहित्य के अध्ययन के बिना पूर्ण नहीं माना जा सकता। अतः वैदिक साहित्य का अध्ययन अधिक महत्वपूर्ण है और आगे के सम्पूर्ण भारतीय साहित्य का मूल स्रोत यही वैदिक साहित्य है।

लेखक के अनुसार वैदिक साहित्य का सर्वप्राचीन अंश ऋग्वेद में संकलित, ये काव्यमय स्तुतियाँ ही हैं। ऋग्वेद की इसी कविता को संसार की सर्व प्राचीन कविता होने का गौरव प्राप्त है और बाद का सम्पूर्ण वैदिक साहित्य इसी का विकास है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में अध्याय 1 में वेद का महत्व, स्वरूप, वैदिक साहित्य में परिगणित रचनायें, वैदिक साहित्य का वर्गीकरण आदि, अध्याय 2 में ऋग्वेद का रचनाकाल, वर्ण्य विषय, देवता, धर्म, दर्शन, छन्द, काव्य सौन्दर्य आदि का वर्णन, अध्याय 3 में यजुर्वेद का स्वरूप, भेद, मन्त्रों का स्वरूप आदि का विवेचन, अध्याय 4 में सामवेद का महत्व, शाखायें, सामवेद और ऋग्वेद का सम्बन्ध, अध्याय 5 में अथर्ववेद का अर्थ, शाखायें, विषय-सामग्री आदि का विवेचन, अध्याय 6 में ब्राह्मण ग्रन्थों का विवेचन, ब्राह्मण से अभिप्राय, विषय सामग्री, विधि अर्थवाद आदि का वर्णन, अध्याय 7 में आरण्यक का स्वरूप, आरण्यक ग्रन्थों का परिचय, अध्याय 8 में आरण्यक उपनिषदों में अन्तर, उपनिषदों का महत्व, उपनिषद् से अभिप्राय, उनकी संख्या, उपनिषदों का दार्शनिक सिद्धान्त, उपनिषदों की नैतिक शिक्षायें, अध्याय में वेदाङ्ग उनकी संख्या, नाम, बढ्दो का विस्तृत वर्ण अध्याय 10 में अनुक्रमणी साहित्य का विवेचन किया गया है।

इस पुस्तक का समग्र रूप से अध्ययन के उपरान्त यही कहा जा सकता है कि यद्यपि इस विषय पर आजकल अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं, किन्तु वे अत्यन्त दुरूह शैली में होने के कारण, वैदिक साहित्य के पाठकों की पहुँच से परे हैं, किन्तु लेखक "कर्ण सिंह" ने जो प्रयास किया है, वह अत्यन्त उपादेय है। वेदिक साहित्य के इतिहास को जानने वालों के लिए यह पुस्तक गागर में सागर के समान हैं।

इस पुस्तक के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि लाघव का ध्यान करते हुये भी इस पुस्तक में वैदिक साहित्य से सम्बद्ध सभी विषयों का विवेचन किया गया है। यह कहा जा सकता है कि भारतीय व पाश्चात्य वेद विद्वानों ने जो शोधपरक ग्रन्थ लिखे हैं उन सबके आधार पर ही लेखक द्वारा इस ग्रन्थ की रचना की गयी है। इस कारण प्रस्तुत पुस्तक अत्यन्त प्रामाणिक है तथा अध्येताओं के लिये अपरिहार्य ग्रन्थ है।

इस पुस्तक के अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि यह पुस्तक छात्रों के हित को देखते हुए और उनकी कठिनाइयों का अनुभव करके लिखी गयी है। इसमें वैदिक साहित्य का इतिहास ही है, वैदिक सभ्यता और संस्कृति का मिश्रण नहीं। इस ग्रन्थ के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इसका मुद्रण भी उच्च स्तर का है, यत्र-तत्र कहीं मुद्रण दोष दृष्टिगोचर होता है, जो स्वाभाविक ही है।

यह ग्रन्थ मेरी दृष्टि में विद्वानों के लिए भले ही उतना उपयोगी न हो, किन्तु छात्रों के लिए अत्यन्त उपयोगी है, जो वैदिक साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने वाले जिज्ञासुओं को इसमें रूचि उत्पन्न करके वैदिक साहित्य के इतिहास के विशालकाय और दुरूह ग्रन्थों को पढ़ने की रूचि जागृत करने में सक्षम है।

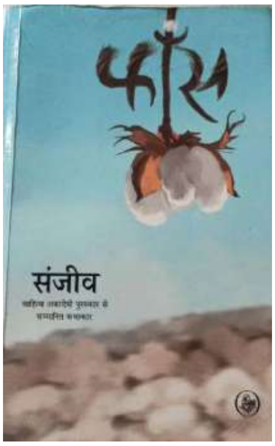

फाँस

(पुस्तक समीक्षा)

'संजीव' के उपन्यास "फाँस"
में कृषि संकट एवं मनोवैज्ञानिक दबाव
(वाणी प्रकाशन, दिल्ली, साहित्य अकादमी पुरस्कृत)

शिवम् मद्धेशिया, शोधार्थी
जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

नोबेल पुरस्कार विजेता दक्षिण अफ्रीकी रचनाकार 'नादीन गार्डिमर' ने कहा है कि- "एक लेखक अपने विषय से पहचाना जाता है और भी विषय उसकी समसामयिक युग चेतना से गढ़े जाते हैं" कुछ ऐसी ही विशेषताओं के धनी लेखक संजीव को आज ऐसे कथाकार के रूप में पहचाना जा रहा है जो एक विषय पर पहले अनुसंधान करते हैं फिर उस पर अपनी कलम की कारीगरी दिखाते हुए सृजन धर्मिता में बदल पाठकगण को सौंप देते हैं। कथाकार संजीव का जन्म 6 जुलाई 1947 को सुल्तानपुर उत्तर प्रदेश में हुआ। यह हिंदी साहित्य में साठोत्तरी दौर के बाद जनवादी कथा आंदोलन के साथ-साथ विकसित पीढ़ी के प्रमुख हस्ताक्षरों में से एक हैं। प्रेमचंद एवं जैनेंद्र के बाद संजीव इस साहित्त्य क्रम में तीसरी कड़ी प्रतीत होते हैं। इनका लेखन प्रमुखतः अनुसंधान केंद्रित है उनकी रचना प्रक्रिया भावावेग के परिणति से आगे बढ़कर संघर्षपूर्ण निर्माण की एक प्रक्रिया है।

फाँस उपन्यास की पृष्ठभूमि है देश भर में लगभग पिछले दो दशक से बढ़ रही किसानों की आत्महत्याएं। इसमें संपूर्ण भारत के उन सभी किसानों की कहानियां सम्मिलित हैं जिन्हें किसी खास तरह के बीजों एवं खादों के इस्तेमाल के लिए फुसलाया गया है फिर कर्ज दिया गया लेकिन प्राकृतिक आपदाओं की मार के कारण सीधे-साधे किसानों की जिंदगी मानसिक दबाब एवं कर्ज के बोझ तले दब सी गई और उनके द्वारा अपनी जीवन लीला समाप्त करना ही उनका अंतिम विकल्प बन गया। प्रेमचंद जी के उपन्यास को 'गोदान' के बाद इतनी सूक्ष्म दृष्टि से विषय के गंभीरता की समझ को अगर किसी ने न्यायोचित ठहराया है तो वह हैं संजीव। इन्होंने किसानों के जीवन और गांव की पूरी जिंदगी का दर्द बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

हमारे देश की आजादी को इतने साल हो गए हर दिन राजनीति करवट ले रही है विकास, तकनीक, कृत्रिम बौद्धिकता लोगों का काम आसान कर रहे हैं। इस विकास को देखकर लगता है यही तो वह सपनों का भारत है जिसे बनाने में इतना समय लगा लेकिन हकीकत कुछ और ही है। क्योंकि जब हम देखते हैं आत्महत्या करने को मजबूर किसान को, दो जून की रोटी को तरशते किसी रिक्शा चालक को, अपनी जिंदगी को दांव पर लगाते हुए मछुआरे को, गांव की परंपरा पितृसत्तात्मक संस्कृति के नाम पर दम हो रही उन स्त्रियों को तब लगता है कि नहीं यह हमारे सपनों का भारत हो ही नहीं सकता। बदलाव और विकास की बातें राजनीति का मुद्दा भले ही हों पर इन लोगों के जीवन को परिवर्तित नहीं कर सका ।

उपन्यास विदर्भ (महाराष्ट्र) के उस काले इतिहास को दर्ज करता है जहां कपास की खेती करने वाले किसान 'बीटी कॉटन' जैसे विदेशी बीजों और महंगे कीटनाशकों के छलावे में आकर कर्ज के अंतहीन कुचक्र में

फस गए। अंतरराष्ट्रीय बाजार में कपास की कीमतों में उतार-चढ़ाव ने भारतीय किसानो की कमर तोड़ दी संजीव ने विभिन्न वास्तविक आंकड़ों और भौगोलिक स्थिति का प्रयोग करके इसे महज एक कहानी न बनाकर एक ऐतिहासिक दस्तावेज बना दिया जो कृषक जीवन के क्रूर सिलसलों की गवाही देता है। सामाजिक स्तर पर फाँस ग्रामीण भारत के अंतरविरोधों और जर्जर होती मान्यताओं का चित्रण है। उपन्यास की सामाजिक पृष्ठभूमि में ऋण केवल एक आर्थिक बोझ नहीं बल्कि यह हमारे देश में एक सामाजिक अभिशाप के रूप में उभरता है। ग्रामीण समाज में इज्जत और मर्यादा के नाम पर होने वाली फिजूल खर्ची जैसे महंगी शादियां, मृत्यु भोज आदि किसानों को साहूकारों के सामने घुटने टेकने पर मजबूर कर देते हैं।

संयुक्त परिवारों का टूटना नई पीढ़ी का खेती से मोह भंग होना और शहर की ओर पलायन करना इस उपन्यास के महत्वपूर्ण सामाजिक पहलू हैं। इन तमाम समस्याओं के साथ यह उपन्यास यह भी दिखाता है कि किसान की आत्महत्या के बाद उसके पीछे छूटे परिवार विशेष कर विधवा महिलाओं को किन सामाजिक प्रताड़ना और असुरक्षाओं से गुजरना पडता है। यह पितृसत्तात्मक समाज और प्रशासनिक संवेदनहीनता के बीच पिसते हुए ग्रामीण जीवन की एक दुखद सामाजिक त्रासदी है।

साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में फाँस प्रेमचंद की गोदान की परंपरा का 21वीं सदी का विस्तार है। जहां गोदान का होरी मर्यादा की रक्षा के लिए मरता है वही फाँस का शिवपाल व्यवस्था की क्रूरता और बाजारवाद के फंदे में घुटकर दम तोड़ता है। साहित्यिक शिल्प की दृष्टि से संजीव ने इसमें रिपोर्ताज शैली का समावेश किया है। जिसमें तथ्य और कल्पना का अद्भुत समन्वय है। उपन्यास का शीर्षक फाँस स्वयं में एक गहरा साहित्यिक प्रतीक है, जो उस अदृश्य फंदे को दर्शाता है जिसे राजनीति, पूंजीवाद और बिचोलियों ने मिलकर बुना है। भाषा में आंचलिकता का पुट है जो पाठक को सीधे तौर पर वहां की मिट्टी और उसमें छिपे संघर्ष से जोड़ती है। यह उपन्यास समकालीन कथा साहित्य में यथार्थवाद की एक नई ऊंचाई स्थापित करता है जहां साहित्य मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि समाज के सबसे शोषित वर्ग की चीख बन जाता है।

फाँस उपन्यास की कहानी शुरू होती है विदर्भ की यवतमाल जिले के बनगाँव के एक किसान परिवार शिबू और शकुन तथा उनकी दो बेटियां सरस्वती (बड़ी), कलावती (छोटी) की अपनी दुख, तकलीफों, सपनों की दुनिया से धीरे-धीरे किसानों के जीवन के कई अंधेरे-उजाले कोने में झांकते हुए आगे बढ़ती है। फाँस एक किसान, एक घर, एक खेत, एक दुख स्वप्न, एक आत्महत्या से शुरू होकर कहानी में कई किसान के टूटने, उनके सपनों के बिखरने तथा अनगिनत आत्महत्या की कहानी को जोड़ते जोड़ते यह पूरे भारतवर्ष के अन्नदाताओं की हत्याओं और साजिशों की महागाथा बन जाती है।

एक जमाना था जब कृषि उनके लिए गर्व की बात थी आज वही उनके गले का फाँस बन गई है जिसे अपनी प्रवृत्ति और मजबूरी के कारण न तो छोड़ पाते हैं ना ही उसमें खुशी से जीवन व्यतीत कर पाते हैं। और किसानों द्वारा खेती न छोड़ पाने का जो प्रमुख कारण है एक तो कृषक मानसिक दासता और दूसरा कोई अन्य विकल्प का ना होना। उपन्यास के नायक शिबू के माध्यम से लेखक ने व्यक्त किया है- "अकेला होता तो चला भी जाता कहीं नासिक, दिल्ली, मुंबई लेकिन यह दो मुलगियां, बायको इन सबको लेकर कहां जाऊं।"[1] इसके जवाब में कलावती कहती है- "तुम ही नहीं इस देश के सौ में से चालीस शेतकार आज ही खेती छोड दें अगर उनके पास कोई दूसरा चारा हो।"[2] इस मानसिकता को बयां करते हुए वह खुद ही जवाब के तौर पर कहती है- किसी विद्वान ने कहा है शेतकारी कोई धंधा नहीं बल्कि एक लाइफस्टाइल है, जीने का तरीका जिसे

किसान अन्य किसी भी धंधे के चलते नहीं छोड़ सकता। सो तुम बाबा...तुम लाख कहो कि तुम शेती छोड़ दोगे, नहीं छोड़ सकते। किसानी तुम्हारे खून में है।"[3] यह कहना गलत नहीं होगा कि यह कृषक मानसिकता ही है जिसने आज भी भारत में कृषि व्यवस्था को बचाएं और बनाए रखा है। फाँस में दिखाया गया है कि किसान के लिए कर्ज केवल एक आर्थिक मामला नहीं है बल्कि यह वह फाँस है जो उनके जीवन के समाप्त होने पर ही रुकता है। उपन्यास के नायक शिवपाल, आशा वानखेड़े, विट्ठल जैसे पात्रों के माध्यम से संजीव जी ने स्पष्ट किया है कि कैसे खेती के लिए बीज, खाद और कीटनाशकों का इंतजाम करने के लिए कृषक ऊंची दरों पर ब्याज लेता है। जब फसल खराब हो तो पिछला कर चुकाने के लिए नया कर्ज लेता है और अंततः वह ऐसे सतत जाल में फंस जाता है जहां से निकलने का कोई विकल्प ही नहीं बचता है।

उपन्यास की नायिका शकुन यह सच उजागर करते हुए कहती है-"इस देश का किसान कर्ज में ही जन्म लेता है, कर्ज में ही जीता है, कर्ज में ही मर जाता है।"[4] एक विडंबना और भी है कि आत्महत्या करने वाले वो 'पात्र' भी तभी बनाया जा सकता है जब किसी राजनीतिक व्यक्ति से पहचान हो या तो धूस दो। शीबू के मामले में भी यही बात सामने आती है-"पोटमार्टम, पंचनामा.. घूस की डिमांड, पैसे दे दो तो इन्हें पात्र बना दें।"[5] वरना वह किसान जो ताउम्र खेती-किसानी के चक्कर से कर्ज के बोझ तले दबा रहा और मानसिक प्रताड़ना के चलते जब उसने आत्महत्या जैसा क्रूर रास्ता चुना तो अब उसके परिवारजन दुख के क्षण में भी यह साबित करें कि वह सरकार द्वारा दिए जाने वाली मुअवाजे के हकदार हैं। "सरकार हमें यह बताएं कि आत्महत्या करते वक्त किन-किन बातों का ख्याल रखा जाए... कब और कैसे की जाती है आत्महत्या? किस पंडित से पूछ कर ? यह भी सिखाया जाए कि कैसे लिखी जाती है सुसाइड नोट"?[6]

फाँस उपन्यास ने सत्ता और प्रशासन की उस घिनौने चेहरे को भी बेनकाब किया है, जो कागजों पर तो योजनाएं बनाकर भोली भाली जनता को लुभाता है लेकिन जमीनी स्तर पर वह भी बेअसर है। इसमें मुआवजे की राजनीति और सरकारी दफ्तरों की लाल फीताशाही का सजीव चित्रण है। उपन्यास का एक महत्वपूर्ण पहलू है भूमंडलीकरण के नतीजतन बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रवेश। कपास की खेती के बहाने बीटी कॉटन जैसे महंगे बीजों और रसायनों की उपयोग ने किसान की पारंपरिक खेती को नष्ट कर दिया। अब किसान आत्मनिर्भर न रहकर राष्ट्रीय और अंतरर्राष्ट्रीय बाजार पर निर्भर हो गया है। यह उपन्यास इसका ही पर्दाफाश करता है कि किस प्रकार यह निजी कंपनियां विज्ञापनों के जरिए सुनहरे सपने दिखाती हैं लेकिन जब फसल पर कीटों का हमला हो या किसी भी प्रकार की प्राकृतिक आपदा से जूझना हो तो वह कंपनियां अपने हाथ खड़े कर लेती हैं।

इस प्रकरण के संबंध में उपन्यास में लिखा गया है "सन् 2002 में आया था कापूस का महाबीज बीटी कॉटन बीज, क्या तो विलायत से या अमेरिका से ! विलायती बीज है नाजुक बीज, खाद चाहिए? लो कीटनाशक भी चाहिए? पैसा नहीं है, सरकार कर्ज दे रही है है ना! लो अब फिर से बीज खरीदो, फिर से खाद, कीटनाशक, फिर से मजदूरी, फिर से कर्ज.......।" "किसानों की आत्महत्या की खबरें आने लगी थी।फिर तो महामारी की तरफ फैला गया वह रोग।"

आर्थिक तंगी केवल चूल्हा ही नहीं बुझाती है, बल्कि रिश्तों की गरमाहट को भी चूस डालती है। यह उपन्यास इसका जीवंत उदाहरण है। किस प्रकार गरीबी के कारण परिवारों में कलह बढती है। बेटियों का विवाह न कर पाना, बच्चों को उचित शिक्षा ना दे पाना, समाज में बढ़ता अपमान उन्हें भीतर तक घाव दे देता

है। आत्महत्या केवल एक व्यक्ति की मृत्यु नहीं बल्कि उस संघर्ष, उम्मीद, प्रतिष्ठा और उस पूरे परिवार को सामाजिक और मानसिक रूप से बिखर जाना है।अंतत यह उपन्यास ग्रामीण समाज के भीतर बदलती हुई पारिवारिक संरचनाओं और व्यवस्था के प्रति उपजे गहरे आक्रोश का दस्तावेजीकरण करता है इसमें कृषि के कॉर्पोरेटीकरण और हाशिए पर खड़े किसान की अस्मिता के संघर्ष को बेबाकी से प्रस्तुत करता है।

उपन्यास के कुछ हिस्से अत्यंत विवरणात्मक और सूचनापरक है जिससे उपन्यास की रचनात्मक सुंदरता थोडी़ प्रभावित होती है। लेकिन संवेदनात्मक स्तर पर यह पाठकों को बांधकर रखती है। भाषा में एक प्रकार की कड़वाहट और दर्द है जो व्यवस्था के प्रति आक्रोश पैदा करती है। संवाद छोटे तीखे और अत्यंत प्रभावशाली हैं जो पाठकगण पर विशेष प्रभाव डालते हैं।

शिल्प की बात करें तो यह उपन्यास पारंपरिक उपन्यासों से थोड़ा भिन्न प्रतीत होता है। यह शोधपरक होने के साथ-साथ वृतांत और रिपोर्ताज का संगम प्रतीत होता है। ऐसा लगता है जैसे कोई पत्रकार जो संभवतः उपन्यास के पात्र विजयेंद्र हैं... जमीनी हकीकत दर्ज कर रहा हो। उन्होंने डेटा आंकड़ों और वास्तविक घटनाओं को कल्पना के साथ जोड़कर बड़ी ही खूबसूरती से पेश किया है। शिल्प में प्रतीकात्मकता स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। इसका बडा उदाहरण स्वयं उपन्यास का शीर्षक है। यहां फाँस केवल गले के फंदे के रूप में नहीं बल्कि जमीन की फाँस अर्थात अपनी जमीन के मोह का फंदा, कर्ज की फाँस अर्थात कर्ज और ब्याज का वह चक्र जो कभी खत्म नहीं होता के रूप में भी चित्रित है। लेखक ने किसानों की बदहाली, गरीबी, अशिक्षा, खेतों की करारी, मिट्टी धूल भरे रास्ते और मुरझाए चेहरों का ऐसा वर्णन किया है कि पाठक के सामने एक सिनेमाई दृश्य उपस्थित हो जाता है।

वैचारिक दृष्टि की बात करें तो यह उपन्यास पूरी तरह किसान संकट और भूमंडलीकरण के दुष्प्रभावों को उजागर करता है।यह उपन्यास हिंदी साहित्य में एक विशेष स्थान रखता है जो भारतीय ग्रामीण किसानों के जीवन की त्रासदी को केवल सहानुभूति की दृष्टि से नहीं बल्कि राजनीतिक,सामाजिक और आर्थिक वैचारिकी भी प्रस्तुत करता है।लेखक ने अंतरराष्ट्रीय कंपनियों के बीजों बीटी कॉटन,खाद और कीटनाशकों के महंगे व्यापारिक तंत्रों को कटघरे में खड़ा करदिया है। यह उपन्यास वास्तव में एक वैचारिक विमर्श खड़ा करता है कि किस प्रकार वैश्वीकरण के दौर में खेती करना जीवन शैली न रहकर महंगा जुआ बन गया है।

नारीवादी विमर्श की दृष्टि से देखें तो इस उपन्यास में एक प्रसंग आता है 'आशा वानखेड़े' का। किस प्रकार स्त्रियां बुवाई से लेकर कटाई तक की जिम्मेदारी का एक बड़ा हिस्सा संभालने के बावजूद वह केवल अदृश्य किसान ही हैं। खेती पर उनका कोई मालिकाना हक नहीं है। क्योंकि वह तो हमेशा पीढ़ी दर पीढ़ी पुरुषों (पिता, पति, पुत्र) की ही अमानत रही हैं। उपन्यास में महिला शेतकार आशा वानखेड़े की मौत फसल बर्बादी और कर्ज के कारण हुई थी लेकिन उसे मुआवजा देने के बदले रिपोर्ट में यह लिखा गया- 'शराबी पति आए दिन के घर गुती के झगड़े से अजीज आकर उसने जहर पी लिया।'[8, 9]

संजीव ने इस उपन्यास के माध्यम से मीडिया और राजनीतिक तंत्रों की भूमिका पर भी गहरा आघात किया है। जब कोई किसान आत्महत्या करता है तो वह स्त्रियां के लिए सुधार का अवसर नहीं बल्कि 'राजनीतिक पर्यटन केंद्र' बन जाता है। नेता वहां फोटो खिंचवाने और दिखावे की मौखिक संवेदना व्यक्त करने आते हैं। मीडिया उसे ब्रेकिंग न्यूज़ की तरह पेश करता है। यह उस व्यवस्था पर चोट है जहां कर्ज के

बोझ तले दबे मानसिक पीडा से व्यथित किसानों के दुख को जीते जी कोई पूछने नहीं आता लेकिन मृत्यु के बाद उसके शवों पर गिद्धों की तरह पूरी व्यवस्था टूट पड़ती है।

प्रेमचंद के गोदान का 'होरी' और संजीव के फाँस का 'शिवपाल' (शिबू) एक ही लंबी त्रासदी के दो सिरे हैं। जहां गोदान में कर्ज का स्वरूप सामंती (साहूकारी) था, वहीं फाँस में यह कॉरपोरेट और बैकिंग हो गया। होरी अपनी मर्यादा बचाने के लिए तिल-तिल मरता है जबकि शिवपाल जो की आधुनिक किसान के रूप में चित्रित है व्यवस्था की क्रूरता के आगे टूटकर फंदे पर झूल जाता है। यह परिवर्तन दिखाता है कि समय बीतता गया लेकिन भारतीय किसानों की नियति नहीं बदली, बस शोषण के औजार तरक्की कर गए।

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि यह उपन्यास हमारे देश की कृषि नीति, हमारे सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक ढांचे पर एक प्रश्न चिन्ह खड़ी करती है। यह उस संरचनात्मक हिंसा का दस्तावेज है जिसमें हमारे देश का अन्नदाता अपनी जमीन, अपनी अस्मिता और अंततः अपना जीवन हार रहा है, यह उपन्यास मात्र 'खेती के अंत' की नहीं बल्कि 'मानवीय करुणा' के अंत की चेतावनी है।संवेदना का वस्तुकरण कर रहे आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थान जैसे मीडिया, न्यायपालिका, राजनीति अब पीड़ित के प्रति संवेदना रखने के बजाय उसका वस्तुकरण करते हैं, उन तमाम पीड़ित किसानों का शव अब नीतियों में सुधार का आधार नहीं, बल्कि चुनावी विमर्श और मुआवजा संस्कृति का एक सांख्यिकी आंकड़ा मात्र है। संजीव का फाँस यह सिद्ध करता है कि आधुनिक विकास की जिस चकाचौंध पर हमारी सभ्यता गर्व करती है, उसकी नींव में किसी बेनाम किसान के फंदे और उसकी 'अपात्र' और बेदखल कर दी गई स्त्री के मौन आंसुओं की फाँस दबी हुई है।

संदर्भ सूची

1. संजीव,फाँस वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पहला संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-19
2. संजीव,फाँस वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-19
3. संजीव,फाँस वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,पहला संस्करण 2015,पृष्ठ संख्या-19
4. संजीव,फाँस वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2015,पृष्ठ संख्या-16
5. संजीव,फाँस वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2015,पृष्ठ संख्या-17
6. संजीव,फाँस वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-116
7. संजीव,फाँस वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-159
8. फाँस उपेक्षित भारतीय किसान की मूक चीख, राजश्री सिंह, रिसर्च जर्नल